



श्री अमोलक उद्दिष्ट सुनि श्री महाशय कृत

हिन्दो भाषानुवाद सहित.

व्यवहार सूत्र १२

प्रासिद्ध कर्ता-दक्षिण हृदयनाद नियासी.

संख्या जेल गन्धाल्य।  
बीकानेर १८

श्री अमोलक उद्दिष्ट सुनि श्री महाशय कृत

अमूल्य.

प्रति

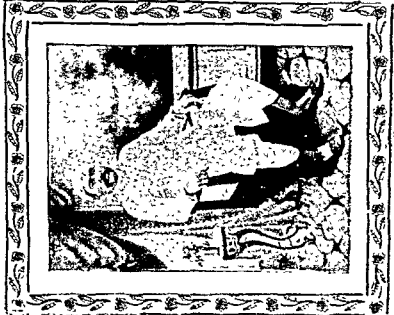
स्व. राजा बहादुर लाला मुखदगनहायजा. आदमी.  
श्री म. १९२२. मसिमि म. १९३५.  
मुद्रालय सुकरवार (दक्षिण),  
१९३५. १९३५. १९३५.  
कम सं. ५०५०.



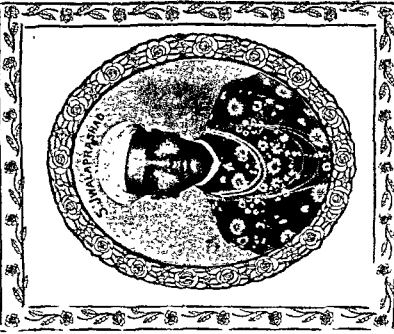
अमृत्यु शाल दानदाता.

जेन स्थम्प दानवीर

जेन प्रभावक धर्म धूरंधर



स. राजा बहादुर लाल मुखर्जी महाराज. जौहरी  
 म. म. १९५०  
 पृथ्वी म. १९७२.



लाल प्रमादनी जौहरी.  
 ज. म. १९५०

(मसिह) शिवाजी, सिद्धार्थ, सिद्धार्थ, सिद्धार्थ



## सूचना

शास्त्रोद्धार कार्य के प्रारंभ में जब मैं आया तब महाराज श्री से विनंती कि—यदि आप की आज्ञा होती तब शास्त्रों की १००—१०० प्रतें परे लिये अधिक छपावूं, महाराज श्रीने लालजी साहेव से पूछा तो लालजी साहेव ने पहिले साफ इन्कार कर दिया, तब महाराज श्रीने कहा कि ज्ञान वृद्धि के काम में किम लिये नाकइते हो? महाराज श्री का यह वचन लालजी साहेव उत्थाप सते नहीं, और मुझे अनुज्ञा दी तब मैंने तब शास्त्रों की १००-१०० प्रतें ज्यादा निम्नली, प्रथम एक बचीसी की निछरावल (मूल्य) रु० १०० रखे थे. परंतु पीछे से युरोप महा युद्ध के प्रसंग से रु० १५० रखे गये हैं.

ता. १५-११-१०२०.

सीकंदराबाद-दक्षिण.

माणिलाल शिवलाल शेठ,

शोबाला [ काठीयाबाड ] वाला.

मैनेजर-जैन शास्त्रोद्धार कार्यालय,

मुसदव महाय ज्वालामसाद



परम पूज्य श्री कहानजी ऋषिजी महाराज की सम्प्रदाय के शुद्धाचारी पूज्य श्री सुवा ऋषिजी महाराज के शिष्यवर्य श्री तपस्वीजी श्री केवल ऋषिजी महाराज आप श्रीलै मुझे साथ ले महा परिश्रम में हैद्राबाद जैसा बड़ा श्रेष्ठ साधुमार्गिय धर्म में प्रसिद्ध किया व परमोपदेश से राजाचन्द्रपुर दानवीरलाला सुखदेव सहायजी ज्याला प्रसादजी को धर्मप्रेमी बनाये, उनके प्रतापसे ही शास्त्रोद्धारादि महा कार्य हैद्राबाद में हुए, इस लिये इस कार्य के मुख्याधिकारी आपही हुए, जो जो भव्य जीवों इन शास्त्र द्वारा महात्म्य प्राप्त करेंगे वे आपही के कृतज्ञ होंगे.

विशु-अमोक्ष ऋषि

सुषुदेव सहाय ज्याला प्रसाद

परम पूज्य श्री कहानजी ऋषिजी महाराज की सम्प्रदाय के कविवरन्द्र महा पुरुष श्री तिलोक ऋषिजी महाराज के पाटवीय शिष्य वर्य, पूज्य-पाद गुरु वर्य श्री रत्नऋषिजी महाराज ! आप श्रीकी आज्ञासे ही शास्त्रोद्धार का कार्य स्वीकार किया और आप के परमादेशवादे से पूर्ण कर सका. इस लिये इस कार्य के परमोपकारी महात्मना आप ही हैं. आप का उपकार केवल मेरे पर ही नहीं परन्तु जो जो भव्यो इन शास्त्रोद्धारात्म्य प्राप्त करेंगे उन सबपर ही होगा.

दाम-अमोक्ष ऋषि

सुषुदेव सहाय ज्याला प्रसाद



कच्छ देश पावन कर्ता मोठी पक्ष के परम  
 पूरुष श्री कर्मसिंहजी महाराज के शिष्यवर्य  
 महात्मा कबिवर्य श्री नागचन्द्रजी महाराज !  
 इष्ट शास्त्रोद्धार कार्य में आर्षोपान्त आप श्री  
 प्राचिन शुद्ध शास्त्र, हुंडी, गुटकां और समय रपर  
 आवश्यकीय शुभ सम्मति द्वारा मदत्त देते रहनेसे ही  
 मैं इस कार्य को पूर्ण कर सका. इस लिये केवल  
 मैं ही नहीं परन्तु जो जो भव्य इन शास्त्रोद्धार  
 काम प्राप्त करोगे वे सब ही आप के अभारी  
 होंगे.

शिष्यवर्य, आर्य मुनि श्री चना ऋषिजी महाराज के  
 शिष्यवर्य वाल्म्वर्यचारी पण्डित मुनि श्री अमोलक  
 ऋषिजी महाराज! आपने बड़े साहस से शास्त्रोद्धार  
 जैसे महा परिश्रम वाले कार्य का जिस उत्साहसे  
 स्वीकार किया था उस ही उत्साह से तीन वर्ष  
 जितने स्वल्प समय में अहर्निश कार्य को अच्छा  
 बनाने के शुभाशय से सदैव एक भक्त भोजन  
 और दिन के सात बड़े लेखन में व्यतीत कर  
 पूर्ण किया. और ऐसा सरल बनादिया कि  
 कोई भी हिन्दी भाषण सहज में समझ सके, ऐसे  
 ज्ञानदान के महा उपकार तल दवे हुअे हम आप  
 के बड़े अभारी हैं.

संघकी तर्फ से.

अपनी छत्ती ऋद्धि का त्याग कर हैद्राबाद  
 हीरानशाबादमें दीक्षा धारक शालब्रह्मचारी पण्डित  
 मुनि श्री अमोलक ऋषिजीके शिष्यवर्य ज्ञानानंदी  
 श्री देव ऋषिजी. वैश्याटकी श्री राज ऋषिजी.  
 तपस्वी श्री उदय ऋषिजी और विद्याविलासी श्री  
 मोहन ऋषिजी. इन चारों मुनियरोंने गुरु आज्ञाका  
 बहुगानते स्वीकार कर आहार पानी आदिमुत्सोप-  
 चार का संयोग भिला. दो महर का व्याख्यान,  
 प्रसंगीसे वातालाप, कार्य दक्षता व समाधि भाव से  
 सहाय दिया जिस से ही यह महा कार्य इतनी  
 शीघ्रता से लेखक पूर्ण तके. इस लिये इस कार्य  
 वरक बक्त मुनियरों का भी बडा उपकार है.

पंजाब देश पावन करता पुत्र्य श्री सोहन-  
 लालजी, महात्मा श्री माधव मुनिजी, शतान्धारी  
 श्री रत्नचन्द्रजी, तपस्वीजी माणकचन्द्रजी, कबीवर  
 श्री अमी ऋषिजी, सुवक्ता श्री दौलत ऋषिजी. पं.  
 श्री नथमलजी. पं. श्री जोरावरपलजी. कापेवर श्री  
 नातचन्द्रजी. पर्वतीनी लतीजी श्री पार्वतीजी. गुणव-  
 सतीजी श्री रंभाजी. जोराजी सर्वज्ञ भंडार. भीना  
 सरवाके कनीरामजी वहादुरमलजी चौडीया,  
 स्त्रीवडी भंडार, कुचेरा भंडार, इत्यादिक की तरफ  
 से शास्त्रों व सम्मति द्वारा इस कार्य को बहुत  
 सहायता मिली है. इस लिये इस का भी बहुत  
 उपकार मानते हैं.

दक्षिण हैद्राबाद निवासी जौहरी वर्ग में श्रेष्ठ दृढधर्मी दानवीर राजा चहाडूर लालाजी गहिव श्री सुखदेव महायजी ज्वालाप्रसादजी।

आपने साधु भेजा के और ज्ञान दान जैसे महा-लाभके लोभी बन जैन साधुमार्गीय धर्म के परम माननीय व परम आदर्शीय बर्चिस शास्त्री को हिन्दी भाषानुवाद सहित छपाने को रु. २००००, का खर्चकर अमूल्य देना स्वीकार किया और मुग़ेप युद्धरंभ से सब वस्तु के भाव में वृद्धि होने से रु. ४०००० के खर्च में भी काय पूरा होनेका संभव नहीं होते भी आपने उस ही उरताह से कार्य को समाप्त कर सबको अमूल्य महालाभ दिया, यह आप की उदारता साधुमार्गीयों की गोख दर्शक व परमादरणीय है!

श्रीवाद्या ( काठियावाड ) निवासी धर्म प्रेमी कार्यदत्त कृतज्ञ मणिलाल शिवलाल शेट! इतने जैन दैनिग कॉलेज रतलाप में संस्कृत प्राकृत व अंग्रेजी का अभ्यास कर तीन वर्ष उपदेशक रह अच्छी काशल्यता प्राप्तकी. इन से शास्त्रोच्चार का कार्य अच्छा होगा ऐसी सूचना गुरुवर्य श्री रत्न ऋषिजी महाराज से मिलने से इन को बोलाये, इतने अन्य प्रेम में शुद्ध अच्छा और शत्रि काम होता नहीं देख शास्त्रोच्चार प्रेम कायम किया और प्रेम के कर्मचारियों को उरताही कार्य दत्त बना काम लिया. तेने ही भाषानुवाद की प्रेरकोपी बनाइ, यद्यपि यह भाइ पगार से रहे थे तथापि इतने इन कार्य की सेवा वेतन के प्रमाण से अधिक की. इन लिये इनको भी धन्यवाद देने हैं.

## व्यवहार सूत्र की प्रस्तावना.

प्रणम्य श्री महावीरं, तीर्थंशं सुखदं विभो । क्रियते बाल बोधाय, व्यवहार भाषावरा ॥ १ १ ॥

इष्टितार्थ की सिद्धी के लिये चारों तीर्थ के ईश्वर अनन्त चतुष्टय रूप विभूती के धारक सर्व सुख के अर्पक श्री महावीर स्वामी को नमस्कार करके चार छेद सूत्रों में का प्रथम छेद श्री व्यवहार सूत्र का हिन्दी भाषानुवाद करता हूँ. श्री जिनेश्वर प्रणिता जैन धर्म मुख्यता में द्वी विभाग में विभाजित किया गया है तद्यथा—१. निश्चय और २. व्यवहार. इस में निश्चय हेतु साधक है और व्यवहार निश्चय साधक है. अर्थात् व्यवहार साधने निश्चय साधता है और निश्चय साधने से इष्टितार्थ सिद्ध होता है. इस लिये कार्यार्थ साधक को प्रथम व्यवहार साधने की परमावश्यकता है. वे आत्मार्थ के साधने के व्यवहार पांच कहे हैं तद्यथा—१. आगम व्यवहार, २. श्रुत व्यवहार, ३. आज्ञा व्यवहार, ४. धारणा व्यवहार और ५. जीत व्यवहार. इन में से यह साह्य श्रुत व्यवहार रूप प्रधान कथक है. इस वक्त आगम व्यवहारी ? केवल ज्ञानी, २. मनःपर्यव ज्ञानी, ३. अर्थात् ज्ञानी, ४. चउदे पूर्वपाठी और ५. अभिन्न दश पूर्वपाठी का तो अभाव ही हो गया है. इस लिये आत्मार्थ ( मोक्षपथ ) साधक मुनिवरों का मुख्य कर्तव्य है कि— इस श्रुत व्यवहार में कथित प्रवृत्ति में प्रवृत्त करे.

४४ मैथुन की इच्छा का प्रायश्चित्त	१०४
४५ अन्य गन्ध से आये साधु साध्वी	१०४
सप्तमोद्देशः	
४६ संयोगी साधु साध्वी का परस्पर आचार	१०८
४७ परोक्ष में विसंयोगी किस प्रकार करे	११०
४८ साधु साध्वी को दीक्षा किस प्रकार दे	११२
४९ साधु साध्वी के आचार को भिन्नता	११३
५० रक्तादि की असज्जाइ कैसे टालना	११५
५१ साधु साध्वी को पद्री देने का काल	११५
५२ अधित्य साधु साध्वी मृत्यु पावे तो	११६
५३ साधु रहे वह मकान भेड़ दे या बैचदे तो	११६
५४ राजा का पलट्य होवे तो आज्ञा लेना	११९
अष्टमोद्देशः	
५५ चौदासे केलिये शैश्या पाट याचने की विधी	१२०
५६ स्थविर की उपाधी	१२२
५७ पहीशरे पाट स्यातक लेने की विधी	१२४
५८ मूले उपकरण ग्रहण करने की विधी	१२४

५९ अन्य के लिये उपकरण याचने की विधी	१२८
नवमोद्देशः	
६० शैश्यान्तर के प्राहुणादि का आहारादि	१३०
६१ साधु की प्रतिमाओं की विधी	१४०
दशमोद्देशः	
६२ जवमध्य प्रतिमा की विधी	१४८
६३ वज्रमध्य प्रतिमा की विधी	१५५
६४ पांच उपवहार का बिस्तार से कथन	१६०
६५ चौभंगीयों विविध प्रकार की	१६६
६६ बालक को दीक्षा देने की विधी	१७३
६७ कितने वर्ष की दीक्षाबालेको सूत्र पढाना	१७४
६८ दश प्रकार की वैशाच में महा निर्जरा	१७६
६९ प्रायश्चिना का खुलासा	१७९

इत्यनुक्रमणिका.

पाहेला बहशा

# चतुर्विंशतितम-व्यवहार सूत्र-प्रथमच्छेद.

## ॥ प्रथमोद्देशः ॥

लोभिवसू मासियं परिहारणं प. लिसेत्रिता अलोएजा अपलिओचियं आलोएमाणरस मासियं, पलिओचियं आलोएमाणरस दोमासियं ॥ १ ॥ लोभिवसू दोमासियं परि-

जो कोई साधु एक मासिक प्रायश्चित्त आवे एव होप स्थानक का लेवन कर उसकी आचार्यादि के पास आच्छेचना कर ते जो वह माया कपट रहित आलाचना करे तो उस को एकही महीने का प्रायश्चित्त आवे और जो वह माया-कपट युक्त आलोचन करे तो उस को (दगुना) दो महीने का प्रायश्चित्त आवे ॥१॥ जो कोई साधु दो मासिक प्र. श्र. न सेवन कर आलोचन करता हूवा

+छेद तपस्वी फलार्थिके लिये नदी तटपर फिरते मछी का क्षम किया जिस से उस के व्याधी हुई. वैद्य के पूछ ने से लजा के वरय मछी का नाम न रहे कःद का नाग बताया, देखने धृगपान करसेका कहा. जिससे अधिक व्याधी बडी तब फिर देखने पूछा जो खोया हो, वह मच्चा कहने सेही व्याधी जाशगी, तब उसमे लजा त्याग मच्छ भक्ष का कहा, तब बंधने कोदरु दोषनत्र उपकार में आयभीकिया ऐसेही निकपट अल्लिचन कराने सेही आचार्याजी प्रायश्चित्तादि द्वारा मुदकरसकतेह.

हारठाण पडिसेवित्ता आलोएजा, अपलिओच्चियं आलोएमाणस्स दोमासिय, पलि-  
 आविथं आलोएमाणस्स तिमासियं ॥ २ ॥ जेमिक्खू तिमासियं परिहारठाणं पडिस-  
 वित्ता आलोएजा, अपलिओच्चियं आलोएमाणस्स तिमासियं, पलिओच्चियं आलोएमा-  
 णस्स चाउमासियं ॥ ३ ॥ जेमिक्खू चाउमासियं परिहारठाणं पडिसेवित्ता आलो-  
 एजा, अपलिओच्चियं आलोएमाणस्स चाउमासियं, पलिओच्चियं आलोएमाणस्स  
 पंचमासियं ॥ ४ ॥ जे भिक्खू पंचमासियं परिहारठाणं पडिसेवित्ता आलोएजा,

जो कपट रहित आलोचना करो तो दो महिने का प्रायश्चित्त आवे और कपट सहित आलोचना करो तो तीन  
 महिने का प्रायश्चित्त आवे ॥ २ ॥ जो कोई साधु तीन मासिक प्रायश्चित्त का स्थानक सेवन कर जो  
 कपट रहित आलोचना करे तो तीन महिने के प्रायश्चित्त आवे और कपट सहित आलोचना कर तो चार  
 महिने का प्रायश्चित्त आवे ॥ ३ ॥ जो कोई साधु चउमासिक प्रायश्चित्त का स्थान सेवन कर कपट रहित  
 आलोचना करे तो चार महिने का प्रायश्चित्त आवे और कपट सहित आलोचना कर तो पांच महिने का  
 प्रायश्चित्त आवे ॥ ४ ॥ जो कोई साधु पंचमासिक प्रायश्चित्त आवे एमा दोप स्थान सेवन करके जो कपट  
 रहित आलोचना करे तो पांच महिने का प्रायश्चित्त आवे और जो कपट सहित आलोचना करे तो छ  
 महिने का प्रायश्चित्त आवे. इस के उपराल प्रायश्चित्त के स्थानक का सेवन कर कपट रहित या कपट

अपलिओचियं आलोएमाणस्स पंचभीसियं, पलिओचियं आलोएमाणस्स छमा-  
 सियं ॥ तं परं पलिओचिएवा, अपलिओचिएवा आलोएमाणस्स तंच  
 छमासां॥ जे भिक्खु बहुमोवि मसियं परिहारठाणं पाडसेविचा आलोएजा अपलि-  
 ओचियं आलोएमाणस्स मासियं, पलिओचियं आलोएयाणस्स दोमासियं ॥ ६ ॥  
 जे भिक्खु बहुमोवि दोमासियं परिहारठाणं पाडसेविचा आलोएजा, अपलिओचियं  
 आलोएमाणस्स दोमासियं, पलिओचियं आलोएमाणस्स तिमसियं ॥ ७ ॥ जे भिक्खु

सहित किसी भी प्रकार अलोचना करे तो छ ही महिने का ही प्रायश्चित आता है. क्यों कि छ महिने के  
 उपरान प्रायश्चित किसी भी तीर्थकर के बारे में नहीं होता है. छ महिने का ही उत्कृष्ट तप है और  
 उतनाही उत्कृष्ट प्रायश्चित होता है ॥ ६ ॥ [ यह तो एक वक्त दोप लगने आश्रय कहा, अब बहुत  
 वक्त दोप सेवन आश्रय कहने हैं ] जो कोई पाधु बहुत वक्त ( किभी कारन मिर तीन वक्त ) एक प्रा-  
 मिक का प्रायश्चित्त स्थान का सेवन करे जो कपट रहित अलोचना करे तो एक महिने का प्रायश्चित्त  
 आवे और जो कपट सहित अलोचना करे तो दो महिने का प्रायश्चित्त आवे ॥ ६ ॥ जो कोई पाधु  
 बहुत वक्त दो मासिक का प्रायश्चित्त स्थान का सेवन करे उस की कपट रहित अलोचना करे तो दो  
 महिने का प्रायश्चित्त आवे और जो कपट सहित अलोचना करे तो तीन महिने का प्रायश्चित्त आवे.



बहुसोत्रितिमा षं हारठाणं पडिसंविता आलोएजा, अपलिओचियं अलोएमा-  
 णरस तिमसियं, पलिओचियं आलोएमाणरस चउमसियं ॥ ८ ॥ जे भिक्खू बहु-  
 सोत्रि च्वाउमसियं परिहारठाणं पडिसंविता आलोएजा, अपलिओचियं आलोएमाणरस  
 च्वाउमसियं; पलिओचियं आलोएमाणरस पंचमसियं ॥ ९ ॥ जे भिक्खू बहुसोत्रि  
 पंचमसियं परिहारठाणं पडिसंविता आलोएजा, अपलिओचिय आलोएमाणरस पंच-  
 मसियं पलिओचियं आलोएमाणरस छम्ममसियं ॥ तेणं पर पलिओचियंवा अपलिओ-  
 चियंवा आलाएमाणरस तंचेव छम्ममासा ॥ १० ॥ जेभिक्खू मसियंवा दोमसियंवा

॥ ७ ॥ जो कोई साधु बहुत वक्त तीन मासिक मायः श्रित स्थान भवन कर कपट रहित आलाचना करे तो  
 तीन महिने का मायः श्रित आवे और कपट महिने अलंचना करे तो चार महिने का मायः श्रित आवे  
 ॥ ८ ॥ जो साधु बहुत वक्त चौमासिक मायः श्रित स्थान भवन कर कपट रहित आलाचना करे तो चार  
 महिने का मायः श्रित आवे और काट महिने अलंचना करे तो पांच महिने का मायः श्रित आवे ॥ ९ ॥  
 जो कोई साधु बहुत वक्त पांच मासिक मायः श्रित स्थान भवन कर कपट रहित आलाचना करे तो  
 पांच महिने का मायः श्रित आवे और जो कपट रहित अलंचना करे तो छ महिने का मायः श्रित आवे  
 इस उपाय किसी भी मायः श्रित का स्थानक भवन करे और कपट रहित तथा कपट रहित

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥

तिमासियंत्रा चाउनासियंत्रा पंचनासियंत्रा एष्टमि परिहाराणां अण्णयरं परिहारशा-  
पं पडितेतिता आलोएजा अपलिअं चिपं अलोएमाणरस मासियंत्रां दोमासियंत्रा  
तिमासियंत्रा चाउमासियंत्रा पंचमासियंत्रा, पलिओचियं आलोएमाणरस दोमासियंत्रा  
तिमासियंत्रा चाउमासियंत्रा पंचमानियंत्रा लमासियंत्रा, तेणंरं पलिओच्चियंत्रा  
अपलिभोचियंत्रा आलोएमाणरस तं चेव लम्माना ॥ १३ ॥ जोसदंखू

किमी मी प्रकार आलोचना करे पो मां उमे लपडिते काहो प्रायःश्चित्त आता है ॥१०॥ अब अंग उक्त सर्व  
प्रकार के प्रायःश्चित्त का स्पुष्टय ही करते हैं, जो कोई साधु एक मासिक का, दो मासिक का, त्रिमा-  
सिक का, षोमासिक का, पंचमासिक का, इन प्रायःश्चित्त के स्थान में से इरेक प्रायःश्चित्त का स्थान  
भंग्य कर आलोचना करता हुआ जो कपट गदित आलोचना करे तो एक मासिकवाले को एक महितेका,  
दो मासिकवाले को दो महितेका, त्रिमासिकवाले को तीन महितेका, चार मासिकवाले को चार महितेका,  
आ और पांच मासिकवाले को पांच महितेका प्रायःश्चित्त आता है, और जो कपट सहित आलोचना  
करे तो एक मासिकवाले को दो महितेका, दो मासिकवाले को तीन महितेका, त्रिमासिकवाले को चार  
महितेका, षोमासिकवाले को पांच महितेका और त्रिमासिक का प्रायःश्चित्त का स्थान सेवन  
भिया एने ल महितेका प्रायःश्चित्त आता है, इस प्रकार किमी मी तप के प्रायःश्चित्त के दोष स्यात  
सिनेवाला कपट सहित व कपट सहित आलोचना करे तो ल महितेका ही प्रायःश्चित्त आता है ॥ ११ ॥

बहुसोचि मालिनी, दोमासियंत्रा तिमामसियंत्रा पंचमामसियंत्रा  
 एशसि परिहारशृण्णानं अण्णयरं परिहारशृण्णानं परसेवित्ता आलोएजा,  
 अपलिओचियं आलोएमाणस्स मालिनी दोमासियंत्रा तिमामसियंत्रा चउमामसियंत्रा  
 पंचमामसियंत्रा, पलिओचियं आलोएमाणस्स दोमासियंत्रा तिमामसियंत्रा चउमामसियंत्रा  
 पंचमामसियंत्रा, छमामसियंत्रा, तेणंपरं पलिओचियंत्रा अपलिओचियंत्रा आलोएमाणस्स

यह एक वचन आश्रिय कहा अब बहुत वचन आश्रिय कहते हैं- जो साधुने बहुत वक्त एक मासिक दो  
 मासिक त्रिमासिक व पंच मासिक प्रायःश्चित्त का स्थानक भवन किया: उस की जो कपट  
 रहित आलोचना करे तो एक को दो, दो को तीन, चार को चार और पांच वाले को  
 पांच महिने का प्रायःश्चित्त आता है. और जो वो साधु उक्त प्रायःश्चित्त का स्थानक  
 भवन कर कपट सहित आलोचना करे तो एक मासिकवाले को दो महिने का, दो मासिकवाले  
 को तीन महिने का, तीन मासिकवाले को चार महिने का, चार मासिकवाले को पांच महिने का और  
 पंचमासिक वाले को छ महिने का प्रायःश्चित्त आता है. उस उपरान्त किसी भी प्रायःश्चित्त का स्थानक  
 का भवन करे और कपट सहित तथा कपट रहित किसी भी प्रकार आलोचना करे तो उसे छही महिने

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

तंचित्त्व छम्मासा ॥ १२ ॥ जे भिक्खू चाउमासियंवा सातिरेग चाउमासियंवा पंचमा-  
सियंवा सातिरेग पंचमासियंवा, एएसै परिह्वारठाणण अण्णयरं परिह्वारठाणं पडिसे-  
विचा आलोएज्जा अपलिओचियं आलोएमाणस्स चाउमासियंवा सातिरेग चाउमा-  
सियंवा पंचमासियंवा सातिरेग पंचमासियंवा, पलिओचियं आलोएमाणस्स पंचमासियंवा

का मायःश्चित आता है ॥ १२ ॥ यह तो पूर्ण महिने आश्रिय मायःश्चिन का कथा. अब महिने आदि से  
कुछ अधिक मायःश्चिन का स्थानक सेवन करे उस आश्रिय कहते है-जो साधु चौपासिक मायःश्चित का  
स्थानक सेवन करे अथवा चौपासिक से कुछ अधिक मायःश्चित का स्थानक सेवन करे, पंचपासिक  
मायःश्चित का स्थानक सेवन करे. तथा पंचपासिक से कुछ अधिक मायःश्चित का स्थानक सेवन करे. उक्त  
मायःश्चित के स्थान पे से किसी भी मायःश्चित का स्थानक को सेवन करे. जोरुपट रहित आलोचना करे तो  
चौपासिक वाले को चार महिनेका, चौपासिक से कुछ अधिक वाले को कुछ अधिक चार महिनेका पंचपासिक  
वाले को पांच महिनेका और पंचपासिक से कुछ अधिक वाले को पांच महिने से कुछ अधिक का मायःश्चिय  
आता है. और कपट सहित आलोचना करने वाले को चौपासिक वाले को पांच महिनेका, चौपासिक से कुछ अधिक  
वाले को पांच महिने से कुछ अधिक का, पंचपासिक वाले को छ महिने का और पंचपासिक से कुछ अधिक वाले  
को भी छ महिने का ही मायःश्चित आता है. वस के उपरत कितना भी मायःश्चित का स्थानक सेवन कर

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

महाशक-राजाशक-दुर छाळा मुखदेवसहायजी धालापवादजी

सातिरंग पंचमासियंत्रा छमासियंत्रा, तेणपरं पलिओचियंत्रा अपलिओचियंत्रा, तंचेव  
 छमासा ॥ १३ ॥ जे भियखू बहुसात्रि चाउमासियंत्रा सातिरंगं चाउमासियंत्रा,  
 पंचमासियंत्रा सातिरंगं पंचमासियंत्रा एणसिं परिहारठणणं अणणयरं  
 परिहारठणं पडिसेविता आलोएजा अपलिओचियंत्रं आलोएमाणस चाउ-  
 मासियंत्रा, सातिरंगं चाउमासियंत्रा, पंचमासियंत्रा सातिरंगं पंचमासियंत्रा, पलिओचियंत्रं  
 आलोएमाणसं पंचमासियंत्रा सातिरंगं पंचमासियंत्रा, छमासियंत्रा तेणपरं पलिओचियंत्रा

रूपट सहित व कपट पहिन आलोचना करणे मे छ माहिने काशी मायश्चिन याता ते इस उपरात् मायश्चिन  
 न्हा ॥ १३ ॥ यह एत वचन आश्रिय कदा, अन बहुत वचन आश्रिय कहते हैं जो साहु बहुत वक्त  
 बीमामिक बीमामिक से कुछ अधिक वदत इतक पंचपासिक से कुछ अधिक का  
 मायश्चिनका स्थानक लेवन करे जो कपट रहिा अलोचना कातो चापसिक मायः श्र्या वकेछे चार महिने  
 का, बीमामिकसे कुछ अधिक वाले को चार महिने मे कुछ अधिक पंचपासिक वाले का पंचमाहिनेका और  
 पंचपासिक से कुछ अधिक वाले को पांच महिने से कुछ अधिक का मायश्चिन आता है और जो कपट  
 पाहिने आलोचना करेगे बीमामिक वाले को पांच पाहिने से कुछ अधिक का चौनासिक से कुछ अधिक वाले को पांच  
 पाहिने से कुछ अधिक का, पांच पासिक वाले को छ महिने का और पांच मासिक से कुछ अधिक वाले

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥

अपलिओचियंवा आलोयमाणरंस तंचव छम्मासा ॥ १४ ॥ जेजिखू चाउमासि-  
यंवा सातिरेग चाउमासियंवा पंचमासियंवा पुतोभि परिहार-  
ठाणणं अण्णयरं परिहारठणं पडिसेवित्ता आलोएज्जा अपलिओचियं आलोएमाणरंस

को भी छ महिने का माःयश्चिन् आता है। उर के उररांग किंगि भी माःयश्चि का स्थानक सेवनकर कपट  
गदित तथा कपटसहित किंसि भी प्रकार आलोचना करे। किन्तु छ माहने सं अधिक तपका माःयश्चित्त नहीं है  
॥ १५ ॥ अब माःयश्चित्त उतार ते पुनः माःयश्चित्त लगारे तो उस को माःयश्चित्त देनेकी विधि बताते है।  
मो कोइ साधु चौपाविक अथवा कुछ अधिक चौमानिक पंचमासिक अथवा कुछ अधिक  
पंचमानिक माःयश्चित्त का स्थानक सेवन कर के आलोचना करता हुआ जो कपट रहित आलोचना करते  
जो उस ने सर्व संघ के ज्ञातेन पै आया हो इस प्रकार माःयश्चित्त का स्थानक सेवन किया हो अर्थात् प्रगट  
दोष लगाया हो तो सर्व संघ के तन्मुख माःयश्चित्त दे जिन से दूसरी का भी भयेत्सव होवे  
कि इस भी दोष लगायेग तो हमारे को भी इस प्रकार जबर माःयश्चित्त आवेगा, और जो गुरु आज्ञा  
देवे कि यह कल्यास्थित है इस लिये इस का माःयश्चित्त पूरा होवे वहां तक इन को वाचनादि की सहायता  
करे। तो सहायता कर, कितनेक अनुमदारी है परंतु दुःकलास्थित है अर्थात् जिन की सपाचारी शुद्ध  
नहीं है। उन के लिये भी गुरु आज्ञा दे तो वांचनादि की सहायता करे, और जो अणुपरिहारीक बाने

सूत्र अथ

\* मन्त्रालय-समाप्त आदि आदि मन्त्रालयों के द्वारा मन्त्रालय

ठवणिजं ठवेइचा करणिजं त्रियात्रडियं ठात्रे तेवि परिसेविचा सेविकसिणे तथेन  
आरुहियव्वेसीया-पुव्वं परिसेविचं पुव्वं आलोइयं; पुव्वं परिसेवितं पच्छा आलोइयं,  
पच्छा पडिसेवियं पुव्वं आलोइयं, पच्छा पडिसेवियं पच्छा आलोइयं ॥ अपालिआ-

आपे हो अर्थत् जिन का प्रायःश्चित्त समाप्त होने आया हो उन को वैयावृत्त करने स्थापन करे. और  
ओ किमीने गुत्ते (कोई भी त जाने इस प्रकार) दोष सेवन किया हा उस का दोष मंघ समुल प्रगट  
करे तो वतना ही प्रायःश्चित्त उस दोष प्रगट करता को आता है. वत्तीस पांग संग्रह की साक्षी से  
कश्चित् प्रायःश्चित्त तप में स्थापन किये बाद फिर प्रायःश्चित्त का स्थानक सेवन करलेवे तो जिस प्रकार  
का प्रायःश्चित्त का स्थानक सेवन किया हा वह प्रायःश्चित्त भी पहिले के प्रायःश्चित्त में वृद्धि करना ॥ अब  
आलोचना करने के चार भाग-१. बहुत से दोष सेवन किये हैं. जिस में से १. पहिले दोष सेवन किया  
हो जिस की पहिले ही आलोचना करे २. पहिला दोष सेवन किया जिस की पीछे से आलोचना करे,  
३. पीछे दोष सेवन किया जिस की प्रथम आलोचना करे, और ४. पीछे दोष सेवन  
किया जिस की पीछे आलोचना करे. और भी दोष आलोचना के चार भाग-१. कपट रहित  
दोष का सेवन किया और कपट रहित हा उस की आलोचना करे, २. कपट रहित दोष सेवन  
किया परंतु आलोचना करती वक्त कपट करे, ३. दोष सेवन करती वक्त तो कपट किया परंतु

पुत्र

अर्थ

विषय अपलोचिए, अपलोचिए पलोचिये, पल्लोचोचिए अपल्लोचोचिये, पल्लोचोचिए पल्लोचोचिए ॥ अलोएमाणसस सब्बमंथं सकयं साहणियं ॥ १५ ॥ जं भिक्खू बहू सोवि चाउमासियंवा पंचमासियंवा एवं जाव एयाए पट्टवणाए पट्टविए णिव्विसमाणा परिसेवंत्रि सेत्रि कसिणे तत्थेव आरूहियव्वेसिया ॥ १६ ॥ जं भिक्खू बहु गोवि चाउमासि-

आलोचना कष्ट रहित शरलता से करे. और ४ दोष भी कष्ट सहित सेवन किया और आलोचना भी कष्ट सहित कर ॥ कितनेक इन चारों भागों का इस प्रकार भी अर्थ करते हैं कि-१ आलोचना करते पहिले चित्रों की निष्कपट आलोचना करूंगा और निष्कपट ही आलोचना करे, २ आलोचना करते पहिले तो दो गुप्त रहने की चिंतवना करे परंतु आलोचना करनी वक्त शरल बन जाये, ३ आलोचना करते पहिले शरल होवे और कारती वक्त कपट करे और ४ प्रथम भी कपट भावशेष आलोचना कारती वक्त भी कपटाचरण करे. इन कर्मों को आचार्य विचक्षणता में जान जावे और वह जिस प्रायश्चित्त के योग्य जाना जावे वैसा ही सब प्रायश्चित्त एवम कर उसे देवे. परंतु सब के लिये एकवा प्रायश्चित्त ही है ॥१५॥ इसे ही बहुवचन से कहते हैं. जो साधु बहुत वक्त चतुर्मासिक यों यावत् पूर्वोक्त बहुत वक्त छमासिक प्रायश्चित्त के तप में स्थापन किया हुआ परिहारिक बना हुआ तप करता हुआ पुनः दूसरा कौद बहुत चौमासिकादि दोष स्थान सेवन कर उस को पुनः प्रायश्चित्त दे. पहिले के तप में बृद्धि करना. पुनः परिहार. तप में प्रवेशपनह

पल्लोचोचिए अपल्लोचोचिये

सुप्र  
अर्थ



यथासातिरेग चामसियवा पंचमासियवा सातिरेग पंचमासियवा एणसि परिहार  
 ठाणणं अण्णयरं परिहारठाणं पाडिसेविचा आलोएजा पलिओचियं आलोएमाणसस  
 ठवणिज्जं ठवइत्ता करणिज्जं वेयाशडियं ठवितेवि परिसेविचा भेविक्कसिणे तत्थेव  
 आकहमव्वेसिया पुव्वपरिसेविचं पुव्वंआलोइयं पुव्वंपरिसेविचं पच्छाआलोइयं  
 पच्छापरिसेविचं पुव्वं आलोइयं पच्छापरिसेविचं पच्छा आलोइयं ॥ अपलिओचिए

॥ १६ ॥ जो कोई माधु चोनासिक या कुछ अधिक चौपासिक पांच मासिक या कुछ अधिक पांच मासिक इन मायःश्चत के स्थानक में भे किनी भी मायःश्चत का स्थानक सेवन कर आलोचना करता जो कपट सहित आलोचना करे तो उसे परिहार नप में स्थापन करके कितनेक को वेयावच में यथायोग्य स्थापन करे करोचिन्त् वह परिहारिक तप करते हुए अन्य प्रायःश्चत का स्थानक सेवन करता वसे पुनःपरिहार तप में आरोपन करे इसका विशेष कहते हैं चार प्रकार से वह आलोचना करे अनेक प्रायःश्चत का स्थानक सेवन कर उसमें के कितनेक प्रायःश्चत के स्थानक कितनेक पहिले सेवन किये की पहिले आलोचना करे २ कितनेक पहिले सेवन किये उनकी फिर आलोचना करे ३ कितनेक पीछे सेवन किये उन की पहले आलोचना करे और ४ कितनेक पीछे सेवन किये उनकी पीछे आलोचना करे ॥ बार प्रकार आलोचना करे १ प्रथम विचार की शरलपने आलोचना कलंगा ॥ और फिर शरलपने ही आलोचना करे २

अपलीओचियं, क्षमलीओचिए पलिओचियं, पलिओचिए अपलिओचियं; पलिओचिए  
 पलिओचियं ॥ आलोएमाणस्त सर्वमेयं सकयं साहणियं जे एवं बहु सोवि ॥ एयाए  
 पट्टवणाए पट्टविए णिविसमाणे परिसेवेवि सेवि कसिणे तथेत्त आरुहियञ्जोसिया  
 ॥ १७ ॥ जे भिक्खू बहुसोवि चाउमासियंवा, सातिरेग चाउमासियंवा. पचमासियं-  
 वा, सातिरेग पचमासियंवा, एएसिं परिहारठाणाणं अप्णयरं परिहारठाणं पाडिसेवित्ता

प्रथम विचार की शरल्पने आलोचना करेगा और फिर कपटपने आलोचना करे ३  
 प्रथम विचार की कपट से आलोचना करेगा और फिर शरलता से आलोचना करे और  
 ४ प्रथम विचार की कपट सहित आलोचना करेगा और फिर कपट सहित ही आलोचना करे ॥ इस  
 प्रकार आलोचना करता हुआ सर्व प्रकार के क्रिये हुए दोषों को एकत्र करके सर्व का मायुःश्रित्तः साथ ही  
 देवे ऐसे ही बहुत वक्त दोष स्थान सेवन करने का भी बहुत मासिक मायुःश्रित्त में स्थापन किया हुआ  
 मायुःश्रित्त का तप पूर्ण कर निकलते थोड़ासा तप याकी रहते पुनः कोई दोष स्थान सेवन करलेवे तो  
 फिर उसे उस दोष को जो मायुःश्रित्त हवे उस की आरपना कर उसमें स्थापन करे ॥ १७ ॥ अथ  
 कुछ आधिक दोष लगाने जिस आश्रय कहते हैं, जो कोई साधु बहुत वक्त दोष स्थान सेवन करे बहुत

आलोएजा अपलिओचियं आलोएमाणरस ठविणिजं ठवइचा करणिजं वेयात्रिडियं  
 ठावितेवि, परिसेवित्ता सेवि कसिणे ॥ तत्थेअ आल्हियव्वेसिया, पुव्व परिसेवित्तं, पुव्वं  
 आलोइयं, पच्छा परिसेवित्तं पच्छा आलोइयं, पच्छा परिसेवित्तं पुव्वं आलोइयं  
 पच्छा पडिसेवियं पच्छा आलोइयं ॥ अपलिओचिए अपलिओचियं, अपलिओचिए  
 पलिओचियं, पलिओचिए अपलिओचियं, पलिओचिए पलिओचियं ॥ आलोएमाणरस

बौध्दिक-प्रायःश्चित्त अथवा चैमाभिक से कुछ अधिक प्रायःश्चित्त, बहुत पांच माभिक प्रायःश्चित्त बहुत  
 पंचमासिक से अधिक प्रायःश्चित्त इन परिहार स्थानक में से अन्य कोई परिहार स्थानक सेवन करके  
 आलोचना करता जो कष्ट रहित आलोचना करे तो उसे परिहार तप में स्थापन करे, कितनेक को  
 उन को वैयात्र कराने में स्थापन करे. अब कदाचित् परिहारिक तप करता हुआ कोई दीपस्थान सेवन  
 करे तो निम प्रायःश्चित्त के जो दीप लगाया वही प्रायःश्चित्त संपूर्ण देवे, उस में आरोपन करे. इस का  
 विशेष-बहुन दोषों में से-प्रथम सेवन किया प्रथम ही आलोचना करे, २ प्रथम सेवन किया पीछे आलोचना  
 करे, ३ पीछे सेवन किया प्रथम आलोचना करे और ४ पीछे सेवन किया पीछे आलोचना करे. और  
 भी—१ निष्कण्ठ आलोचना करेगा और निष्कण्ठ आलोचना करे, २ निष्कण्ठ आलोचना करेगा

संस्कृत-शब्द-कोश

सर्वमेव सकयं साहजियं जं एव बहुसोवि एयाइं पंचदृक्वणपु पटुविपु निज्विसमाणे  
 परितेवि वि सेवि कसिणे, तथेव आहृद्वेसिया ॥ १८ ॥ जं भिक्खु बहुसोवि  
 चाउमासियंवा सातिरेगं चाउमासियंवा, पचमासियंवा सातिरेगं पंचमासियंवा, एएसिं  
 परिहारठाणाणं अण्णयर परिहारठाणं पडिसेविच्चा आलोएज्जा पलिआंविचयं आलो-  
 एमाणस ठवणिज्जं ठवेइत्ता करणिज्जं वेगात्रडियं ठावितेति परितेविच्चा सेविकसिणे  
 और कपट सहित आलोचना करे, ३ कपट सहित आलोचना करूंगा और निष्कण्ट आलोचना करे, और  
 ४ कपट सहित आलोचना करूंगा और कपट सहित ही आलोचना करे. इस प्रकार आलोचना करना  
 हुवा को सब पाप एकर कर प्रायःश्चित्त एक ही साथ देवे ॥ १८ ॥ यह कथन बहुत वक्त दोपस्थान  
 भवन कर उन की आपेक्षा से कहना. प्रायःश्चित्त के तप करने को स्थापन किया घर परिरुद्धि  
 साधु योडासा प्रायःश्चित्त बाकी रहे उस वक्त दूसरा दोप लगाये, उस आश्रिय कहते हैं—जो साधु  
 बहुत वक्त चौमासिक कुछ अधिक चौमासिक पांच मासिक कुछ अधिक पांच मासिक, इन प्रायःश्चित्त के  
 स्थानक में से अन्य कोई भी प्रायःश्चित्त का स्थानक सेवन कर आलोचना करता हुआ जो उपर सखि  
 आलोचना कर तो उस को उस के योग्य प्रायःश्चित्त देवे. कितनेक को वैयात्र करने स्थानक देरे. अथ  
 उसे प्रायःश्चित्त में स्थापन किया है वह तप का बाहन करता हुआ अन्य किसी दोप का स्थान सेवन

\* प्रकाशक राजाजी महाराज, आला सुबद्रवसहायजी आलाप्रसादजी

तथैव आरुहियन्वेसिया पूर्वपरिसेवित्त्वं पुत्रं आलोइयं, जात्र पच्छापडिमेवित्त्वं पच्छा आलोइयं ॥ अपलिओचियं अपलिओचिए पलिओचियं पलिओचियं पलिओचिए अपलिओचिए ॥ आलोएमाणरस सब्वमयं सकयं साहणियं जे एवं बहुसोवि एयाइ पट्टवणाए पट्टविए णिविसमाणे परिसेवेवि, सेविकसिणे, तथैव आरुहियन्वेसिया ॥ १९ ॥ बहवे परिहरिया बहवे अपरिहरिया इच्छन्ना करे, तो पूर्णपने पीछा उस ही परिहारिक तप में उसे आरोपन करना. उस का विशेष वहुत दोषों लगाये उस में से जो दोष प्रथम लगायें, उस को प्रथम आलोचना करे, २ प्रथम दोष लगाये उस की पीछे आलोचना करे, ३ पीछे दोष लगाये उस की पीछे आलोचना करे, और ४ पीछे दोष लगाया उस की पीछे आलोचना करे ॥ तथा प्रथम शालता से आलोचना करने का विचार करे और शालता से आलोचना करे, २ शालता से आलोचना का विचार करे और कपट से आलोचना करे, ३ कपट से आलोचना का विचार करे और शालता से आलोचना करने का विचार किया और कपट से आलोचना करे ॥ इस प्रकार आलोचना करता हुआ. सब पाप एकत्र करके एक साथ ही सब प्रायश्चित्त देने ॥ ऐसे ही बहुत वक्त का भी कहना ॥ इस प्रकार प्रायश्चित्त में स्थापन किया हुआ प्रायश्चित्त को समाप्ती कर निकलता हुआ पुनः कोई दूसरा प्रायश्चित्त का स्थानक सवन करे. तो फिर उसे संपूर्ण पने उस ही प्रायश्चित्त का आरोपन करे ॥ १९ ॥ अत्र आह

एगयओ अभिन्निसिज्जंवा अभिन्निसिहियंवा चेत्तिचए, णोकप्पंति थेरे अणणु  
 पुच्छत्ता एगयओ अभिन्निसिज्जंवा अभिन्निसिहियंवा चेत्तिचए ॥ कप्पंतिणं थेरे  
 आपुच्छत्ता एगयओ अभिन्निसिज्जंवा अभिन्निसिहियंवा चेत्तिचए ॥ थेरेय से-  
 विर्रेज्जा एवणोकप्पंति एगयओ अभिन्निसिज्जंवा अभिन्निसिहियंवा चेइत्तए ॥ थेराणं  
 नो विर्रेज्जा एवणं नोकप्पंति एगयओ अभिन्निसिज्जंवा अभिन्निसिहियंवा चेत्तिचए ॥  
 जेण थेराहे अवदिण्णे एगयओ अभिन्निसिज्जंवा अभिन्निसिहियंवा चेइए तिसे सेसं-

विधि का अधिकार कहते हैं बहुत से परिहारिक अर्थात् प्रायश्चित्त सहित और बहुत से अपरिहारिक  
 प्रायश्चित्त सहित वे साधु इच्छा करें कि अपन परस्पर किसी प्रकार की भिन्नता रहित एक स्थान रहे  
 एक स्थान रहे; तो उन को उक्त कार्य स्थविर ÷ साधुको विना पूछे करना कल्पना नहीं है परंतु स्थविर को  
 पूछे और वे कहे कि यद्येच्छा विचरो तो एक स्थान रहना एक स्थान बंलता है और जो स्थविर कहे कि मत  
 विचरो तो एक स्थान भिन्नता रहित रहना चितवना कारावात विचार करना कल्पना नहीं है जो कोई स्थविर  
 की आज्ञा का उल्लंघन कर कर के साय एक स्थान रहे, बैठे चिन्तवन करे तो उस को उतने ही दिन का  
 ÷ जन्म तीन वर्ष मरण पांच वर्ष और उल्टा २० वर्ष के दिक्षित की स्थविर जिन जाते हैं.



एगारायाओवा दुरायाओवा परं वत्थए, जं तत्थ एगारायं दुरायवा परं वत्सइ संसंतराछेइवा  
परिहारेवा ॥ २१ ॥ परिहार कप्पणिए भिक्खू बहिया थेराणं वेघावडियाए

गच्छेज्जा थेरायसे णो सरंज्जावा कप्पणिसि णिव्विसमाणस्स, एगराइयाए पडिमाए, जण्णं २  
दिसिं अत्ते साहम्मिया विहरेति तण्णं २ दिसिं उवल्लित्तए, नो से कप्पणिसि तत्थविहार

वच्चियं तत्थए, कप्पणिसि तत्थ कारण वच्चियं वत्थए, तंसिचणं कारणंसि णिट्ठियंसि  
धारण करे फिर जित २ दिशा में अन्य अपने स्वयधिक साधु विचार हो उस २ दिशा को अंगीकार कर

के जावे, उन स्थितर की वैयावच करे. पान्तु वहां मनोज्ञ वत्त पात्र स्थान आहार आदि उपधी देख कर  
अधिक रहना कल्पता नहीं है. जोकोई रोगादि कारण हो जावे तो तहां रहे, वह करण पूरण होवे और

वे स्थविरादि कोई साधु कहें कि अहो आर्य ! यहां एक रात्रि दोरात्रि रहे तो एक रात्रि दोरात्रि वहां  
रहना उसे कल्पे, किन्तु एक रात्रि दोरात्रि से अधिक वहां रहना नहीं कल्पता है. जो वहां एक रात्रि दोरात्रि उपरांत

रहेतो जितने काल वहां रहे उतने ही दिन का उस को दिक्षाका छेदक तथा तपका प्रायश्चित्त अवि॥२॥  
परिहार कल्प स्थिति साधु को बाहिर स्थितर की वैयावच करने को भेजते पुत्रे. आचार्य ज्ञान ध्यान  
प्रश्नोत्तर में लगे उस को तप छोडकर जाने का कहना भूलगये. जो वस परिशक्ति को अपने परिहारिक

वपको करेवेहुवे ही. रास्तेमें एक रात्रिसे ज्यादा नारहूंगा ऐसा अनिग्रह ग्रहण करके जिस २ दिशामें मन्यन्तुरे



परोदेजा वासाहिअजो (एगरायंवा दुरायंवा एवं से कर्षति एगरायंवा दुरायंवा  
 वरथए, नो से कर्षति एगरायंवाओवा दुरायंवाओवा परंवरथए, जं तत्य  
 एगरायंवा दुरायंवा परंवरसइ, सेसं तराळंदेवा परिहरिवा ॥ २२ ॥ परिहार कर्षट्टिए  
 भिक्खू वहिया थराणं वेपावडियाए गच्छेजा, थरायसे सरंजावा गो सरंजावा कर्षति  
 णिंविंसमाणसए एगरातियाए पडिमाए, जणं २ दिसिं अण्णे सांहम्मिया थिदरति  
 तण्णं २ दिसिं उवल्लित्तए, णो से कर्षति तत्य विहार वत्तिथ वरथए, कर्षतिसे,

अपने स्वार्थिक विचरते हैं वहां जाना ब्यावच कहना उनके पास रहना कलता है; परंतु वहां मनोज्ञ आहार  
 स्थान वस्त्रादि देख उस में लुब्ध होकर विशेष रहना नहीं कल्पना है; जो रोगादि कारण हो जाय तो विशेष  
 रहे; फिर उन स्थिरियों जिनका पूछे वे स्थविरादि कहें कि अहो अर्थ! यहाँ ए. दो रात्रि रहा तो वहाँ एक दो  
 रात्रि रहना कल्पे, परंतु एक दो रात्रि से अधिक रहना नहीं कले, जो वहाँ एत दो रात्रि से अधिक रहे  
 तो नितनेदिन वहाँ रह उतनेदिनकी दीक्षाका छंद व तपका प्रायः इच्छाये ॥२॥ परिहारिक तप में जा. साध  
 रकता है अर्थात् परिहारिक तप करता है उस बाहिर रह स्थविर की ब्यावचकान भेजनेके वासे आचार्यका  
 विचार हुआ कि हमे प्रहारिक तप छोडा कर वहाँ भेज्युं परंतु भतती वक्त परिहारिक तप छोडने का  
 कहना भूलगये. तो उस परिहारिक तप धारी साधु को परिहारिक तप करते हुये ही वहाँ स्थविर की

४० १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११ १२ १३ १४ १५ १६ १७ १८ १९ २० २१ २२ २३ २४ २५ २६ २७ २८ २९ ३० ३१ ३२ ३३ ३४ ३५ ३६ ३७ ३८ ३९ ४० ४१ ४२ ४३ ४४ ४५ ४६ ४७ ४८ ४९ ५० ५१ ५२ ५३ ५४ ५५ ५६ ५७ ५८ ५९ ६० ६१ ६२ ६३ ६४ ६५ ६६ ६७ ६८ ६९ ७० ७१ ७२ ७३ ७४ ७५ ७६ ७७ ७८ ७९ ८० ८१ ८२ ८३ ८४ ८५ ८६ ८७ ८८ ८९ ९० ९१ ९२ ९३ ९४ ९५ ९६ ९७ ९८ ९९ १००

तत्थ कारण वत्तिपं वत्थए, तंसिचणं कारणंसि णिट्ठियंसि परोवएज्जा, वसाहिअज्जो ?  
 एगरायंवा दुराययंवा एवं से कप्पति एगरायंवा दुरायंवा वत्थए नो से  
 कप्पति पर वत्थए जे तत्थ एगरायंवा दुरायंवा परवसइ सेसं तराच्छेदेवां  
 परिहारेवा ॥ २३ ॥ जे भिक्खुव गणओ अवक्कम एकलविहार पडिमं  
 उवसंपाज्जत्ताणं विहरिज्जा, सेय नो संधरेज्जा सेय इच्छेज्जा दोच्चंपि तभेवगणं  
 उवसंपाज्जित्ताणं विहरित्तए, पुणो अलोएज्जा पुणो पडिकमेज्जा पुणो छेय परिहारसस

नैयात्रच में जाना कल्पता है. उक्त प्रमाद्री अभिग्रह धारन करे कि में विना कारन एकरात्रि उपान्त  
 रासे में नहीं रहुंगा. ऐसा अभिग्रह ग्रहणकर जिस २ दिशामें अन्य सार्थोपिक स्थितिरादि विचरते हैं. उस २  
 दिशा में उन के प्राप्त होने, कार्य हुए बाद वहां रहना नहीं कल्पता है. परंतु रोगादि कारण हो तो रहना  
 कल्पता है. उम कारन से निवृत्त हुए पाद स्थितिरादी कहे कि हे अर्थ ! एक दो रात्रि  
 और भी रहे तो रहना कल्पता है परंतु एक दो रात्रि से अधिक रहे उतनी ही रात्रि का  
 दीक्षा का छंद व तप का प्रायः निवृत्त आवे ॥२३॥ अब एक लविहारी साधु आश्रय कहे हैं. कोइ-साधु  
 (पूर्वदि-ज्ञानका धारक व ज्ञाति संध्यादि आठ गुन युक्त) ऐसा विचार करे कि में अकेलाही रहुंगा, इस  
 प्रकारकी प्रतिमा अभिग्रह धारनकर विचरनेलगे. वह साधुको अकेलेह परंतु शुद्धाचार न पालते इत्यादि  
 कारन से वह साधु पीछा दूसरीविक्र उस ही गणको अंगीकार करने की इच्छाकरे. उसको क्रिसप्रकार

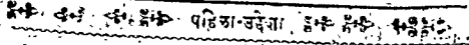
उवट्टवेजा ॥ २४ ॥ भिक्खुमणवच्छेए गणाओ अक्कमं एकलविहारपडिसं उय-  
संपजित्ताणं विहरंजा सेय नो संथेजा सेय इच्छेजा सेय तमेवगणं उवसंपजित्ताणं  
विहरित्तए, पुणो आलोएजा, पुणो पडिक्कमेजा पुणोच्छेय परिहारस्स उवट्टवेजा  
॥ २५ ॥ एवं आयरिए उवज्जाए गणाओ अक्कमं एकलविहार पडिसं उवसंप-  
जित्ताणं विहरंति जाव पुणो आलोएजा पुणो पडिक्कमेजा पुणो छेय परिहारस्स  
उवट्टवेजा ॥ २६ ॥ भिक्खुमणवच्छेए गणाओ अक्कमं पासत्थविहारं विहरंजा सेय इच्छेजा

ग्रहण करनी तो कि उस से दूसरी वक्त आलोचना करावे. दूसरी वक्त प्रतिक्रमण करावे. प्रथम की  
दीक्षा का छेदन कर दूसरी वक्त दीक्षा देवे पीछा समय में उपस्थापि ॥ २४ ॥ अब गणवच्छेदक काश्रिय  
कहेते हैं. जो साधु गणवच्छेदक ( उक्त गुण युक्त ) हो वह गणको छोडकर एकल विहार प्रतिमां अंगीकार  
कर विचरे, परंतु शुद्ध संयम न पडने आदि कारण से पीछा दूसरी वक्त गणको अंगीकार कर विचरने  
की इच्छा करे तो उनको भी पीछी आलोचना कर्गवे प्रतिक्रमण करावे पुनःउद् देवे परिहारशिदि तप करारवे  
संयम में उपस्थापि ॥ २५ ॥ इस ही प्रकार आचार्य उपस्थान गच्छ का अवक्रमण कर  
एकल विहार प्रतिमा अंगीकार करे विचरे तो उन को भी आलोचना प्रतिक्रमण छेद परिहार  
तप करा के उपस्थानि ॥ २६ ॥ अब पासत्या ( स्थिथाचारी ) का करते हैं—जो कोप

दोषपि तमेवगणं उवसंपञ्चिचाणं विहारचित्तए अत्थिया इत्थसेसे पुणो आलोएजा  
 पुणोपडिकस्मेजा पुणोच्छेय परिहारस्स उवट्टाएजा ॥ २७ ॥ एवं आहाच्छंशो ॥ २८ ॥  
 कुसीलो ॥ २९ ॥ उसणो ॥ ३० ॥ संसंचो ॥ ३१ ॥ भिक्खूयगणाओ अक्कम  
 परपासंड पडिमं उवसंपञ्चिचाणं विहरेजा सेय इच्छेजा दोच्चपि तमेवगणं उवस-

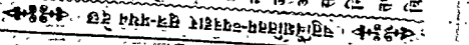
साधु गण-सम्प्रदाय की गीति को छोड़कर पातस्थपना अंगीकार करे. वह पीछा पाव का पलटा होने से  
 दूसरी वक्त पीछा उस ही गण को अंगीकार करना बूछे तो उस के पास पीछी चोप चारित्र की आलो-  
 चना प्रतिक्रमण करावे. पीछे दीसा का छेद करे इस प्रकार पीछा गच्छ में स्थापन करे ॥ २७ ॥ जिस  
 प्रकार पातरथाका कथा उस ही प्रकार अपच्छंदा का भी कहना ॥ २८ ॥ उस ही प्रकार कुसीलीया का  
 भी कहना ॥ २९ ॥ उस ही प्रकार ऊण्णा का भी कहना ॥ ३० ॥ उस ही प्रकार संस्या का भी  
 कहना ॥ ३१ ॥ अत्र पामत परिचय का कहते हैं—जो साधु सम्प्रदाय का त्याग कर पर (अन्य) धर्मिक  
 पालंघियोंकी सम्प्रदाय अंगीकारकर विचरे और फिर परिणाम पलटने(कारण निवृत्तने) से पीछी दूसरीवक्त  
 उसही सम्प्रदाय को अंगीकार कर विचरने की इच्छाकरे तो वह किसी प्रकार छेद प्रायश्चित्त के कि तप  
 प्रायश्चित्तके योग्य नहीं है. फक्त एक आलोचना करना योग्य है[कारण-कोई साधु राजादि का उपद्रव देख  
 कर अपना संघ न मिले वशंतक कालक्षेपन करने के वास्ते तापसादि का श्रिग धारन करे, परंतु साधु की

पञ्जिचाणं विहरित्त्वा णथिणं तस्स तप्पत्थियं केइच्छेदेवा परिहरिवा णणत्थ एगाए  
 ओलोयणाए ॥ ३२ ॥ भिक्खूय गणाओ अवक्कम उधारिजा सेय इच्छेजा दोब्बपि  
 त्तमेवगण उवसपज्जिचाणं विहरित्त्वा णथिणं तस्स तप्पत्थियं केइ छेदेवा परिहरिवा  
 णणत्थ एगाए सेहोवट्टाणाए ॥ ३३ ॥ भिक्खूय अणपरि अ कवठाणं पडिसवित्ता  
 इच्छेजा आलोहत्त्वा जत्थव अप्पणो आयरिय उवज्जाए पासिजा कप्पति से तस्सतिए  
 क्रिया हुई पले; फिर आचार्यादि का योग मिलने से उस प्रकार आलोचना कर भेष बदल पीछा उन के  
 साले होजावे, यह भगवती के पच्चीसवे शतक में नीलकंठ के कथनानुसार तथा ठाणाण की चौभंगी के  
 अनुसार, तथा इस ही व्यवहार सूत्र के दशवे उद्देश के अनुसार जानना ॥ ३२ ॥ अब व्रतभंग आश्रय  
 कहते हैं— जो साधु गण-सम्पदाय को छोड़कर व्रतों का भंग कर गृहस्थावास स्वीकार करे वह फिर  
 परिणामों की धारा पलटने से पीछा दूसरी वृत्त गण को अंगीकार कर विनये की इच्छा करे तो वह  
 न तो छेद के योग्य है न किसी परिहारिक तप के योग्य है परंतु पीछा उस को शिष्यव्रताना शिष्यपने  
 स्थापन करना अर्थात् पीछे दीक्षा देना योग्य है ॥ ३३ ॥ अब आलोचना किस के सन्मुख करना वह  
 कहते हैं जो कोई साधु अन्य किसी भी प्रकार का दोष का स्थानक सर्वन करके उस की आलोचना  
 करने की आशयता पा करे तो किसी स्थान अपने आचार्य उपध्याय हो; तब आये उन के पास



आलोइत्तएवा पडिक्कमित्तएवा त्रिओट्टित्तएवा, त्रिसोहित्तएवा अकरणाए अब्भट्टिसएवा  
 आहारिहं तथोकम्मं पायच्छित्तं गडिवजित्तएवा ॥ ३४ ॥ णो चैवणं अप्पणो  
 आयरिय उयज्जाए पासेज्जा जत्थेवा संभोइयं, साहम्मियं बहुस्सुयं वज्जागमं पासेज्जा  
 कप्पतित्ते तरसंतिएवा आलोइत्तएवा पडिक्कमित्तएवा त्रिओट्टित्तएवा त्रिसोहित्तएवा अकर-  
 णाए अब्भट्टित्तएवा आहारिहं तथोकम्मं पायच्छित्तं पडिवजित्तएवा ॥ ३५ ॥ णो  
 चैवणं संभाइयं साहम्मियं बहुस्सुयं वज्जागमं पासेज्जा कप्पति से तरसंतिए  
 संभोइयं साहम्मियं बहुस्सुयं वज्जागमं पासेज्जा कप्पति से तरसंतिए

आलोचना प्रतिक्रमण कर उस पाप से निवृत्ते प्रायश्चित्त ले विगड्ढ होना, उस रूपना है, पछि यह दोष  
 नलगायुंगा इस प्रकार सावधान होय, जा वे दोषानना प्रायश्चित्त देवे उस को अंगीकार कर ॥ ३४ ॥  
 जो सदाचित् अपने आचार्य लपाध्याय देखेन में नहीं अथि नहाँ अपने संभोगी [ एक ही बंडले पर  
 आहार भोगवने वाले ], साधु, विद्यागमी [ ठाणोंग दि, सूत्र कर हश्य प्रायश्चित्त त्रिषो क जान ]  
 साधु होने वहाँ जावे, उस को उन के पाप आश्रोवना कर प्रतिक्रमण कर दोष के कर्म ने  
 निवृत्त कर विगड्ढ विशुध्यं गदित होकर आगे येन दोष न लगायुंगा इस प्रकार सावधान होकर यथाचित्  
 तप कर्म रूप प्रायश्चित्त अंगीकार कर रहना कल्पनां द्वी ३५ ॥ कदाचित् संभोगी स्वयमी सुसूजे  
 विद्यागमी न देखेन में नु अथि तों मितस्थान अन्य संभोगी कुटूसरी सुस्मदाय नै साधु बहुमूत्रो विद्यागम



आलोइत्तएवा पडिकमित्तएवा जाव पायच्छित्तं पडिवज्जित्तएवा ॥ ३६ ॥ णो चेत्रणं  
 अण्णं संभोतियं साहम्मियं बहुसुयं वज्जागमं पसेज्जा, जत्थेव सारुवियं बहुसुयं  
 वज्जागमं पसेज्जा, कप्पतिसे तरसंतिए आलोइत्तएवा पडिकमित्तएवा विउट्टित्तएवा  
 विसोहित्तएवा अकरणाए अब्भट्टिएवा आहारिहं तवोकम्मं पायच्छित्तं पडिवज्जित्तएवा  
 ॥ ३७ ॥ णो चेत्रणं सारुवियं बहुसुयं वज्जागमं पसेज्जा, जत्थेव समणोवासगं  
 पच्छाकडं वज्जागमं बहुसुयं पसेज्जा, कप्पति से तरसंतिए आलोइत्तएवा पडिकं

देखने में आवे. तो उनके गाय अलोचना प्रतिकर्षण कर यावत् प्रायःश्चित्त अंगीकार कर रहना कल्पता है  
 ॥ ३६ ॥ कदाचित् अन्य मन्मदाय के संभोगिक स्वर्धर्मिक बहुसूत्री विद्यागमी साधु नहीं देखने में आवे तो  
 जहाँ स्वरूपी-साधुका रूकैयारक [सदोषी] बहु सूत्री विद्यागमीस पुगेवे उनके पास अलोचना प्रतिकर्षण  
 कर दोष से निवृत्त विशुद्ध हो अगे दोष न लगावूंगा इस प्रकार संवधान हो यथा उचित तप कर्म  
 प्रायःश्चित्त अंगीकार कर रहना कल्पता है ॥ ३७ ॥ कदाचित् स्वरूपी बहुसूत्री विद्यागमी देखने में नहीं  
 आवे तो जहाँ श्रमणोपासक (श्रावक) पश्चात् कृत्य अर्थतु प्रथम संयम पालकर पडवाइ होकर श्रावक  
 बना हो वह विद्यागमी-प्रायःश्चित्त विधी का ज्ञान बहुसूत्री हो इस के पास अलोचना प्रति

मिच्छन्वा जाव पायच्छितं पडिन्नजित्तएवा ॥ ३८ ॥ णो च्चवणं समणोवासगं  
 पच्छाकडं बहुसुयं वज्झागमं पसिज्जा जत्थेव समभानियाइं चेइयाइं पसिज्जा  
 कण्णति से तरणतिए आलेइत्तएवा पडिक्कमित्तएवा जाव आहरिहं तवो  
 कम्मं पायच्छितं पडिन्नजित्तएवा ॥ ३९ ॥ णो च्चवणं समभानियाइं  
 चेइयाइं पसिज्जा वहियागागरसत्ता जाव सञ्चिवेससत्ता पाइणाभिमुहेवा उदीणाभि-

क्रमण कर यावत् प्रायश्चित्त अंगीकार करे ॥ ३८ ॥ कदाचित् संयम से प्रहवाइ हो श्रावक का ऐसा पश्चान कृत्य श्रावक बहुसूत्री विद्यागमी देखने में न आवे तो जिस स्थान समभाव वाला चैतनिक ज्ञानी सम्यक् दृष्टि गृहस्थ अथवा देवता हो उसके पास आलोचना प्रतिक्रमण कर यावत् यथा वचित तप कर्म प्रायश्चित्त अंगीकार करना. ॥ ३९ ॥ वदात्रित्त पमाधिक चैत्य भी न देखने में आवे तो ग्राम के यावत् मंजीवेम के बाहिर जाकर पूर्वदिशा की, सम्मूल तथा उत्तरदिशा के

+ तप संयम पाल कर देवता हुआ होतो, वह पूर्व प्रवृत्त ज्ञान कर प्रायश्चित्त विधि से प्रायश्चित्त देसकता है. ऐसे ही संयम का भूट हो परंतु श्रया का भूटत नहो ऐसा सम्मोधिक सम्यक् दृष्टि ज्ञानी गृहस्थ भी प्रायश्चित्त देसकता है. दो प्रतीकों दोनो अर्थ लिखे हैं.



मुहेवा करयलपरिगाहियं सिरसावचं मथए अंजलिक्हु, कर्णतिसे एवं वइत्तए  
 एवं इयामे अवरंहा, एवं भिक्खुत्तोय अहं अवरट्ठो अरहंताण सिद्धाणं अंतिए  
 आलोएजा पडिक्कमेजा निदजा गरहिजा त्रिउट्टिजा, विसोहिजा अकरणाए  
 अब्भूट्टिजा, अहारिहं तवोकम्मं पायच्छिचं पडिवज्जिजासि ॥ ३९ ॥ चिबेमि ॥  
 विवहार सुयस्स पढमो उददेशो सम्मत्तं ॥ १ ॥ \* \* \*

सन्मुख लडा रहकर दोनो हाथ जोड ऐसा कहना कि इस प्रकार पेने अपराध किया है यो अपना किया दोष  
 तीन वक्त कहे अर्हन्न भिद्ध भगवंत के पास आलोचना प्रतिक्रमना करे अपनी धारना प्रगानिमायःश्चित्त अंगीकार करे  
 [ आलोचना की इननी दुष्प्राप्ति का कारण यह है कि कितनेक दोष ऐसे जवर होते हैं कि योग्य के पास  
 ही प्रकाशे जाते है और जान होवे सोही शुद्ध करसकता है, बिना आलोचना किये बिना प्रश्न लिये जो  
 आयुष्य पूर्ण करतो विराधिक होजाता है, इसलिये आलोचना जरूर करना चाहिये ] ॥ ३९ ॥ इति  
 व्यवहार सूत्र का प्रथम उददेशो समाप्तम् ॥ १ ॥ (:)

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥

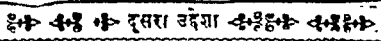
# ॥ द्वितीय उद्देश ॥

दोसाहम्मियाओ एगयओ विहरंति एगे तत्थ अण्जदं अकिच्चटाणं पडिसेवितां  
 आलाएजा, ठयणिजं च ठवइत्ता करणिजं वेद्यावडियं ॥ १ ॥ दोसाहम्मिया एगयओ  
 विहरंति दोविते अण्णयरं अकिच्चट्टाणं पडिभांवरं। आलाइजा एगं तत्थं कप्प मं ठा-  
 वईत्ता एगेणिव्विसेजा अहपच्छा सेवि णिव्विसेजा ॥ २ ॥ बहवे साहम्मिया एगयओ

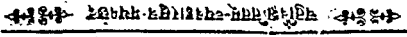
दा। माधु एकसी समाचारी के पालक माथ में रहे विचरत हुवे उन में से- किभी एकने अकृत्य-दोष स्थान की सेवना की, उस की सेवना कर उस की आलोचना अपने साथ के साधु ने पाप या अन्य आचार्य के पास करे, तब उन को उचित है कि उस की योग्यता देखे जैसे प्रायः श्रित्त दे अर्थत जो वन अर्गीतार्थ हो तो उस शुद्ध करने आम्बिल उपमासादि देखे परंतु परिहार तप नहीं देखें, क्यों कि अर्गीतार्थ परिहार तप के अयोग्य होता है। और जो वह गीतार्थ हो तो उस को यथा उचित परिहार तप देवे। समाचारी वाले साधु माथ विचर रहे हैं, दोनों जनेन अन्य किसी प्रकार का अकृत्य-दोषस्थान सेवन किया। तब क्याकरें? तो कि उन दोनों में से एक को गुरुने स्थापनकरें और एक छोटा शिष्यरूप रह, उन में जो गुरु रूप हैं वह कल्पस्थित है। इसलिये अनुपारहागन रहे और जो छोटा है उस को पापद्वारी तप में स्थापन करे, उस छोटे का परिहारिक तप पूरा हो जाये, तब जो गुरुपने रहे हैं वे परिहारिक तप अर्गीकार करे दोनों परस्पर वैयर्थ्य के सुखे। तप पूर्ण करावे ॥ २ ॥ अब बहुत साधु आश्रिय

विहरंति एंगे तत्थ अण्णयर अक्खिठाणं पडिसेविचा आलोएजा, ठवणिजं ठवतिचा करणिजं वेयावडियं ॥ ३ ॥ बहवे साहम्मिया एगयओ विहरंति सव्वेवि तत्थ अण्णयर अक्खिठाणं पडिसेविचा आलोएजा एगं तत्थ कप्पांगठवइत्ता अवसेसाणि निव्विसेजा अहपच्छा सेविणिव्वेसेजा ॥ ४ ॥ परिहार कप्पठिते भिववू गिलायमाणे अण्णयरं अक्खिठाणं पडिसेविचा आलोएजा, सेयसंथरेजा ठवणिजं ठवइत्ता करणिजं वेयावडियं, सेयणोसथरेजा अणुपरिहारिणं करणिजं वेयावडियं सेयअणुपरिहारिणं कीरमाणं वेयावडियं साइजेजा सेनिकसिणे तत्थेव आरुहियव्वेसिया ॥ ५ ॥ परिहार

कहने हैं-बहन से एक ही समाचारी के पालने वाले माधु माय ही विचरते हैं. उन में से किसी एक साधुने तथा किसी अकृत्य-दोष स्थान की सेवना की. वह जो परिहारिक तप के योग्य-गीतार्थ होवे तो उसे परिहारिक तप में स्थापन करे. अन्य साधुओं के पाम उस की वैयावच कराके सुख से वह तप पूर्ण करवे ॥ ३ ॥ अब भव आशिया कहते हैं. बहुत से साधुओं एरुभी समाचारि के पालने वाले माय ही विचरने वाले कटाचित किसी प्रगजन में भव ही अकृत्य-दोष स्थान की सेवना कर, उस की आलोचना करना इच्छ, तब उन तप में से एक को कल्प स्थित स्थापन करे. अपरसुष साधुओं तप अंगीकार कर फिर उन सब का तप पूरा हो जावे तब वे कल्प स्थित तप

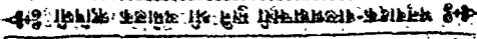


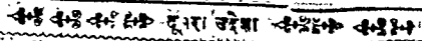
कल्पयिष्यं भिक्खू गिलायमाणं णोकप्पति तरसगणवच्छेइयस्स णिज्जुहत्तए अगिलाए तरस करणिजं वेयावडियं जाव ततो रोगयंकाओ विष्पमुको ततोपच्छा तरस अहालहुस्सए णामं ववहारे पट्टवेयन्वेसिया ॥ ६ ॥ अणवट्टप्प भिक्खू गिलायमाणे णो कप्पति तरसगणावच्छेइयस्स णिज्जुहत्तए, अगिलाए तरस अंगीकार करे ॥ ५ ॥ अब परिहारिक आश्रिय कहने है—परिहारिक कल्पस्यित साधु तप करता गिलयानताको प्राप्त हुआ, अन्य किसी अकृत्य-दोषस्थान का सेवन कर आलोचना करे तब आचार्य उसकी शक्ति का विचार कर जो वह परिहारिक तप करने की शक्ति वंत होंगे तो उसे परिहारिक तप में स्थापन करे फिर एक अनुपकारिक स्थापे अर्थात् खास एक साधु को उन की वेयावच में स्थापन करे और जो कदाचित् वह परिहारिक तप करत की शक्ति रहित होंगे तो परिहारिक तप वाले की वेयावच करावे और जो वह तप भी नहीं करे बलत्ती शक्ति वेयावच भी करावे तो वह मःयःश्चित्त का अधिकारी होंगे ॥३॥ परिहारिक कृतस्थित मःयःश्चित्त को तप करनेवाले साधु कदाचित्त रोगादि कर गिलयानता को प्राप्त हूवे तो उन का अपेयगच्छ के वाटि र निकालना गणव्यच्छेदक को कल्पता नही है, परंतु वह महांतक आरोग्यता को प्राप्त न हो यथां तक उस की वेयावच अन्य साधु के पास करावे और आरंभ्यता प्राप्त हूवे वाद, उस सदोप साधु को सेवानी उस को उस को फक्त व्यवहार रखने वास्ते स्नोक-थोड.सा नाम म.त्र मःयःश्चित्त देवे ऐसे ही अजवस्थित नववे मःयःश्चित्त के करनेवाल साधु रोगादि कारन से गिलयानता का पास



पच्छा तस्स अहालहुस्सए णामं ववहारे पठवेयव्वेसिया ॥ ११ ॥ उमायपत्तं  
 भिक्खु गिलायमाणं णो कप्पति तस्स गणवच्छेइयस्स निज्जुहित्ताए, अगिलाए  
 तस्स करणिज्जं वेयावडियं जाव तत्तोरोगायंकाओ विप्पमुक्को तत्तो पच्छा  
 तस्स अहालहुस्सए णामं ववहारे पठवेयव्वेसिया ॥ १२ ॥ उवसगपत्तं भिक्खु  
 गिलायमाणं नो कप्पति तस्स गणावच्छेइयस्स निज्जुहित्ताए, अगिलाए तस्स कर-  
 णिज्जं वेयावडियं जाव तत्तोरोगायंकाओ विप्पमुक्को ततोपच्छा तस्स अहालहुस्स-  
 एणामं ववहारे पट्टवेयव्वेसिया ॥ १३ ॥ साहिकरणं भिक्खु गिलायमाणं ना कप्पर-

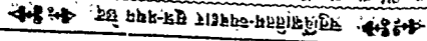
श्रित देवे ॥ ११ ॥ कोई मासु शीतादि के नद्वेने से उन्माद को प्राप्त हुआ उस को गच्छ के वाहिर  
 निकालना गणवच्छेदक को कल्पता नहीं है परंतु वह आरोग्यता को प्राप्त होने वहां तक उस  
 की वैयावच करावे यावत् वह आरोग्य हुवे बाद उस को नाम मात्र व्यवहार साधने प्रायः श्रुत दे ॥ १२ ॥  
 कोई साधु देवता मनुष्य तिर्यक् सम्वन्धी क्रिये हुवे उपमर्ग से परामर्ग पाया हुआ गिल्यानता  
 को प्राप्त होये तो उस को गच्छ के वाहिर निकाल देना गणवच्छेदक को  
 कल्पता नहीं है परंतु वह उपमर्ग रहित होवे वहां तक उस की वैयावच करावे, फिर उसे  
 व्यवहार साधने योडासा प्रायः श्रुत दे ॥ १३ ॥ क्रोधदि कपाय के तीव्र आवेशकर साधु गिल्या-





तितस गणवच्छेइयस निज्जुहित्तए अगिलाए तस करणिजं वेयात्रडियं जात्र  
 तत्तोरोगायंकाओ विप्यमुक्को तत्तो पच्छा तस अहालहुरसएणामं ववहारे  
 पट्टेयव्वंसिया ॥ १४ ॥ मयायच्छित्तं भिवखु गिलायमाणं नो कप्यति तस गणव-  
 च्छेइयस निज्जुहित्तए अगिलाए तस करणिजं वेयात्रडियं जात्र ततोरोगायंकाओ  
 विप्यमुक्का ततोपच्छा तस अहालहुरसएणामं ववहारे पट्टेयव्वंसिया ॥ १५ ॥  
 भत्तपणं पडियाइखित्तं भिवखु गिलायमाणं नो कप्यति तस गणवच्छेइयस  
 निज्जुहित्तए अगिलाए तस करणिजं वेयात्रडियं जात्र रोगायंकाओ विप्यमुक्को

नता को प्राप्त हुआ तो उस को गच्छसे निकाल देना गणवच्छेदक को कल्पता नहीं है परन्तु वह  
 आगिल्यानता को प्राप्त नहीवे वहाँ तक उस की वैयावच कराने फिर उस रोग से विमुक्त हुये योरासा  
 प्रायःश्चित्तदे ॥ १४ ॥ कोई साधु श्रुत प्रायःश्चित्त आने से घबराकर गिल्यानता को प्राप्त हुआ उस को  
 गच्छ के बाहिर निकालना गणवच्छेदक को कल्पता नहीं है परन्तु वह आगिल्यानता को प्राप्त नहीवे वहाँ  
 तक उस की वैयावच करे यावत् उस दुःख से वह मुक्त हो अगिल्यानी बने बाद नाम नात्र प्रायःश्चित्त  
 दे ॥ १५ ॥ कोई साधु यक्त पानी के प्रत्याख्यान ( संभारा ) किये बाद गिल्यानता को प्राप्त हुआ होतो  
 उस को गच्छरूप बाहिर निकालदेना गणवच्छेदक को कल्पता नहीं है परन्तु वह आगिल्यानता को प्राप्त नही



ततो पच्छा तस्म अहा लहुस्सएणामं ववहार पट्टवेयव्वोसिया ॥ १६ ॥ अइ जायं  
 भिक्खु गिलायमाणं नो कप्पति तस्म गणवच्छेइइधुस्स निज्जहित्तए अगिलाए तस्म  
 करणिज्जे वेयावडियं जाव ततो रोगायकाओ विष्पमुक्को ततो पच्छा तस्म अहालहुस्सए  
 णामं ववहार पट्टवेयव्वोसिया ॥ १७ ॥ अणवट्टुपं भिक्खु अगिहिभूयं नो कप्पति

वहाँ तक उस की वियायचकरावे यावत् वह रोगांतक कर मुक्त होवे तब फिर उसे कुछ प्रायश्चित्त दे ॥ १६ ॥  
 जोइ साधु किभी भी अर्थ प्राप्ती की अस्यन्त इच्छाकर लाभ को प्राप्त हुआ गिलमानता का प्राप्त हुआ  
 तो उस को गच्छ के बाहिर निकालना गणवच्छेदक को बलाना ही है पंतु वह अगिलपानी होवे वहाँ  
 तक उसकी वियायचकरे यावत् वहाँ रोगांतक कर विप्रमुक्त होवे तब फिर उसको थोडासा प्रायश्चित्त दे ॥ १७ ॥  
 अब परिहारिक को संयम में स्थापन विषय कहते हैं ॥ नर्वकी अंश्व स्थित तप को धारन करने वाले  
 साधु को गृहस्थलिंग धारन करायधिन संयम में स्थापन करना गणवच्छेदक को नहीं केलता है पान्त  
 वह तप्या अतवस्थित तपके वहक साधु को गृहस्थ भूय वनाकारानुस्यकालिग धारन काराकर संयम में  
 स्थापन करना कल्पता है ३ (६) कथो कि वह इस ही प्रकार के तप्यारोपहा भवन करने वाला है उस का  
 वह दोष प्रसिद्धी में आगया है जो विना गृहलिंगा भिये उसे संयम में स्थापन करे तो लोकमे अपमान  
 उत्पन्न होत कि इन में सब वापि तभी साधु देखते है तथा अन्य साधु को भी क्षोभ उत्पन्न होने कि

१७ ॥ अणवट्टुपं भिक्खु अगिहिभूयं नो कप्पति

तरस गणवच्छेदयस उवद्वुविसए ॥ १८ ॥ अणवद्वुय भिक्खु गिदिमम कल्पति  
 तरस गणवच्छेदयस उवद्वुविसए ॥ १९ ॥ पारंथिय भिक्खु अगिहमूय नो कल्पति  
 तरस गणावच्छेदयस उवद्वुविसए ॥ २० ॥ पारंथियं भिक्खुगिदिमम कल्पति तरस  
 गणावच्छेदयस उवद्वुविसए ॥ २१ ॥ अणवद्वुय भिक्खु पारंथियं भिक्खु गिदि-

इस प्रकार दोष लगानेसे ऐसी मान डानी होती है, उसको भी सोच मत होवे कि फिर भी दोष  
 लगायुगा तो क्यादाँ फ.जीती हंगी, इस्यादि कारण के लिये आचार्य को बतित है कि इस के दोष  
 पसिद्ध करने पर गृहस्थ का भेष धारनकर फिर आचार्य के पास जावे तोही फिर उर  
 नवी दीक्षा दे संयम में स्थापन करे ) ॥ १८-२९ ॥ इस ही प्रकार ब्रह्मा पारंथिकं मायश्चित्त  
 वाले साधु को भी गृहस्थकालिग धारन काये विना संयम में स्थापन करना नहीं बरता है. पंतु  
 पारंथिक मायश्चित्त वाले साधु को गृहस्थ्य भूग बनाकर संयम में स्थापन करना बरता है. इस का भी  
 सब हेतु पूर्वोक्त सूत्र जैसा जानना ॥ २०-२१ ॥ अब अगे पारंथिक कर परमार्थ निश्चयार्थ अणवाद  
 तारित संश्रद्धानयकर कहते है ॥ नवके अनेस्थित मायश्चित्त वाले साधुको तथा दण्डनपारंथिकमायश्चित्त वाले  
 साधु को कदाचित् गृहस्थ भूग करके और कदाचिन गृहस्थ भूग किये विना अर्थात् गृहस्थकालेच परानये  
 विना अणवेषेच पहनाकर संयममें स्थापन करेना गणवच्छेदक का कल्पना है. यद्यपि कोह अचार्यादि नरा



भयंवा अगिहिभयंवा कप्पति तरस गणवच्छेइयस्स उवहुविचंपु, जहा तस्स गणस्स  
 पात्थियं सिया ॥ २२ ॥ दो साहसिमया एगयओ विहरति एगे तरथ अपणपरं  
 अकिच्चट्टणं परिसेविता आलोएजा-अहणं भंते ! अमुएणं साहुणासद्धिं इमंभियं  
 कारणंतिं पडिसेवी, से तत्थ पुब्बिच्छयव्वे किं पडिसेवि, अपडिसेवि? सेए वएजा-पडि-

प्रायश्चित्त जैसा दोष सेवन किया परन्तु उन को गृहस्थ भूत बनाकर दीक्षा देने से उन के शिष्य साधु  
 को कि जो हमारे आचार्य को गृहस्थ भूत बनावोगे तो यहक्लेश उत्पन्न होगा. इत्यादि बहुत कारन है.  
 अथवा आचार्या दिके रहस्य कर्म मगट होने से साधुओंकी अपतीत होवे, धर्म की हीलना होवे, संवर्षीये  
 फूट होवे, इत्यादि दोष वृद्धिका ज्ञान कुल को संघ को जिस प्रकार मतीत उत्पन्न होवे  
 उन ही प्रकार गृहस्थ भूतकर तथा अगृहस्त भूत करे उनको पुनः संयम पे स्थापन करे ॥ २२ ॥  
 दो सरीखी समाचारी वाले साधु साथ विचरते हैं, इस में से एक साधु दूसरे साधु के शिर अभ्याख्यान  
 कलंक बढाने के वास्ते अन्य मैथुनादि-दोष स्थान सेवन कर के आचार्यादी के पास आलोचना करे, कि  
 अहो पूज्य! प्रमुक्त साधुके साथ मैंने इस कारनसे मैथुनादि सेवन कर चारित्रकी विराधनाकी है. तब वे आचार्य दूसरे  
 साधु का न्यायके लिये बहुत दिलासा देकर हितमिमत वचनसे समजाकर उसके आलोचना पर परिणामकी बुद्धि

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥

सेत्रि परिहारपत्ते, सेयत्रएजा णो पडिसेवि णो परिहारपत्ते; जंसे प्यमाणं वदति सेय-  
 प्यमाणे ओधेतंत्वोसिया; से किमहु भंते। संबपइजा ववहारा ॥ २३ ॥  
 भिक्खुपगणाओ अत्रकमं उहाणपहाए गच्छेजा, सेय आहच्च अणोधाइते  
 सेय इच्छेजा इच्छेजा दोच्चंपि तमेवगणं उवसंपजित्ताणं विहरित्तए,

शेवे इस प्रकार पूछे कि अहो मुनि ! अप्रकृ मुनि कहने हैं वह स्थानक तुमने सेवन किया किंवा नहीं  
 किया ? तब वह साधु स्वयंपेव कहे कि अहो प्रगवन् ! मैंने इग-स्थानक की सेवना की है, तब तो उस  
 को मायाश्रित्त देवे, और वह न कहे तो उस का निश्चय करने पुनः उग कलंक दाता साधु को पूछे कि  
 यह कहाँ सेवन किया ? कव किया ? यों २-३-४ वक्त पूछने से वह साधु निर्दोष मालुप पड़े ता उस  
 प्रता कलंक-आल चहानिवाले सत्धु को मैथुन सेवन करने का और हुडा आल चडाने का नवता तथा  
 दक्षता प्रायःश्रित्त देवे. ( क्यो कि आचार्य का कर्तव्य है कि प्रतिगोत्री को अपतितेवी नहीं करे और  
 अमतिगोत्री को प्रतिसेवी नहीं करे. जो कदापि करे तो उतना ही प्रायःश्रित्त के अधिसारी वे प्र.पःश्रित्त  
 दाता होंवे, अच्छता आल चडाने का और दूसरा महात्रा भंग का दो-उव को लगे) ॥ २३ ॥ अंब तो  
 निपयोगपत्त हो गच्छ का त्याग कर जावे और परिणाम की थारा पच्छे से पीछा आवे उप आश्रिय  
 कइते हैं. जो साधु मोह कर्मोदय भोगवली कर्मोदय गच्छ का त्याग कर-छे-इकर जावे उस साधु को

तत्तथुणं धंराणं इन्द्रं यं रुद्रे त्रैवाद् समुज्ज्वा इमणं अज्जा ! जाणद्द किं परिसेवी अपरिसेवी  
 संयपुच्छयन्वं किं परिसेवि अपरिसेवि ? सेयवदंजा परिसेवि परिहारपत्ते, संयधंपुजा णो  
 यडिसवि णां परिहारपत्ते, असे स्पमाणं वदति सेय एवमाणं उधनन्वंसियं, से किमाद्द  
 भंत ! सच्चपट्टण्णा वयहारा ॥ २४ ॥ एगयत्रिलयस्स भिक्खु कप्पति इत्तारयं

शस्त्रों में गमन के कष्ट से तथा अभ्रं कर्मोन्मय मोहों के उग्रशय से यह असंपन्न स्थान का संवन बिना किया हो यच्छा  
 किए कर आदि किन्हीं दूसरी वस्तु उम ही गच्छ को अंगीकार कर बिचरने की इच्छा करें, तब गच्छमें संशय उत्पन्न होवे  
 कितनेक करे कि यह असंपन्न स्थान सेवन कर आया है और कितनेक करे कि यह विना सेवन किये  
 जाया है, यों विवाद उत्पन्न होवे, तब आचार्य उम विवाद का क्षयान के वास्तु गच्छ के माधुश्री का  
 बर्षी साकर यह आया हो वहां से सेल्लवर वंगचे, जो यह निर्दोष ठहरे-अर्थात् उमने असंपन्न स्थानकता सेनम  
 नहीं किया होतो-उमको प्रायश्चित्त नहीं देवे और जो संवन किया होतो उम के मुख से उम इन्द्र को  
 कहलकरा प्रायश्चित्त देवे, क्योंकि परिणाम से भंग हुआ परंतु काया कर भंग न हुआ, तथा पीछा  
 स्थानक प्राणया अलोचना समुत्त हुआ यह भगवती की मात्सी से आराधिक गिना जाना है इमन्त्रियं  
 यह प्रायाश्चित्त का अधिकारी नहीं है, शिष्य युक्तता है अहो भगवान् ? किन्तिकेय यह प्रायश्चित्त का  
 अधिकारी नहीं है ? गुरु करे, अहो शिष्य ! धीर्यकर भगवानेने व्यवहार प्रायश्चित्त करा है यह



दिसिवा अणुदिसिवा आयरिय उवञ्जायाणं उदिसित्तएवा धारित्तएवा, जहा वा तस्स  
गणस्स पत्तियं सिया ॥ २५ ॥ बहुवे परिहारिया अपरिहारिया इच्छेज्जा एगओ

गन्ध प्रतिष्ठाकर प्रतिवेधी को अपतिसिनी नहीं करे और अन्तर्वेधी को प्रतिवेधी नहीं करे ॥ २४ ॥ अब एक पक्षिक साधु का कहते हैं ॥ एक पक्षिक साधु दो प्रकार के होते हैं ? जो एक अच्छ वृत्ति होते वह प्रज्यर्षा एक पक्षी और जो एक गुरु के पास सूत्र पढा हो वह सूत्र एक पक्षी जो एक पक्षिक साधु को थोड़े काल पश्चित आचार्य उपाध्याय की पदवीदेना दूसरे आचार्य उपाध्यायका स्थापन करना कल्पना है, दूसरे आचार्य उपाध्याय का स्थापन क्यों करना सो कहते हैं, कदाचित वृद्ध आचार्य उपाध्याय का अर्चित्य विषोग हो जावे तो भी हम स्तनाप बने रहेंगे, तथा गच्छ की चिन्ता न रहगी, आचार्य के मृत्युपद पदवी किम को देना यह झगडा भी उत्पन्न नहीं होवेगा इसलिये प्रथम थोडे काल के लिये आचार्य स्थापन करे और फिर उन से अधिक कोई जावजीब पदवी के निर्वाह करने योग्य उत्तम पुरुष मिलतो उन को स्थापन करे, इनलिये उन को इनरिये ( थोडे काल के ) आचार्य उपाध्याय कह जाते हैं, और जो अष्टांगपदादि गुण युक्त होते उन को जावजीब के लिये स्थापन करे वे सब काहिक आचार्य कहे जाते हैं ॥ २६ ॥ अब प्रायः श्रमिय का अधिकार कहते हैं ॥ बहुत परिहारिक (आयःश्रम बलि) साधु और अपरिहारिक साधु इच्छाकरे कि अपनको एकपंरुत्तर या एक पापमें भोजन

दूसरा बंधन

बल्यए, ते अणमण संभुजति अणमणसं जो भुंजति, एग मासंवा दुमासंवा  
 तिमासंवा चाउमासंवा पंचमासंवा छमासंवा; मासंते तत्तोपच्छा सव्वेवि एगतो संभु-  
 जति ॥ २६ ॥ परिहार कप्पट्टियस भिक्खूसं जो कप्पति असणंवा पाणंवा खाइ-  
 मंवा साइमंवा दाओवा अणुप्पदाओवा, थेरायणं वदेजा इमणं अज्जो ! तुमं एतोसिं

देहिवा अणुप्पदेहिवा एवं से कप्पति दाओवा अणुप्पदाओवा, कप्पति से लेवं अणुजा  
 करना, तत्र परिहारिक साधु हैं उनको जो प्रायःश्चित्करूप है, एरुमहिनेका दोपहिनेका तीनपहिनेका चार  
 पांच महिने का और छे महिने का, यह जितना तप हो उतना पूरा हुवा पहिले उन के सामिल  
 । नहीं कल्पता है, क्यों कि वे तपस्वी हैं और उन का तप पूरा हुवे बाद एक महिने ऊपर पांच  
 छमहिने ऊपर एकमदिना और भेन्ना आहार नहीं करसक्ते है, क्यों कि उनके तपस्याका पारना  
 उनको सातकारी आशादेना योग्य है. परंतु सप्तविभाग त् करसके इसलिये तप उपरांत पांच  
 शप सामिल आहार नहीं कर सके ॥ २६ ॥ जो परिहारस्थिति कल्प साधु हैं उन को  
 खादिप स्वादिप चारों प्रकार का आहार देना भी कश्ये नहीं और दूमेरे के पास दिलाना भी  
 । परंतु जो कदाचिज स्थविर आज्ञा देवे कि अन्नो आर्य! इनको तुम चारही प्रकारका आहारदेवो  
 यवा दूसरे पात दिलावो तो उन को स्वयं आहार देवे अथवा दूसरे पास दिलावे. इस ही प्रकार उन के

पवित्र ए अणुजाणह भंते ! लेवाए एवं से कप्यति लेवं समासेवित्तएः ॥ २७ ॥

परिहार कप्यति भिक्खूसएणं पडिगाहेणं बहिया अप्पणो वेयावडियाए गच्छेज्जा  
थेरायंसंनएज्जा-पडिगाहेहि अज्जो ! अहपि भोक्खामिवा पाहामिवा, एवं कप्यति पडिगा-  
हिचए, तत्थ णो कप्यति अपरिहारिएणं परिहारियस्स पडिगहं असणंवा पाणवा

पास से लेने की इच्छा हो तो भी स्थविरको पूछे कि अहो भगवन् ! उनके पास आहार आदि ग्रहण कर्हो जो स्थविर आज्ञा दे तो उन के पास से ग्रहण करे [ लेप शब्द का अर्थ घृतादि विगय भी ग्रहण करने का जानना ] ॥ २७ ॥ अब वैयावच का कहते हैं. कोई एक परिहारिक प्रायःश्चित्त तप का करने-वाला साधु स्थविर साधु की वैयावच करता हो-परंतु वह परिहारिक होने से अपने पात्रों में अलग आहार पानी भोग्यता हो और स्थविर के पात्रों स्थविर को आहार पानी लाकर देता हो (क्यों कि विगयादि का संघटन न हो इस लिये.) तब वह परिहारिक अपने पात्र को ग्रहण कर अपने कार्य के वास्ते बहिर जाता हो तब वे स्थविर उस साधु को जाता देखकर विचार कि इस का काम कर फिर मेरे काम के लिय जायगा तो बहुत दूर हो जायेगा तथा इस को दुर्गुनी महन्त पडेगा, इत्यादि विचार कर उस से कहे कि अहो आर्य ! इन ही तरे पात्रों मेरे वास्ते भी आहार आदिक लेता आना. वह आहार आदिक में भी भागव लेवूंगा, पानी आदिक पियूंगा. इतनी आज्ञा जो स्थविर देवे तो फिर उस परिह

खाइमंवा साइमंवा भोत्तएवा पीत्तएवा, कप्पति से सयंसिवा पडिगहगंमिवा सयंसिवा  
 पलासगंसिवा सयंसिवा कमंडलगंसिवा सयंसिवा क्खुभगंसिवा सयंसिवा पाणिय-  
 सिवा उद्धट्ट, २ भोत्तएवा पीत्तएवा, एस कप्पो अपरिहारिघस्स परिहारियओ ॥ २८ ॥  
 परिहार कप्पट्टिए, भिक्खूयंराणं पडिगहएणं चहियाथेराणं त्रेयावडियाए गच्छंजा,  
 थेराणं चदंजा पडिगाह अजा! तुमंपि पब्बा भोक्खामिवा-पीहामिवा, एवं से कप्पति  
 पडिगाहिसं, तस्य णो कप्पति परिहारिएणं अपरिहारिरस पडिगाहसि असणवा

रिक्त साधु को कल्पता है कि स्थविर भी ब्राह्म प्रमाण आहार पानी लाकर उन को देवे, परंतु इन अ-  
 परिहारिक साधुओं को परिहारिक साधु के पात्र में आहार पानों खादिप स्वादिम भोगवना पान करना  
 नहीं कल्पे, उन को तो अपने ही पात्रों में आहार करना, अपने ही पात्र ( पात्रोये ) में  
 मात्रा करना, अपने ही कपंडल में पानी पान करना, धन्य आदि अपने स्वयंके हाथके खाये में हा ग्रहण कर  
 खाना, इत्यादि मत्र अपने हाथ ऊपर ग्रहण कर भोगवना कल्पता है, परंतु आचार्य की श्रावणी आप  
 नहीं करें, क्यों कि आचार्य की इच्छा हो वैसा वे करें, " गुरु कहे सो करें परंतु गुरु करें सो नहीं करें ।"  
 यह परिहारिक साधु की और अपरिहारिक साधु की स्याचारी अन्तर जानना ॥ २८ ॥ यह आपके  
 लिपि जाने का कथा, अब आचार्य के लिपि जाने का करते हैं—परिहारिक कल्पस्थितिमें साधु स्वविर के

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

४ भोत्तएवा पीत्तएवा, कल्पति से समयसिवा पडिगाहकंसिवा समयसिवा पलासगंसिवा  
 समयसिवा कमंडलुगंसिवा समयसिवा कस्तुभगंसिवा, समयसिया - पाणिर्यंविवा उद्धृ २  
 भोत्तएवा पीत्तएवा, एसकप्यो पारिहारियस्स अपरिहारियओ ॥ तिथेमिं ॥ २९ ॥  
 त्रिबहार सुयस्स वीओ उद्धंसो सम्मत्तो ॥ २ ॥

पात्र प्रहण कर स्थानक के बाहिर स्थिति की वैयावच करने को आवे, तब स्पष्टिर उसे जाता देख कर  
 कहे कि, अहो आर्य ! तुम्हारा आहार भी मास ही ल आना यह हमारे योग्ये बाद तुम भी - भागव  
 केना तो उस को उस ही पात्र में आहार पानी प्रहण करना परंतु दूरे अपरिहारिक माधु को  
 नहीं कल्पता है, उस परिहारिक माधु के पात्र में लक्षण हुआ अग्रनादि चार्गे आहार योग्यता पीना परंतु  
 अप्रत पात्र में आहार करना, अपने मानीये में माषा करना, अपने कर्मदल से पानी पीना,  
 अपने हाथ में प्रहणकर स्वादिम पानी आदि स्वाना, यों सब अपने हाथ से ही प्रहणकर आहारदि भोग  
 कर पानी आदि पीना कल्पता है यह कल्प परिहारिक अपरिहारिक माधु का कथा, यह व्ययथा  
 सूत्र का द्वारा उदशा समाप्त हुवा ॥ २ ॥





## ॥ तृतीय उद्देशः ॥

भिवबुध इच्छेजा गणधारित्तएवा भगवंच सेय अपलिच्छिण्णे एवं मे णो कप्पति  
गणधारित्तए, भगवंच सेय पलिच्छिण्णे एवं से कप्पति गणं धारित्तए ॥ १ ॥  
भिवबुध इच्छेजा गणधारित्तए णो कप्पति से थेरे अणापुच्छित्ता गणंधारित्तए,  
कप्पतिसे थेरे आपुच्छित्ता गणंधारित्तए थेरायं से वियरैजा, एवं से कप्पति गणं

किसी साधु के मन में गच्छ धारण कर स्वयं विचरने की इच्छा हो परंतु वह आचारंग निशीतादि सूत्र  
अपठित अज्ञान हो तो भगवंत फरमाते हैं कि यदि वह शिष्यादि परिचार सहित होतो भी उस का  
गणधारण कर स्वच्छा घासी होना नहीं कल्पता है परंतु भगवंत कहते हैं कि वह आचारंग नशित सूत्र  
का ज्ञान होतो उसे गणधारण कर के विचरना कल्पता है ॥ १ ॥ वह किम प्रकार कल्पता है सो कहते  
हैं किसी साधु को गणधारण कर गच्छपति वत आंगवानी हो स्वयं इच्छा से विचरने की इच्छा हो तो  
स्थविर को विना पूछे गणधारण कर विचरना उस को नहीं कल्पता है, परंतु स्थविर को पूछे आ. वे  
को उपयाग युक्त गणधारण कर विचरने की आज्ञा देवे तो उसको गणधारण कर विचरना बल्प ॥ है,  
और जो स्थविर कह के पतविचरो तो उस को गणधारण कर विचरना नहीं कल्पता है, यदि जो  
वह स्थविर की आज्ञा विना गणधारण कर विचरे तो वह जिनने दिन आज्ञाविना विचरे उतने दिन की

धारित्तए, धराय से जो विद्येजा, एवं से जो कल्पति गणधारित्तए, जणं थेरेहि  
 अविदिणं गणधारेइ सेसंतराए छेदेवा परिहारेवा साहम्मिया उट्टाए विहरंति,  
 जत्थिणं तेसि केइ छेदेवा परिहारेवा ॥ २ ॥ तिवास परियाए समणे निगंथे आया  
 कुसले, संयम कुसले, पवयण कुसले, पणइ कुसले, संगह कुसले उवगाहकुसले,  
 अक्खुयायारे असबलायारे, अभिजायारे, असंकलिट्टायारे, चरित्ते, बहुसुए, वज्झागमे,  
 दीसा के छेद के अथवा तप का प्रायःश्चित्त का अधिकारी होवे। परंतु जो उत्तने जितने  
 स्वर्घर्षिक साधुओं को उठाये अपने साथ में लिये उस के साथ विचरे, उन को चारित्र का  
 छेद भी नहीं आता है और तप का प्रायःश्चित्त भी नहीं है (मगवती सूत्र में कह जागलिके साथ के  
 क्षिप्यवत्) ॥ २ ॥ अथ पट्टी धर का आचार कहते है ॥ तीन वर्ष जिन को दीसा धारन किये को हुवे  
 होवे, वे भ्रमण विप्रन्य पांच आचारमें कुशल, सतर भेदे संयममें कुशल, आचारांगादे प्रवचन-शास्त्रमें कुशल,  
 प्रायःश्चित्त देने के कार्य में कुशल, गच्छ के लिये क्षेत्र ब्रह्म सूत्र पात्रादि के संग्रह में कुशल, उपग्रह  
 आहार की एपणा पानी की एपणादि कार्य में कुशल, अखंड आचार के पालक इक्षीम प्रकार के सबल  
 दोष रहित असबलाचारी, जिनका आचार भिन्नता रहित भिन्नानुसार होवे अभिसाचारी, संकष्ट परिणाम  
 क्रोधादि कृपाय कर मलीनता रहित, धारित्र के पालक, बहुत सूत्रके पाठी, बहुत आगम शास्त्रके न शार्कश्चित्त

अहर्षणेन आयारकल्पधरे कल्पति उमञ्जायसाए उद्विसिसाए ॥ ३ ॥ सचेत्रणं से तिवास  
परियाए समणे निगंये नो आयार कुसले, नोसंयमकुसले, नोपवयण कुसले नोपणति-  
कुसले नो संगहकुसले, नो उग्रगह कुसले, कखयायारे, सखलायारे, मिष्णायारे,  
सकिल्हियायारे, खरिचं अर्षमूए, अप्यांगमे, जोकल्पति उवञ्जायसाए उद्विसिसाए  
॥ ४ ॥ पवशास परियाए समणे निगंये आयार कुसले, संयम कुसले,  
विधी के जान, जपन्या ही तो प्रायागंग और नीक्षित के अर्थ परमार्य के जान होवे, एन को उपायवाच

के एउपर स्थापन करना कल्पत है ॥ ३ ॥ उस ही साष्ट को तीन वर्ष पूर्ण दीक्षा पारन किये को  
हुये नही, ऐसे अमन्य निमन्य से आचार में कुशाह नही, संयम में कुशाह नही, मरन-शास्त्र में कुशाह नही,  
गया बुद्धि में कुशाह नही, मन्त्र के उपयोग में आवे एसी एस्तु के संग्रह में कुशल नही, शत्रुवपन  
अपवणादि कार्य में कुशल नही, अहित चरित्र के पालने वाल, सबलादि दोष सहित, चारित्र के  
पालने वाले, त्रिनाडा से जिन के चारित्र में सिद्धता है ऐसे, जोपादि कषाय कर, संक्षिष्ट चरित्र है  
जिन का, अत्य सुत्र-सुत्रज्ञान रहित, अल्प आगम के जान, ऐसे ही उपाध्याय की पत्नी देना नही करवला  
है ॥ ४ ॥ जिन साष्ट को संयम, मरण किये पान वर्ष हुये ही देना अमन्य निमन्य आचार में कुशल, मर-  
न में कुशल, महा-बुद्धि में कुशल, सखादि के संग्रह में कुशल, आशादि के उपग्रह में कुशल, जलहा-

पत्रयण कुसले, पण्णाति-कुसले, संगह कुसले, उभाह कुसले, अम्बयुयापारे, असत्र-  
 टायारे, अभिण्णायारे, असंकलिट्टायारे चरित्ते बहुसुए वज्जागमे जहणणेण दसाक-  
 प्पविहराधे, कप्पति आयरिय उवज्जायत्ताए उदिसिस्सए ॥५॥ सच्चवणं से पच्चवासा  
 परिघाए समण णिरगंधं नो आयर कुसले, णो पत्रयण कुसले, णो पण्णाति कुसले, णो  
 संगह कुसले, णो उवगह कुसले, कखूयायारे, सबलायारे, भिन्नायारे संकलिट्टायार  
 चरित्ते, अप्पसुंए अप्पागमे णो कप्पति आयरिय उवज्जायत्ताए उदिसिस्सए ॥ ६ ॥

चारी, सबले दोष रहित चाग्नि, भिक्षता रहित आचार का पालक, कपाय की संल्लेष्टा रहित चारित्र का  
 पालनेवाला, बहुत सूयके पारगाथी, बहुत आगम के ज्ञान, जपन्य जपन्य दयाश्रुतस्कं वयवहारवेद कल्प  
 चारो उद के ज्ञान शेष इन को आचार्य की और उपाध्याय की दोनों पदों पर स्थापन करने योग्य है  
 ॥ ६ ॥ वही जो सातु पांच वर्ष जिन को दीक्षा धारन किये हुये ऐसे अरण्य निश्चय आचार कुशल नहीं,  
 अरण्य में कुशल नहीं, मन्त्रचन में कुशलता रहित, प्रश्ना-बुद्धि रहित, योग्य वस्तु के संग्रह रहित, आपारादि  
 प्राण करने की कुशलता रहित, त्रिहित चरित्रिये, मन्त्रदोष से विहित, भिक्षाचारी संलिहाचारिचि, अल्प  
 सूत्री, अर्थ-आर्गम-कां ज्ञान, ऐसे की आचार्य उपाध्याय के पद पर स्थापन करना नहीं इच्छता है ॥६॥

सुविष्णुसुक्ता-पत्रयण-कुसले-पण्णाति-कुसले-संगह-कुसले-उभाह-कुसले-अम्बयुयापारे-असत्र-  
 टायारे-अभिण्णायारे-असंकलिट्टायारे-चरित्ते-बहुसुए-वज्जागमे-जहणणेण-दसाक-  
 प्पविहराधे-कप्पति-आयरिय-उवज्जायत्ताए-उदिसिस्सए-॥५॥-सच्चवणं-से-पच्चवासा-  
 परिघाए-समण-णिरगंधं-णो-आयर-कुसले-णो-पत्रयण-कुसले-णो-पण्णाति-कुसले-णो-  
 संगह-कुसले-णो-उवगह-कुसले-कखूयायारे-सबलायारे-भिन्नायारे-संकलिट्टायार-  
 चरित्ते-अप्पसुंए-अप्पागमे-णो-कप्पति-आयरिय-उवज्जायत्ताए-उदिसिस्सए-॥ ६ ॥

अहण्णेण आयारकण्णधरे कप्पति उमञ्जायसाए उद्धिसिस्सए ॥ ३ ॥ सचेयणंसे तिवास  
परियाए समणे निग्गये नो आयार कुसले, नसियसकुसले, नोपथयण कुसले नोपणति-  
कुसले नो संगहकुसले, नो उअगह कुसले, कखुयायारे, सबलायारे, भिष्जायारे,  
संकलिद्धायारे, चरितं अण्वेसूए, अण्पागमे, नो कप्पयति उअञ्जायसाए उद्धिसिस्सए ॥

॥ ४ ॥ पञ्चवास परियाए समणे निग्गये आयार कुसले, संयम कुसले,  
विधी के जान, जपण्या ही तो जावागंग और नीसति के अर्थ परमार्य के जान होवे, उन को उपाध्याय  
के पत्रपर स्थापन करना कल्पवृक्ष है ॥ ३ ॥ उस ही साष्ट को तीन वर्ष पूर्ण दीक्षा पारन किये को  
हुवे नही, ऐसे अस्य निग्रन्ध मे आचार मे कुशल नही, संयम मे कुशल नही, प्रत्य-शास्त्र मे कुशल नही,  
महा बुद्धि मे कुशल नही, मन्त्र के उपयोग मे आवे एसी वस्तु के संग्रह मे कुशल नही, शान्तवत्या,  
अभयणादि कार्य मे कुशल नही, बहिन चरित्र के पालने माल, सबलादि दोष सहित, चरित्र के  
साधने वाले, जिवाडा से जिने के चरित्र मे सिखाता है; ऐसे, कोषादि कषाय कर, संकलिष्ट चरित्र है  
मिन का, अस्य सूत्र-सूत्रज्ञान रहित, अल्प ज्ञान के जान, ऐसे को उपाध्याय की पद्वी देना नही करयता  
है ॥ ४ ॥ अिम साष्ट को संयम प्रथम किये पानि वर्ष हुवे ही वेना अस्य निग्रन्ध आचार मे कुशल, मव-  
चन मे कुशल, महा-बुद्धि मे कुशल, सबलादि के संग्रह मे कुशल, आधारादि के उपग्रह मे कुशल, जलशा-

पत्रयण कुसले, पुष्पाति कुसले, संगह कुसले, उभाह कुसले, अस्त्रयापारे, असत्र-  
 लायारे, अम्बिणायारे, असंकलिट्टायारे चरिते बहुसुए वज्रागमे जहणणेण दसाक-  
 प्यविषहारधे, कप्पति आयरिय उवञ्जायत्ताए उदिसिस्सए ॥५॥ सच्चवणं से पच्चत्तास-  
 परियाए समण णिमंथे ना आयर कुसले, जो पत्रयण कुसले, जो पण्णत्ति कुसले, जो  
 संगह कुसले, जो उवगह कुसले, वसूयायारे, सबलायारे, भिन्नायारे संकलिट्टायार  
 चरिते, अप्पसुए अप्पागमे जो कप्पति आयरिय उवञ्जायत्ताए उदिसिस्सए ॥ ६ ॥

बारी, सपत्ने दांप रहित चारित्र, भिक्षता रहित आचार का पालक, कर्माय की संकल्प रहित चारित्र का  
 पालनेवाला, बहुत सूत्रके पारगामी, बहुत आगम के ज्ञान, जपन्य जपन्य दशाश्रुतस्कंद व्याख्यारवेद कल्प  
 चारो छेद के ज्ञान होने उन को आचार्य की और उपाध्याय की दोनों पदों पर स्थापन करने योग्य है  
 ॥ ५ ॥ वही जो साधु पांच वर्ष जिन को दीक्षा धारन किये हुए ऐसे श्रमण नियंत्र्य आचार दुशल नहीं,  
 प्रथम में दुशल नहीं, प्रवचन में कुशलता रहित, प्रश्ना-बुद्धि रहित, योग्य वस्तु के संग्रह रहित, आचारादि  
 प्रहर्ष करने की कुशलता रहित, लोहित चरित्रीय, मन्त्रदोष सेवित, भिक्षाचारी संलिष्टाचारिर्षि, अल्प  
 सूत्रि-अल्प-आगम-के-ज्ञान, ऐसे को आचार्या उपाध्याय के पद पर स्थापन करना नहीं कल्पता है ॥६॥

० प्रकाशक राजा विशादुर लाला सुखदेवसहायजी खाला प्रसादजी

अट्टवास परियाए समणे निगंथे आयास कुसले, संयम कुसले, पत्रयणकुसले,  
 पणतिकुसले, संगह कुसले, उत्रग्रह कुसले, अक्खुगायारे, अमबलयायारे,  
 अभिण्णायारे, असकिलिट्टायारे चरिचे, बहुरसुए वड्झागमे जहण्णे ठाणसं-  
 मवायधरे कप्पति से आयारिचए उत्रज्जाचाए पवत्तिचाए, थेरेचाए,  
 गणिचाए, गणावच्छेइयचाए, व्हंसिचाए ॥ ७ ॥ सच्चवण अट्टवास  
 परियाए समणे निगंथे जो आयरकुसले णोसंयमकुसले, णो पत्रयणकुसले,

आठ वर्ष की दीक्षा वाले साधु निग्रय, आचार में कुशल, संयम में कुशल, प्रवचन में  
 न, प्रज्ञा में कुशल, संग्रह में कुशल, उपग्रह में कुशल, अखंड चारित्र्य, असवलदोषी, अभिज्ञाचारी,  
 प्राचारित्री, बहुत सूत्र पाठी, विद्यागामी, जघन्य स्थानांगजी सूत्र और समवायांग सूत्र के सूत्र अर्थ  
 जान, उन को १ आचार्य की पदवी, २ उपाध्याय की पदवी, ३ पवित्रनी (सर्व आजिका में  
 की पदवी, ४ स्वयिर की पदवी, ५ गणी (मुत्रार्थदाता) की पदवी, और ६ गणावच्छेदक (बहुत  
 का आज्ञा आदेश कर्ता) की पदवी. इन छ प्रकार की पदवी पर स्थापन करना योग्य है ॥ ७ ॥  
 आठ वर्ष की दीक्षा के धारक साधु निग्रय आचार की कुशलता रहित, संयम की कुशलता

॥ ७ ॥

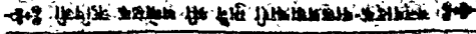
नो पणति कुसले, जो संगहकुसले, जो उवगह कुसले, खुबुयायोर सचलायोर,  
 भिणायोर संकलिट्टायोर चरिचे अप्ससू अप्यागमे ना कप्पति आयरियचाए  
 उवस्यचाए प्रविचिचाए थेरचाए गणिचाए उदिसिचए ॥ ८ ॥ निरुद्ध परियाए

रहित, प्रवचन की कुशलता रहित, प्रज्ञा-बुद्धि रहित, संग्रह की कुशलता रहित, उपग्रह की कुशलता  
 रहित, खंडिताचारिणी, सबल अतीचारा, भिन्नाचारी, संकलिष्टाचारिणी, अल्प-सूत्री, अल्प आगमी, वह  
 साधु आचार्य की, उपाध्याय की, पवित्री की, स्वविर की, गण की, गणवच्छेदक की पदवी के योग्य  
 नहीं है ॥ ८ ॥ अब निरुद्ध पर्यायवाले उम ही दिन के दीक्षित को पदवी देनी उस आश्रिय कहते हैं,  
 निरुद्ध पर्याय के धारक साधु निर्ग्रय को दीक्षा-ग्रहण की उस ही दिन आचार्य उपाध्याय की पदवी पर  
 स्थापन करे, शिष्य प्रश्न करता है कि 'अहो भगवन् ! किस कारण कर ऐसा करे ?'  
 अहो शिष्य ! वह स्वविर साधु तथा रूप आगे कहेंगे ऐसे गुणों का धारक है तद्यथा— १. प्रतिनिकारी  
 कुल का है अर्थात् जिस घराने के श्रावकों अपन गंभीर्यतादि गुणों की प्रतीत साधुओं के मन में उत्पन्न  
 की है तथा सर्व स्यात उन के घराने के अनुष्य की प्रतीत है २. जिन का कुल धर्म करता है अर्थात्  
 दानादि-गुण कर साधुओं को धर्म का बन्धनवाले उन के घराने के अनुष्य है, ३. विश्वासकारी जिन का  
 कर्म है, द्विपे-द्विपे-मरांसे का निर्वाह कर निश्वास उत्पन्न किया, दगा कपट कर रहित जिन के घराने के



समने गिरगथे कल्पति सं दिवसं आयरिय उवस्मायचाए उद्विस्सिचए, से किंमहु भंतो।  
 अरिषणं थेराणं तथा खंवाइं कुलाइं कुलाइं पचियाइं विजाइं वेसासियाइं समयाइं  
 समुइंकराय अणुमयाइं बहुमयाइं भवति, तेहि कबहिं तेहि पसिएहि, तेहि धज्जेहि,

मनुष्य हैं। ४-समयाइं-खिन के कुल में साधु साध्वी का प्रवेश बहुत वक्त होता है जितने विशेष वक्त  
 साधु साध्वी आते हैं उतने ही वे विशेष खुशी मानते हैं। हर वक्त एकसा संस्कार  
 सम्मान साधु साध्वी का करते हैं, साधु साध्वी के मन को प्रसुद्धिम करते हैं, अणुपय करते घर  
 के छोटे बड़े सर्व स्त्री पुरुषों को अनुवादी है कि साधु साध्वी की यथा उचित भक्ति करो, तथा जिस  
 पर मैं छोटे बड़े कोई भी साधु जाओ उन के मन से किसी भी प्रकार का अंतर नहीं है सब का एकसा  
 भस्कार सम्मान करते हैं जो दान देने से तार्थिकर गीत्रे पार्जन होता है उस के जान है, इन्हिलिये लघु  
 बृद्ध की भिन्नता रहित सब को एकसा अद्वलक दान देते हैं, बहुपम से बहुत कर बहुत साधुओं को  
 इष्टकार है तथा सब घर के गनुष्यों की एकसी सम्पत्त है सब दान लाभ अभी होते अपने २ हाथ से  
 अद्वलक दान देना चाहते हैं जो कोई उन के घर में साधु का दूधी हाथ तो वे उन चरी सम्मान लगता है  
 ऐसे बहुपम है ऐसे कुत्रोत्पन्न इस ही प्रकार का प्रतीतकारी ऐसा ही धर्मवत ऐसा ही शिवासनीय ऐसा ही  
 समभावी, ऐसा ही प्रयोद रूप का कान शब्दा, ऐसा ही अनुपम, ऐसा ही बहुपम साधु हो ( जो आचारंग,



तो द्विवे सारिमण्डिं ते द्विं समण्डिं समुद्धं करो द्विं ते द्विं अणुमण्डिं ते द्विं बहुमण्डिं जेसे  
 निरुद्ध परिणाय समणे णिगंथे कप्पति आयरिए उवज्झायत्ताए उद्विसित्तए तं दिवसं  
 ॥ ९ ॥ निरुद्ध त्रासपरियाए समणे णिगंथे कप्पति आयरिय उवज्झायत्ताए उद्वि-  
 सित्तए समुच्छेय कप्पति, तरसणं आयार कप्पस्स देसं अहिज्जाए भवति, सेय अहि-  
 जिस्सामिति अहिज्जित्ता एव से कप्पति आयरिय उवज्झाएत्ताए उद्विसित्तए, सेय

मुग्ग हांगी निष्ठांत, दशा श्रुत्स्कंध, शूद्ररुक्कलय, वक्काद, ठाणांग, सपवांग, इन आठ शास्त्रका जानहो  
 पहा इत्ता हा उत्कृष्ट कारण प्रयोजन संयम से पहगयाहो. संयम गुन से भृष्ट इथा हो वह एनःमुम कपोदय  
 ने भंयप प्रहणकरे और इधर सम्प्रदाय में आचार्य, उपाध्यायका विभोग होगया होतो.) उसको समझकर  
 उस ही दिन आचार्य की तथा उपाध्याय की पंढी से विभूषित करनेा कल्पता है, क्योंकि वह जातिवंत  
 कथंयत होने से लिये हुये भार का सम्यक् प्रकार निर्वाह करेगा, प्रथम सब गुण संश्लेष सर्वं ज्ञान होने से  
 गच्छ को दीया सहेगा ॥ ९ ॥ उक्त प्रकार ही निरुद्ध वाम परिणाय का चारक [ संयम से भृष्ट हो पुनः  
 संयमी बना हो. वह आचार्य उपाध्याय, क पत्र के योग्य हो ] आचार्य उपाध्याय काल म त्त होजा वे तो उस  
 को आचार्य उपाध्याय के पत्र पर स्थगन करना कल्पता है, पंतु यह जो आचारण नवीत  
 मुत्र का अभ्यास किया न लेने, उन से पूछे की यह तुम्हारे को पदनाक पड़ेगा, वह जो पत्र करे तो ॥ ७७

अहिंजिरसामिच्चि णो अहिंजिजा, एवं से नो कप्पति आयरिय उवज्जायचाए उदिसिच्चए  
 ॥ १० ॥ जिगंथरसणं णवडहरतरुणगणरस आयरिय उवज्जाएवीसंभजा णो से कप्पति  
 आयरिय उवज्जायस्स होचिएः कप्पति से पव्वं आयरिय उदिसाविच्च ततो पव्वंछा  
 उवज्जायः से किमाहु भते । दुसंगाहियाए समण णिगंथ तज्जाहा—आयरिएण, उव-

को पढ़ावे वह पढ़लवे तो उस को आचार्य उपाध्याय के पद पर स्थापन करना, कल्पना है और वर  
 कहतो नहीं की मैं पढ़ुंगा परंतु पढ़े नहीं तो उसे आचार्य उपाध्याय के पद पर स्थापन करना नहीं  
 कल्पना है ॥ १० ॥ अब युवान साधु को रहने का कहते हैं ॥ कोई माधु नवादिक्षित बचकर अथवा  
 दीक्षाकर वाल्यवस्यावित्त उसके आचार्य उपाध्याय काउ प्राप्त होगये तो उससाधुको आचार्य स्थापन किये बिना  
 उपाध्यायः स्थापन किये बिना रहना नहीं कल्पता है, परंतु उन को प्रथम आचार्य योग साधु को आचार्य  
 को पद्वी पर स्थापन करे उपाध्याय की पद्वी योग को उध्याय की पद्वीपर स्थापन करे फिर उनकी आज्ञामे  
 आप को रहना कल्पता है शिष्य पछता है अहो भगवान् ! किस कारण से आचार्य  
 उपाध्याय बिना नहीं रहना ? अहो शिष्य ! साधु निग्रन्थ ! दोनों कर परिग्रहित होते हैं तथया  
 आचार्य और उपाध्याय इन कर दोनों सहित होते हैं ॥ ११ ॥ अब सध्वी आश्रय अधिकार करते हैं

ज्ञाएणय, ॥ ११ ॥ णिगमथीएण णव डहर तरुणियाए आयरिय उवज्झाय पवित्ति-  
णीय वीसंभिज्जा णो से कप्पति अणायरिय अणुवज्झाईय अपवित्तिणीएय होत्तए;  
कप्पति से पुब्बं आयरिय उदिसावित्ता ततो पच्छा उवज्झाईय ततो पच्छा  
पवित्तिणीएय से किमाहु भंते ! तिसंगहिया समणी निगमथी तनहा—आयरिएणं  
उवज्झाएणं पवित्तिणीएय ॥ १२ ॥ भिक्खुगणओ अणिविखवित्ता  
मेहुण धम्मं पडिसेविज्जा जात्र जीवायं तरस तएत्तियं नो से कप्पति

माधवी तवी दीक्षिण तारुण्य अवस्थावाली दीक्षा कर या बय कर बाल्यावस्थावंत उनकी आचार्यिका उपा-  
ध्यायिका: पवित्तनी—गुरुनी आयुष्य पूर्ण कर हो तो उन को आचार्यिका उपाध्या:  
यिका गुरुणी विना रहना नहीं कइयता है, परंतु मथप आचार्याकी स्थापना कर नन्तर उपाध्यायिकाकी  
स्थापना करे, फिर गुरुणी की स्थापना करे, फिर उन को आहा में रहना कइयता है, शिष्य पूजता है,  
अहो भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा ! अहो शिष्य ! निर्ग्रथी-साध्वी तीनों कर मग्न-हित-होती है  
नशया—१ आचार्यिका कर, २ उपाध्यायिका कर, और ३ पवित्रनी-गुरुणी कर ॥ १२ ॥ अब दीक्षा  
धारन करे बाद पदों का अधिकार कहते हैं, कोई शत्रु गच्छ में से बाहिर निकले बिना अर्थात् गच्छ में

आथरिचंत्वा उवञ्जायत्तंवा, पवसितंवा, थेरितंवा गणितंवा, गणावच्छेदयत्तंवा उद्विसि-  
त्तएवा धेरित्तएवा ॥ १३ ॥ भिक्खु गणाओ अक्कयं भेहणं धम्मं पडिमेवेज्जा तिण्ण  
संवच्छराहं तरसं तपत्तियं जो कप्पति आयरिचंत्वा उवञ्जायत्तंवा, पवसितंवा थेरितंवा,  
गणितंवा, गणावच्छेदयत्तंवा, उद्विसित्तएवा धारित्तएवा, तिहिं संवच्छरेहिं वीतिकंतेहिं  
खउत्थगंसि संवच्छरंसि पट्टियंसि उवत्तियंसि द्वियंसि उवसंतरस उवरयस्स पडिभि-  
रयस्स, निधीकारस्स, एवं से कप्पति आयरिचंत्वा उवञ्जायत्तंवा, पवसितंवा, गणितंवा

रहा हुआ ही मैथुन धर्म प्रतिसेवन करे, तो फिर उस को जबजीव पर्यन्त आचार्य की पदवी, उपाध्याय की  
पदवी, प्रवक्तृ-गुरु की पदवी, स्वधिर की पदवी, गणी की पदवी, गणावच्छेदक की पदवी देना नहीं करता है  
॥ १३ ॥ जो कोई साधु माद्युओं का गण को-मम्पदाय को छोड़कर मैथुन धर्म प्रतिसेवन करे और फिर  
दीक्षा पारान कर गच्छ में मिलता तीन वर्ष पर्यन्त तो उसको आचार्य की, उपाध्याय की,  
प्रवक्तृ की, स्वधिर की, गणी की, गणावच्छेदक की पदवी देना, स्थापन करना नहीं करता है. पांतु  
तोन संवत्पर बीने बाद चौथे संवत्पर में वह सर्वथा प्रकार से सावजन होवे. वन को स्थिर स्थापन करे,  
विकार आन उपगोत शोधे. विषम कपाय से निवृत्त पांच विषयों की कृतज्ञता होवे, विकार हरित वने,

धेरितंवा गणवच्छेदयंतंवा, उदिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ १३ ॥ गणावच्छेदयं गणा-  
 वच्छेदयत्तं अणिक्रिषहिता महुण धम्मं पडिसेव्जा जाव जीवायं तरस  
 सप्यात्तयं णो कप्पति आयरियत्तंवा उवज्जायतंवा पवित्तितंवा, थेरितंवा, गणितंवा,  
 गणवच्छेदयत्तंवा, उदिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ १५ ॥ गणावच्छेदए गणावच्छेदय  
 तंवा: णिक्रिषहिता मेहुणधम्मं पडिसेव्जा तिण्णि संमच्छराइं तंस तप्पत्तियं णो  
 कप्पति आयरियत्तंवा उवज्जायत्तंवा पविसित्तंवा, थेरतंवा, गणितंवा,  
 गणावच्छेदयत्तंवा, उदिसित्तएवा धारित्तएवा, तिहिं संवच्छेरिहिं वीत्तिक्कतेहिं चउत्थ-

नो फिर वसे आचार्य की, उपाध्याय की, प्रवर्तक की, स्थविर की. गणो को. गणावच्छेदक की. पदवो  
 पर स्वापन करे पदो देना करवता है ॥ १४ ॥ अब गणावच्छेदक आश्रित्य कहते हैं. गणावच्छेदक  
 गच्छ के बहुत से साधुओं का अधिपति गच्छ से निकले विना-गच्छ से रहा हुआ मैयुन धर्म प्रति सेवन  
 करे तो फिर जावजाव पर्यंत उस को आचार्य, उपाध्याय, प्रवृत्तिक, स्थविर, गणी, गणावच्छेदक की पदो  
 देना करवता नहीं है ॥ १५ ॥ गणावच्छेदक गच्छ से निकल कर मैयुन धर्म प्रति सेवन करे वंकी वीत्ता  
 ल गच्छ में विदे को तीन वर्ष पर्यंत तो उस को आचार्य उपाध्याय वावत् गणावच्छेदक की पदो देना

यसि संवच्छरसि षट्ठ्रियसि उवट्ट्रियसि द्वियसस उवसंतरसस उवायसरस  
 पडिविरयसस णिविकारसस एव से कप्पति आयरियत्तवा जाव गणाव-  
 च्छेइयत्तवा उदिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ १६ ॥ आयरिय उवज्जाय  
 आयरिय उवज्जायत अणिकखवित्ता असेहुणधम्मं पडिसेविजा जाव  
 जीवाय तरस तप्पत्तियं नो कप्पति आयरियत्तवा जाव गणवच्छेइयत्तवा  
 उदेसित्तएवा धारित्तएवा ॥ १७ ॥ आयरिय उवज्जायं आयरिय उवज्जायत्तं  
 णिखिवित्ता मेहुणधम्मं पडिसेवेजा तिणिसंवच्छारायं तरस तप्पत्तियं णो कप्पति

कल्पता नहीं है। तीन वर्ष बीते बाद चौथा संवत्सर प्रवेश हुवे वह सावधान होवे मनस्थिर होवे चित्त  
 उपशांत होवे विषय से निवृत्ति पावे निरविकारी बने तो फिर उस को आचार्य की उपाध्याय की यावत्  
 गणवच्छेदक की पदवी देना कल्पता है ॥ १६ ॥ अब आचार्य के दो सूत्र कहते हैं—आचार्य उपाध्याय  
 आचार्य उपाध्याय की पदवी को छोटे बिना मैथुन धर्म प्रति सेवन करे ता फिर जावजीव तक उन को  
 आचार्य उपाध्याय यावत् गणावच्छेदक के पदपर स्थापन करना नहीं कल्पता है ॥ १७ ॥ आचार्य उपाध्याय  
 आचार्य उपाय की पदवी छोड़कर गच्छते निकल कर मैथुन धर्म प्रति सेवन करे और फिर दीक्षा ले गच्छ

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

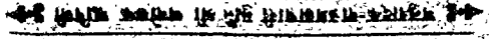
आययित्वा उवञ्जायतवा जात्र गणाच्छेदयत्त्रवा उद्विसिचएवा धारिचएवा तिहि संवच्छ-  
 रहि वीतिकंतोहि चउत्थयंसि संवच्छरंसि पट्टियंसि उवट्टियंसि द्वियरस उवसंतरस उवययस  
 पडिवियरस णिविकारस एवं से कल्पति आयरियसंवा उवञ्जायत्तवा जात्र गणा-  
 वच्छेदयत्त्रवा उद्विसिचएवा धारिचएवा ॥ १८ ॥ भिक्खुयंगणाओ अवगामे उहायति  
 तिणिसंवच्छराइ तस तप्पच्चियं णो से कल्पति आयरियत्तं उवञ्जायत्तवा जात्र  
 गणावच्छेदयत्तवा उद्विसिचएवा धारिचएवा तिहि संवच्छरं हि वीतिकंतोहि  
 चउत्थयंसि संवच्छरंसि पट्टियंसि उवट्टियंसि द्वियरस उवसंतरस उवययस पडिवि-

में आत्रे तो फिर तीन वर्ष उन को आचार्य उपाय की यात्र गणावच्छेदक की पट्टी देना कल्पता नहीं  
 है तीन संवत्सर बीते बाह चौथे वर्ष में वे स्थिर होते साधुमान होते मनस्थिर होते विकार उपशान्त होते  
 विषय कषाय में निवृत्ते निर्विकारी बने तो फिर उन को आचार्य उपाय यात्र गणावच्छेदक की पट्टी  
 देना कल्पता है ॥ १८ ॥ अब साधु आश्रित्य कहते हैं: कोई साधु साधुकां येष न मम्मदाय का छोड़  
 विना देसांतर गयं विना जो मयून धर्म संवन करे तो जावजीव पर्यन्त पट्टी देना कल्पता नहीं है और मय  
 पलट देसांतर आकर मयुत धर्म संवन कर पुनः दीक्षा लेतो तीन वर्ष बीते बाद उक्त गुण देखकर पट्टी



रियरस निविकारस एवं से कल्पति आयरियसंवा जात्र गणावच्छेदयंतवा उरि-  
 सिचएषा धारिसएवा ॥ १९ ॥ गणावच्छेदय गणावच्छेदयत्तं अणिखिविचा उहायंति  
 आत्र जीत्राए तस्स तण्पतिं नो से कल्पति आयरियसंवा उवञ्जायसंवा आत्र  
 गणावच्छेदयसंवा उदिसिसएवा धारिसएवा ॥ २० ॥ गणावच्छेदए गणावच्छेद-  
 यंतवा निखिसविषा उहायंति तिणि संवच्छराइ तस्स तण्पियं णो से कल्पति आय-  
 रिसंवा उवञ्जायतंवा जात्र गणावच्छेदयसंवा उदिसिसएवा धारिसएवा, सिहि संव-  
 चरहि धीतिकंतोहि सउरथयंसि संवच्छरासि पट्टियंसि उवट्टियंसि द्वियरस  
 उवसतरस उवरयरस पडिविरयरस णिविकारस, एवं से कल्पति आयरियसंवा  
 उवञ्जायतंवा जात्र गणावच्छेदयरसतका उदिसिसएवा वारिसएवा ॥ २१ ॥ आयरियं

देना कल्पता है, यो वा अलापक साधु के कहना ॥ १९ ॥ ऐसे ही गणावच्छेदक के भी दो मूल कहना  
 जो गणावच्छेदक गणावच्छेदक की पद्धि में रहा मेषुन धर्म सेवन करे तो जांबजीक पर्यन्त पद्धि नहीं देना  
 और जो गणावच्छेदक पना छोड़ मेष बदलकर देवान्तरादि में जाकर मेषुन धर्म सेवन करे पुनः वसिता  
 के वा तीन वर्ष बाद यात निपादि एक गुण देखकर आचार्यादि पद्धि देवे ॥ २०-२१ ॥ ऐसे ही



आयिरियेचं अणिविचिचा उहायति जाव जीवाए तस्स सप्पतिय नो से कप्पति आयिरियेचवा  
 उवञ्जायतवा पविस्सितवा येरितवा गणित्त्वा गणावच्छेइयत्त्वा उद्विसित्त्वा धारि-  
 च्त्वा ॥ २२ ॥ आयिरिय आयिरियत्तं णिविचिचिचा उहायति तिसि सत्त्वा उहाइ  
 तस्स तप्पत्तियं नो से कप्पति आयिरियत्त्वा जाव गणावच्छेइयत्त्वा उद्विसित्त्वा  
 धारित्त्वा, तिहि सत्त्वा उहायति वीतिकत्तेहि सत्त्वा उहायति पट्टियासि उवाट्टियासि-  
 ट्टियस्स उवसंतस्स उवरयस्स पड्विविरयस्स णिविक्कारस्स एवं से कप्पति आयिरियत्त्वा  
 उवञ्जायत्त्वा जाव गणावच्छेइयत्त्वा उद्विसित्त्वा धारित्त्वा ॥ २३ ॥ उवञ्जाय  
 उवञ्जायत्तं अणिविचिचिचा उहायति जाव जीवाए तस्स तप्पतियं णो से कप्पति  
 आयिरियत्त्वा जाव गणावच्छेइयत्त्वा उद्विसित्त्वा धारित्त्वा ॥ २४ ॥ उवञ्जाय

आचार्य आचार्यपति को छोड़े विना मैथुन धर्म सेवन करे तो जावजीव किसी भी प्रकारकी पट्टी नहीं देवे और  
 आचार्यपद को छोड़कर वेप बंदलकर देशान्तर में जाकर मैथुन धर्म प्रति सेवन कर पुनः दीक्षा लेवे  
 तो तीन वर्ष यतिवर्ष उन का स्थिर उपवास निधिकारिक पना देस्कर आचार्यदि की  
 पट्टी उन को देना कल्पता है ॥ २३ ॥ ऐसे ही उपाध्याय, उपाध्याय की पट्टी छोड़े विना धर्म में रहकर  
 मैथुन धर्म प्रतिसेवन करे तो जावजीव किसी भी प्रकार की पट्टी नहीं देवे ॥ २४ ॥ उपाध्याय, उपाध्याय

श्रीसंज्ञा

उवज्जायचं णिविद्धविष्ठा उहायंति तिणिसंवच्छरा तरस तप्पचियं नो से कप्पति आय  
 रियचंत्ता जात्र गणावच्छेइयचंत्वा, उद्विसिचत्त्वा धारिचत्त्वा, तिहि संवच्छरंहि वीति-  
 कंतेहि चउत्थयंसि संवच्छरंसि पट्टियंसि उवट्टियं ट्टियस उवसंतस्स उवस्यस्स पड्वि-  
 रयस्स णित्रिकारस्स, एवं से कप्पति आयरियचंत्वा उमज्जायचंत्वा पत्रिसिचंत्वा  
 भेरचंत्वा, गणितंत्वा, गणावच्छेइयचंत्वा, उद्विसिचत्त्वा धारिचत्त्वा ॥ २५ ॥ भिवखुय बहुरसुइ  
 वस्सेगमं बहुसो बहुसु आगाढागाढसु कारणेसु माईमुसवाइ असुई पात्रजीवा

की पट्टी छोड़कर भेष बदलकर मैथुन धर्म सेवन कर पुनः दीक्षा लेतो तीन वर्ष बाद चौथे वर्ष में स्थिर  
 चित्त साध्यान निर्गतिकारी इत्यादि गुण देखकर आचार्य की यावत् गणःवन्देउरक की पट्टी देना कल्पता है  
 ॥ २५ ॥ यह तो वीथा त्रय की खण्डाना करनेवाले को पट्टी की मना की. अब यथाशक्ती बदल कहते हैं.  
 कोई एक साधु बहुत सुत्री (आवशाक और आचारंग सूत्र का तो अवश्य जान ही होवे. इस उपांत  
 ज्ञानमयी नीशीय का ज्ञान, मध्यम बृहत्सूत्र का ज्ञान, उत्कृष्ट ९ तथा १० पूर्व तक पढा हुआ हो. उसे  
 यह सुत्री कहते हैं) बहुत आगम प्रायःश्रुतादि विधीका ज्ञान, कोई बहुत ही जबर गाढवगाढ [ नहीं  
 बचे ऐसा ] कालत योजन बरतना हुवे भी जो कपट सहित यथावाद बोले मिश्रमाषा बोले, उत्सूत्र मरूपे

जाव जीवाए तसतप्यासियं नोसिकप्पति आपरियत्तंवा. उवज्जयत्तंवा पवचित्तंवा  
 थेरेत्तंवा गणित्तंवा गणवच्छेइयत्तंवा उदिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ २६ ॥ गणावच्छे-  
 इय बहुस्सुए वज्जागमे बहुसो बहुसु आगाढे गांढसु कारणेसु माईमुसावादी असु-  
 तिपावजीवाए जावजीवाए तसस तप्यतियं णोसे कप्पति आयरित्तंवा जाव गणावच्छेइ  
 यत्तंवा उदिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ २७ ॥ आयरिए बहुस्सुए वज्जागमे बहुसो बहुसु  
 आगाढे गांढसु कारणेसु माईमुसावादी असुतिपावजीवी जाव जीवाए तरस तप्यत्तियं  
 णोसिकप्पति आयरित्तंवा जाव गणवच्छेइयत्तंवा उदिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ २८ ॥

अर्थ सूत्रार्थ विधीत करे. इम प्रकार पापकर्म कर अनो उपजी विधां करेतो उन को तो जाव जीव  
 पर्यंत आचार्य की, उपाध्याय की, प्रवर्तक की, स्थविर की, गणी की, गणावच्छेदक थी, पद्वीदेना कस्यता  
 नहीं है ॥ २६ ॥ कोई गणावच्छेदक बहुत साधु के मळक साधु है बहुत मूष के पढे हुए बहुत आगम के  
 जानकार बहुत विशेष जरूरी गढगढ कारण उत्पन्न हुके कपट सहित झूठ बोले, उत्सुव प्रकृते, पापरूप  
 कर आजीवीका करे तो जावजीव पर्यन्त उन को आचार्य की गणावच्छेदक की पद्वी देना कस्यता नहीं है  
 ॥ २७ ॥ कोई आचार्य बहुत सूत्री बहुत आगम के गान. बहुत जरूरी गाढ गं.दी कारण उत्पन्न हुके  
 कपट सहित झूठ बोले, उत्सुव, प्रल्पे पाप कइ उपजीवी हो एसे जावजीव पर्यंत आचार्य की यात्रव गणावच्छे-

\* काशक-रानावहादुर लाला मुखदेवमहायजी व्यालाप्रसदाजी \*

उवञ्जाए बहुसुए वञ्जागमे बहुसो बहुसो अगाढगोढसु कारणसु माईमुसावादी  
 अंसुति पावजीवी जावजीवाय तस्स तप्पत्तिं णोसकप्पति आयरितं वा जाव  
 गणावच्छेइयचंवा उदिसिचएवा धरिजाएवा ॥ २९ ॥ वहवे भिक्खुणो बहुसुया  
 वञ्जागमा बहुसो बहुसु अगाढगोढसु कारणसु माईमुसावादी असुति पावजीवी जाव  
 जीवाए तस्स तप्पत्तिं णोसकप्पतिअयरितंवा जाव गणावच्छेइचंवा उदिसिचएवा  
 धरित्तएवा ॥ ३० ॥ वहवे गणायच्छेइया बहुसुया वञ्जागमा बहुसो बहुसु अगाढे-  
 गोढसु कारणसु माईमुसावादी असुति पावजीवी जाव जीवाए तस्स तप्पत्तिं णो-  
 से कप्पति आयरितंवा जाव गणावच्छेइयचंवा उदिसिचएवा धरित्तएवा ॥ ३१ ॥

दक की पट्टी देना नहीं कल्पता है ॥ २८ ॥ कोई उपाध्याय बहुत सूत्री बहुत भागभी बहुत जरूर गाढा-  
 गाढी कारण हुवे कपट सहित झूठ बोले उत्सूत्र मरूपे पापकर उपजीवी हो उन को जावजीव आ-  
 चायादि की पट्टी देना नहीं कल्पता है ॥ २० ॥ बहुत साधु बहुत सूत्री बहुत आगमी बहुत जरूरी गाढा-  
 गाढी कारण से कपट युक्त झूठ बोले जो उत्सूत्र मरूपे पाप उपजीव हो उने जावजीव पर्यंत आचार्यादि  
 की पट्टी देना नहीं कल्पता है ॥ ३० ॥ बहुत गणावच्छेदक बहुत सूत्री बहुत आगमी बहुत जरूर गाढा-  
 गाढी कारण से कपट युक्त झूठ बोले तो उनको जावजीव पर्यंत आचार्यादि की पट्टी देना नहीं कल्पता है

बहवे आयरिया बहुसुया बज्जागमा बहुसो बहुसु आगाढागाढेसु कारणेसु माईमुसावादी अगुति पावजीवी जाव जीवाए तरस तप्पत्तियं नो से कप्पति आयरित्तंवा जाव गणावच्छेइयत्तंवा उदिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ ३२ ॥ बहवे उवज्जायां बहुसुया बहुसो बहुसु आगाढागाढेसु कारणेसु माईमुसावादी असुति पावजीवी जाव जीवाए तरस तप्पत्तियं नोसे कप्पति आयरियत्तंवा जाव गणावच्छेइयत्तंवा उदिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ ३३ ॥ बहवे भिक्खूणो बहवे गणावच्छेइया बहवे आयरिया बहवे उवज्जाया बहुसुया बज्जागमा बहुसो बहुसु आगाढागाढेसु कारणेसु माईमुसावादी

॥ ३१ ॥ बहुत आचार्यादि बहुत सूत्री बहुत आगमी बहुत जरूरी गाढागाढी कारण हुवे कपट युक्त हुट बोले उत्सूत्र कहे पाप जीवी उन को जावजीव तक किमी प्रकार की पट्टी देना नहीं कल्पता हे ॥ ३२ ॥ बहुत उपाध्याय बहुत सूत्री बहुत आगमी बहुत जरूरी गाढा गाढी कारण हुवे कपट युक्त पट्टा बोले उत्सूत्र परूपे पाप जीवी उन को जावजीव पर्यन्त आचार्यादि की पट्टी देना नहीं कल्पे ॥ ३३ ॥ अब समुच्चय कहते हे- बहुत साधुओं बहुत गणावच्छेदकों, बहुत आचार्यों, बहुत उपाध्यायों, बहुत सूत्र के जान बहुत जरूरी प्रवल गाढागाढ कारण प्राप्त हुवे भी जो वे पाया कपट करके मृषावाद बोले मिश्र पापा बोले उत्सूत्र परूपे सूत्र का अब विपरीत करे पाप कर्म कर उपजीविका करे इस प्रकार का जो

श्री महाशक्ति राजावहादुर लाला मुखदेवसहायजी ज्वालामहादजी

असुति पादजीवी जात्र जीवाए तरस तण चियं नोसे कपति आयरियचंवा उवझाय-  
चंवा पदचितंवा थेरतंवा गणतंवा गणवच्छेइयचंवा उदिसिचएवा धारिसएवा  
॥ ३४ ॥ तिचेमि ॥ ३४ ॥ विरहार सुयस तइयो उदिसो सम्मचं ॥ ३ ॥

कोई छोड़े इनको आनार्य की, उगधनाय की, पर्वतक—गुरु की, रथविर की, गणी की, गणावच्छेदक  
की, इनके पदोंमेंसे किसी भी प्रकार की पदों देना पढ़ी पर स्यापन करना करता नहीं है ॥ यह व्यवहार  
सूत्र का तीसरा उद्देश्य संपूर्ण हुआ, ॥ ३ ॥





॥७॥ कल्पति गणावच्छेदयस अप्पवउत्थस वासावासं वत्थए ॥८॥ से गांसिवा,  
 नगरीसिवा, खंडंसिवा, कवडंसिवा, पट्टणंसिवा, मंडवंसिवा, मागरंसिवा, दोणमुहसिवा,  
 आसमसिवा जाव सन्निवेशं, सिवा बहणं आयरिय उवज्झायाणं अप्पवित्तियाणं  
 बहणं गणावच्छेदयाणं अप्पतत्तियाणं कप्पंति हेमंत गिम्हासु चारए अणमणसरस-  
 निसाए ॥९॥ सेगामेसिवा जाव सन्निवेशं सिवा बहुणं आयरियाणं उवज्झायाणं अप्पतत्तियाणं  
 वच्छेदक को एक आप और दो साधु अग्र्य यों तीन ठाने से चौमासे में रहना नहीं कल्पता है ॥ ७ ॥  
 परंतु गणावच्छेदक एक आप और तीन साधु और यों चार ठाने से चौमासे में रहना कल्पता है ॥ ८ ॥  
 जहां बर लगता हो ऐसे ग्राम में, जहां कर न लगता हो तो ऐसे नगर में, धूलि का कोट हो ऐसे खंड में,  
 पर्वत के खडके में वस्ती हो ऐसे कर्षट में, जहां सर्व वस्तु मिलती हो ऐसे पाटण में, नवा सेहर वसा ऐसे से  
 मंडप में, सुवर्णादि निकलता हो ऐसे आगर में, जल स्थल दोनों पंथ हो ऐसे द्रोण मुख में, तापसों की  
 वस्ती हो ऐसे आश्रम में यावत् गोपालों की वस्ती हो ऐसे संखीविम में, बहुत आचार्य उपाध्याय को एक  
 आप और एक दूसरे साधु के साथ और गणावच्छेदक एक आप और दो अन्य साधु यों तीन के साथ  
 पीत काल उरण काल के आठ पहिने में ग्रामानुग्राम विचरना कल्पता है (यहां आचार्य के साथ एक  
 साधु और गणावच्छेदक के साथ दो साधु कहे सो स्वयं के शिष्य जानना परंतु अन्य के शिष्य नहीं  
 गिणना) ॥ ९ ॥ पूर्वोक्त ग्राम नगर यावत् मंडीविम में बहुत आचार्यों उपाध्यायों एक आप और दो

बहुणं गणावच्छेद्याणं अप्पचउत्थाणं कप्पति वासावासंवत्थए अण्णमण्णस्स निरसाए  
 ॥ १० ॥ गामाणुगामं दूइज्जमाणे भिक्खुयं जं पूओकहुविहरेज्जा सेय आहच्च वीसंभेज्जा,  
 सत्थिया इच्छकेइ अण्णे उवसंपज्जाणारिहे कप्पति सेयं उतसंपज्जिचाणं विहरित्थए,  
 णत्थियाइकेइ अण्णे उवसंपज्जाणारिहे अप्पणो कप्पाए असमत्थाए कप्पतिसि एगरातियाए  
 पाडिमाए जण्णं जण्णंदिंसि अण्णेसाहम्मिया विहरंति तण्णं तण्णंदिंसि उवल्लित्थए नो  
 से कप्पति तत्थ विहारं वत्थियंवत्थए, कप्पति से तत्थ कारण वत्थियं वत्थए, तंसिचणं

दूतरे साधु यो तीन साधु साथ में हो तैसे ही बहुत गणावच्छेद को एक आप और तीन दूतरे साधु यो चार साधु  
 साथ इस प्रकार चौमासा में परस्पर क्षी नेश्रय ग्रहण कर रहना कल्पता है ॥ १० ॥ अत्र आचार्यादि का  
 प्तुं हो उस आश्रय कहते हैं ॥ ग्रामानुग्राम विचरते साधु जो किसी स्थविरादि को आगेवानी कर  
 विचरते हैं वे कदाचित् आयुष्य पूर्ण कर जावे-पुत्तु पाजावे तो जो अन्य सम्प्रदाय में आचार्य  
 उपाध्यायादि भेद अंगीकार कर विज्ञाने योग्य हों उन को अंगीकार कर रागद्वेष पक्षपात रहित रहना  
 जो कदाचित् वह नही तो किसी भी साधु को आचार्यादि की पदवी योग्य देखकर उसको पदवीपर स्थापन करे  
 पदवीपर स्थापन करने योग्य भी नही नही अर्थात् आचारंग भीक्षीय का शानी कोई न होवे तो उन साधु  
 को कश्यता है कि अभिग्रह धारण करे कि जहां तक अमुक हमारे तात्कालिक साधु न मिले तहां तक रास्ते

उवज्जाग्र गिलायमाणे अणपर वदेजा अज्जो । मण्णे कालगयंसि समणंसि अयंसमु-  
 कसियव्वे सेयं समुक्कसिणारिहं समुक्कसियव्वे सेयणो समुक्कसिणारिहं णो समुक्कसियव्वे,  
 अस्थियाइत्थं अण्णेकंइसमुक्कसिणारिहं समुक्कसियव्वे णस्थियाइत्थकंइ अण्णेसमुक्क  
 सिणारिहं सो चंच समुक्कसियव्वे, तंसिचणं समुक्कट्टंसि परोवएज्जा दुसमुक्कट्टंते अज्जो ।  
 णिखिवाहि, तरसण्णिकिव्वं माणंसवां णत्थि केइछेवेवा परिहारेवा, नेतं साहसिप्रया

इस पदों पर स्थापन करना. नंतर वे उपाध्यायादिक साधुओं जिन को पदों पर बनाना हो उन की  
 परिसा करे जो वे पदों का निर्वाह करने जैसे जानने में आवे तो उने आचार्य की पदों पर स्थापन करे  
 और जो वे आचार्य के पद योग्य न हो तो जो कोई दूसरा आचार्य के पद योग्य होवे उस को वह  
 पद देवे. कदापि दूसरा पद योग्य तो हावे परंतु उन को आचाराग निशीथ का ज्ञान न हावे तो जिस की  
 मलापण आचार्य कर गये हैं उन को कहे कि यह पद हर योग्य होवे वही तक यह पदों आप संभालो. यों  
 कहे उन को आचार्यपते स्थापन करे और उन को आचारागादि का ज्ञान पदावे. वे पदकर होइयार होवे  
 तब उन आचार्य से कहे कि अब आचार्य पद इन के समत कीजिये. इतना कहते से भी जो वे पदों  
 नहीं छोडे तो गच्छ के साधु खुला कहे तुम पदों के योग्य नहीं हो तुमारी दुष्ट पदों है इन को यह पदों  
 समझकर दे दीजिये. इतना सुन जो वे प्रथम के आचार्य नवे आचार्य के सुप्रत पदों करे दे तो उन को

अहाकर्षणं णो अभूदिति तोसिं सन्वेसिं, तस्स तप्पच्चियं छेदेवा परिहारिन्ना ॥ १३ ॥  
 आयरिय उवञ्जाए उहायमाणे गच्छेज्जा अणयरं वदेज्जा अज्जो ! मएणं उहायंसि  
 समाणंसि अयं समुक्कासियव्वे सेय समुक्कासिणारिहे समुक्कासियव्वे णो  
 समुक्कासिणारिहे णो समुक्कासियव्वे अरिययाइत्थ अण्णेकेइ समुक्कासिणारिहे समुक्कासियव्वे,  
 णच्छिया इत्थ केइ अण्णेसमुक्कासिणारिहं सोचिव समुक्कासियव्वे, तं सिचणं समुक्कट्टंसि

कुछ भी मायःश्रित नहीं आवे और जो पदों सुप्रत नहीं करे तो उसे प्रायःश्रित छेद आवे तथा परिहारिक  
 तप आवे ॥ १३ ॥ कोई आचार्य उपाध्याय भोगवली कर्मोदय होने से विकारोदय को सहन नहीं करत  
 संयम धर्मकी लज्जा रखने के वास्ते गच्छको छोटकर जाती वक्त अपना शिष्य वर्ग में गंभीरतादि गुणयुक्त  
 जो शिष्य होवे उसे बोलाकर कहे अहो आर्य! में पाहकर्मकी तिगिच्छः-भीषथी करनेको दृक्पन्निग त्यागकर  
 जाता हू इसलिये तुम येरे गये पीद अमुकी परित्सा कजो वद आचार्य पदों के योग्य हो तो उमे आचार्य  
 उपाध्याय के पद पर स्थापन कराओ, वह नहीं हांते, अन्य कोई अपने गच्छे में इन पद के योग्य हए,  
 आवे उन को स्थापना, इस प्रकार कह कर वे जावे नव उन की अनुज्ञा प्रमाने पदों योग्य नापु को पदों  
 पर स्थापन करे. फिर वह पदों योग्य न निकले और वे प्रथम के अत्रार्य भोगवली कर्म भोग पीछे संदय

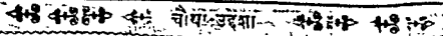
उवञ्जाय गिलायमाणे अणपरं वदेजा अजो । मणे कालगयसि समणसि अयंसमु-  
 कसियव्वे सेय समुक्कसिणारिह समुक्कसियव्वे सेयणो समुक्कसिणारिहे णो समुक्कसियव्वे,  
 अरिथयाइत्थे अण्णेकेइसमुक्कसिणारिहे समुक्कसियव्वे णत्थियाइत्थकेइ अण्णेसमुक्क  
 सिणारिहे सो चेत्र समुक्कसियव्वे, तंसिचणं समुक्कट्टसि परोवएज्जा दुसमुक्कट्टते अजो ।  
 णिखिवाहि, तस्सणंणिकिखव माणरसवां णत्थि केइछेवेवा परिहारेवा, जेतं साहम्मिया

इस पदों पर स्थापन करना. नंतर वे उपधायायादिक साधुओं जिन को पदों पर बनाना हो उन की  
 परीक्षा करे जो वे पदों का निर्वाह करने जैसे जानने में आवे तो उने आचार्य की पदों पर स्थापन करे.  
 और जो वे आचार्य के पद योग्य न हो तो जो कोई दूसरा आचार्य के पद योग्य होवे उसे उसे को वह  
 पद देवे, कदापि दूसरा पद योग्य तो होवे परंतु उन को आचाराग निशीथ का ज्ञान न होवे तो जिस की  
 भलागण आचार्य कर गये है उन को कहे कि यह पद कर योग्य होवे वहाँ तक यह पदों आप संभालो, यों  
 कहे उन को आचार्यपने स्थापन करे और उन को आचारागादि की ज्ञान पदावे, वे पद कर होशयार होवे  
 तब उन आचार्य से कहे कि अब आचार्य पद इन के समत कीजिये. इतना कहने से भी जो वे पदों  
 नहीं छोड़े तो गच्छ के साधु खुला कहे तुम पदों के योग्य नहीं हो तुमारी दुष्ट पदों है इन को यह पदों  
 समझकर दे दीजिये. इतना सुन जो वे प्रथम के आचार्य नवे आचार्य के समत पदों कर दे ता उन को

अहंकारव्यंणं णो अब्भूट्टेति तोत्तिं सन्वेसिं, तस्स तत्पचियं छेदेवा परिहारया ॥ १३ ॥  
 आयरेय उवञ्छाए उहायमाणे गच्छेज्जा अण्णयरं वदेज्जा अज्जो ! मएणं उहायंसि  
 समाणंसि अयं समुक्कासियव्वे सेय समुक्कासिणारिहे समुक्कासियव्वे णो  
 समुक्कासिणारिहे णो समुक्कासियव्वे अरिययाइत्थ अण्णेकेइ समुक्कासिणारिहे समुक्कासियव्वे,  
 गच्छिया इत्थ केइ अण्णेसमुक्कासिणारिहे सोचिव समुक्कासियव्वे, तं सिचणं समुक्कट्टेसि

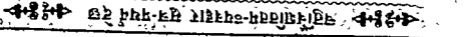
कुछ भी प्रायः श्रित नहीं आवे और जो पदवी सुप्रप्त नहीं करे तो उसे प्रायः श्रित छेद आवे तथा परिहारिक  
 तप आवे ॥ १३ ॥ कोई आचार्य उपाध्याय भोगवली रूपोदय होने से विकारोदय को सहन नहीं करत  
 संयम धर्मकी लज्जा रखने के भासने गच्छको छोटकर जाती वक्त अपना विषय बर्णों में गर्भायतदि गुणपुरु  
 जो क्लिष्य होवे उसे बोलकर कहे अहो आर्षो में मोहकर्मकी तिगिच्छः-भीपथी करनेको द्रव्यभिग स्वागकर  
 जाता है इसलिये तुम परे गये पीद अमुककी परिशा कज्जो वर आचार्य पदवी के योग्य हो तो उसे आचार्य  
 उपाध्याय के पद पर स्थापन करेगा, वह नहीं हांते, अन्य कोई अपने गच्छे में इन पद के योग्य रहे,  
 आवे उन को स्थापना, इस प्रकार कह कर वे जावे नव उन की अनुज्ञा मंगाने पदवी योग्य माधु को पदवी  
 पर स्थापन करे फिर वह पदवी योग्य न निकले और वे प्रथम के आचार्य भोगवली कर्म भोग पीछे मंदप

परोवएजा दुसमुकट्टे अजो ! णिखिखवाहिः तरसणं णिखिखवमाणसत्वा णत्थिके  
 इछेदेवा परिहारेवा, जे तं साहम्मिया अहाकप्पेणं णो अब्भुट्टेति तेसिं सत्वेसिं तरस  
 तप्पत्तियं छेदेवा परिहारेवा ॥ १४ ॥ आयरिय उवज्जाएय सरमाणे परं चउरायाओ  
 पचरायाण कप्पगं भिक्खू णो उवट्ठावेति कप्पाए अट्थिया इत्थसैकइ माणजिजे  
 घारुन करे तो पूर्वोक्त सूत्र प्रमाणे तीन वर्ष बाद उन को ज्ञान निर्धिकार चित्त देख पहिले स्थापन किये  
 आचार्य से कहें कि यह पट्टी आप पीछी उन को दे दो, जो वे अपने खुशी से उन को पट्टी दे दें तो  
 मायश्चित्त के अधिकारी नहीं होंगे, परंतु वे पट्टी नहीं देंगे तो-उन को खुछा साझु कहें की तुमारी दुष्ट  
 पट्टी हे तुम पट्टी योग्य नहीं हो, इसलिये अहो आर्य ! यह पद छोड़ दो, इतना कहने से यही पट्टी का त्याग  
 नहीं करते उस छेद का अर्थवा परिहारिके तप का मायश्चित्त अर्थ ॥ १४ ॥ आचार्य उपाध्याय का  
 शिष्यादि उट्टाण करने योग्य हुआ अर्थात् दीक्षा लिये बाद सात दिनादिका व्यतीत होगया वह मतिक्रमण  
 साधु समाचारी से वाकेफ भी होगया परंतु उस को जानते उपस्थान नहीं करावे छजीवनी मुनाकर  
 पहावतराणण नहीं करे चार रात्रि तथा पांचरात्रि उपरांत काल उल्लघन करे तो आचार्य मायश्चित्त के  
 अधिकारी होंगे, कदाचित्त पिता पुत्र श्रेष्ठ गुमास्ते राजा सुमत्त साथ दीक्षालो हो और बुद्धी की प्रवत्यता  
 कर पुत्र-गुमास्ता नोकर प्रथम प्रतिक्रमणदि अभ्यास करले और पिता श्रेष्ठ राजादि के बुद्धी की पंडता



कष्पागे, णत्थियाइ से केइछेदेवा परिहारैवा णत्थियाइ से केइमाणजिजे कप्पति  
 सेसंतराच्छेदेवा परिहारवा ॥१५॥ आयरिय उवज्जाएय असरमाणे परचओरायाओ  
 पंचरायाओ कष्पागे भिक्खूणे उवट्ठवेति कप्पाए, अत्थियाइ से केइमाणजिजे  
 कष्पागे णत्थियाइ, से केइछेदेवा परिहारैवा, णत्थियाइ से केइमाणजिजे, कप्पति सेसं

कर अभ्यास नहीं कर सके. तब पुत्रादि को प्रथम उत्थान करावेतो वह दीक्षा वृद्ध होवे पितादि उसे वंदना  
 करे जिस से व्यवहार की अशुद्धता विरुद्धा देखाली हो, जेष्ट का अपमान होने से संयमादि गुन की हानी  
 का संभव हो तो जहां तक पिता श्रेष्ठ राजादि को प्रतिक्रमणादि नहीं आवे तहां तक ५-१०-१५ रात्रि  
 पर्यन्त लघु को उठान नहीं करे तो वे आचार्यादि मायःश्चित्त के परिहार के अधिकारी नहीं होते हैं  
 उन को मायःश्चित्त नहीं आता है ॥ १५ ॥ आचार्य उपध्याय के पास का साष्टु उक्त प्रकार उपस्थान  
 करने योग्य हुआ और उस को आचार्य प्रमाद के वश हो भूलजाय चार पांच रात्रि उछयन कर उत्थान  
 नहीं करे तो वे आचार्य जितनी रात्रि तक उत्थान नहीं करे उतनी रात्रि का छेद प्रायःश्चित्त पावे. परंतु  
 उक्त प्रकार ही पितादि के साथ ही दीक्षा ली हो उन को प्रतिक्रमादि आवे वहां तक ५-१०-१५ रात्रि  
 बाद सूत्रार्थ का प्राप्ती के लिये उत्थान नहीं करे वे प्रथम बड़े को पहावे फिर दोनों को साथ  
 ही उत्थान करे तो वहां भूल हुए आचार्य को भी किसी प्रकार का छेद नहीं आवे. परंतु पितादि कोई



सुत्र

अर्थ



सारा छेदे ॥ १६ ॥ आर्यरिय उन्नद्धाण्य सरमाणवा असरमाणवा परंदसराय कप्पाता कप्पांगं भिक्खुणो उवहुवेति कप्पाए, अत्थिपाइं सेकइं साणणिज्ज कप्पांगं णच्छिथाइं से केइछेदेवा परिहरवा जाव कप्पाए संवेच्छेदं तरसं सत्पत्तियं णो कप्पति आर्यरियत्तंवा उवद्धायत्तंवा पवत्तितंवा धेरत्तंवा गणित्तंवा गणावच्छेइयत्तंवा, उद्विसित्तंवा धरित्तंवा ॥ १७ ॥ भिक्खुगणाओ अवक्कमं उससं वहा वनाने योग्यं नहीं होवे और विना कारन प्रमाद के वश भूलकर उत्थान भोग को जितनी रात्रि पर्यन्त उत्थान नहीं करे उतनी ही रात्रि का उन को छेद आवे ॥ १६ ॥ आचार्य उपाध्याय प्रमाद वश जब उत्थान करने-गहा प्रनारोपन का सतवा दिन चार गहने अथवा छ गहने के दिन का स्मरण नहीं करे और जिस वक्त उत्थान कर सके नहीं उस वक्त उस का स्मरण [ याद ] करे तो वे आचार्य प्रायः श्रुत के अधिकारी होते हैं. इस लिये सूत्रार्थ प्राप्त हुवे सधु को योग्यता और काल प्राप्त हुवे तुरंत उत्थापना करना कस्त्रता है. परंतु जो पितादि जेष्ठ के कारण उत्थान नहीं करे तो प्रायः श्रुत नहीं, विना कारण प्रमाद के वास उत्थाना नहीं काने के काल में उत्थापन करने का स्मरण करे और उत्थापन करने के काल में स्मरण नहीं करे चार पांच रात्रि उरान जितनी रात्रि निकल्ले उतनी रात्रि का छेद का प्रायः श्रुत उन आचार्य को आवे. ऐसे आचार्य को एक वर्ष पर्यन्त—१ आचार्यकी, २ उपाध्यायकी, ३ प्रवृत्तकी, ४ स्थविरकी, ५ गणित्तकी, ६ गणावच्छेदककी पद्दी पर स्थापन करना

क्षणगणं उत्रमंपजित्ताणं विहरंजा, तंच केद साहस्रिमया पभिजा तं वदेजां किं  
 अत्रो ! उत्रमंपजित्ताणं विहरंति, जे तस्य सव्वराडणिए तं वदेजा-अहं भंते। करम-  
 कप्पाए जे तस्य सच बहुस्सुए तं बह्ज्जावा जहा स भगवं वखति तरम आणाउवा-  
 यवयण निदंस चिट्ठिस्सामि ॥ १८ ॥ बहवे सहस्रिमया इच्छेज्जा एगयओ अमिणि-

नहीं करता है ॥ १७ ॥ अब ज्ञानाभ्यास निमित्त अन्य गच्छ दो ग्रहण करने का अधिकार करते हैं।  
 कोई साधु बृहद्ब्रह्म के अनुसार स्वयं के गच्छ में ज्ञानदि की प्राप्ति का अपाय जानकर अस्य  
 गच्छ को अगाकार कर विचरे, तप एम का कोई दूसरा स्वर्घर्षिक साधु देखकर प्रश्न करे कि  
 क्या आर्य ! किसे अंगोकार कर विचरने हो ? तब वह साधु जिम गच्छ में रहा हावे उय गच्छ में  
 जा बड़े साधु हावे उन का नाम लेकर कह कि, अहो भगवं ! मैं प्रभु की नेत्राय में हूँ तब उन  
 पूछने वाले को संदंष्ट उत्पन्न होवे कि यह ज्ञान ग्रहण करने पर्याप्त है और वह विशेषज्ञ नहीं है, तब  
 पूरा तब से रहे कि यहाँ मेरी गर्ज किम प्रकर भूगी होगी ! तब वह साधु पुन तनये पूछे कि अहो भगवान !  
 मैं किम की नेत्राय में हूँ ? तब वे उन सम्प्रदाय के तत्केफगार रहे कह कि अमुकं बहूयुथी गीतार्थ  
 उन की नेत्राय में रही जिस में तुमागभनेर्थे पूर्ण होवे, तब वह कहे आपकी आज्ञा प्रपन्ने ही करुणा, उन  
 की आज्ञा प्रदंष्ट अनीकार कर विचरे ॥ १८ ॥ बहुत से साधर्षिक साधुओं अभिशाचारी एक

चारियं चारए णोण्हं कप्पति थरे अणापुच्छिता एगयतो अभिन्निचारियं  
 चारए कप्पतिणं थरे आपुच्छिता एगयत्ता अभिन्निचारियं चारए,  
 थरायण सवितरेज्जा एवणं कप्पति एगयत्तो अभिन्निचारियचारए, थरायण णो  
 विधरंज्जा, एण्हं णो कप्पतिएगयओ अभिन्निचारियं चारए, ज तत्थ थरोहिं  
 अत्रिदिणं एगयओ अभिन्निचारियं, चारए सेसंतराच्छेवा परिहारवा ॥ १९ ॥  
 चारया पविट्ठे भिक्खुं जाव चउराइंवा पंचराइंवा थरेपासेज्जा सच्चव आलायणा  
 सच्चवपडिक्कमणा, सच्चवउगहस्स पुव्वाणुणावणणा चिट्ठंति, अहालंद मविउग्गहे ॥ २० ॥

होकर विचरना इच्छे परंतु उनको स्थविर को विना पुछे सब एकत्र मिलकर विचरना नहीं कल्पता है, स्थविर  
 को पूछकर एकत्र होकर विचरना कल्पता है, यदि सब माधुओं के एकत्र विचरने की स्थविर आज्ञादेतो  
 सब भले होकर विचरे और जा स्थविर ना कहतेो सब साधुओं को एकत्र होकर विचरना  
 नहीं कल्पता है कदाति स्थविर की विना आज्ञा अभिन्नचारी एकत्र होकर विचरने  
 को जिनने दिन उन की आज्ञा विना विहार करे उतने ही दिनों का छेद या तप आवे ॥ १९ ॥  
 स्थविरको आज्ञाविना विचरनेवाला साधु एक दो तीन चार पांच रात्रि आज्ञाकेवाहिर रहा उसकी प्रलोचना  
 मत्थस्वरूपम उसका मतिक्रमण भी मत्थस्वरूपसे करै प्रायाः श्रित ले शुद्धहावे, पहिलेकी तरह आज्ञामें रहे  
 हथलीकी रेखा मूरे इतने कालभी आज्ञाविना नरहे ॥ २० ॥ विहारकरने प्रवर्तहुआ साधु

चरियापविष्टे भिक्षु परं चउरायंत्रा पंचरायाओ श्रेपासेजा पुणो आलोएजा पुणो  
 पडिन्नामेजा पुणो छेयस्म परिहारवा उवट्टाएजा भिवखूभावस्स अट्टाए  
 दाच्चंपि उरगहे अणुणव्यव्येसिया कप्पति से एवं वादित्तए अणुजाणह भंते !  
 मित्तंमिच्चोगहं अहलदधुवसंणितितं णेच्छइयं जंविडडियं ततो पच्छा कायसंफासं  
 ॥२१॥ चरियाणियट्ट भिवखू जाव चांआरायं पंचहायाओ श्रेपासेजा सच्चेव आलो-

चार पांच रात्रिमे अधिक अलग रहकर स्थविर के पास पुनः आकर आलोचन करे पुनः  
 पतिक्रमण करे पुनरपि जो वे छेद परिहार में उपस्थापितसे अंगीकार करे, अर्थात् प्रायःश्रक्त देवे उसे  
 ग्रहण करे, माधु अपन मंगम भाव के निर्वाह के लिये, आज्ञा भंग रूप चोरों के पाप से डरकर तीसरे  
 ज्ञान का परीक्षण करने के लिए दूरी नक्त अनुज्ञा-अवग्रह धारन करे, फिर हरेक कार्य आज्ञा ग्रहण कर  
 के, जब २ कागोत्पन्न होने तब २कहे कि, अहो भगवन्! आपकी आज्ञा है मेरे को अमुक कार्य की इच्छा है,  
 इस प्रकार आज्ञा रूपा अवग्रह में रहना कल्पना है, परंतु हाथ की रेखा सूके इतनी देर भी आज्ञा विना  
 न रहे. मन का आज्ञा को अच्छी जाने, वचन कर प्रमान करे. और काया कर स्पर्शन कर ॥२१॥  
 विहार करने में निवृत्त हूँ सधु चार पांच रात्रि उपरांत फिर स्थाविरको देवे तब पुनरपि आलोचनकरे  
 पुनरपि पतिक्रमण करे जो दोपसेवन किया उपका पुनरपि छेद अंगीकारकरे यावत् आज्ञामें रहे, हाथकी

यगा जाय चिट्टति अहालंदमवि उगहं ॥ २२ ॥ चरियाणियहे भिक्खु चउराय  
 पंचरायाओ थेर पासेजा पुणो आलोएजा पुणो पडिक्कमेजा पुणोच्छेय परिहारम्म  
 उयट्टाएजा कप्पतिने, एवं वदिताए अणुजाणह भंते! मिउग्गहं अहालंद धुंणितियं  
 णेउइयं जांविउट्टियं ततो पच्छा कायमफामं भिक्खुभावम्म अट्टाए दोच्चं पि  
 कोग्गहं अणुणत्रेयन्वेसिया ॥ २३ ॥ दासाहेम्मिया एग्गथओ विहरंति तज्जहांसेह्य  
 रायणिएय, तत्थसेहतराए अपलिच्छिण्णे रायणिए पलिच्छिण्णे, तत्थसेहतराण

रेखा सूके उतनी देरभी आज्ञाके बाहर रहे नहीं ॥ २२ ॥ विहार से निवृत्ता सायु चार  
 पांच रात्रि ऊपरति स्थविर का दख तो पुनः आलोचना प्रतिक्रमण करे. पूरुर्नापि छेद परिहार प्रअण करे.  
 इन से इस प्रकार कह कि-अहाँ मगवात ! आज्ञा है. आप की अग्रग्रह में रहें. यों सदैव आज्ञा  
 में रहना कल्पता है. परंतु श्येली की रेखा सूके इतनी देर भी विना आज्ञा गइना नही कल्पता है यह  
 अपन पूज्य स्थविर कि आज्ञा विना मन वचन काया के योग कर क्षणमात्र भी रहने में निवृत्ता है अर्थ त  
 स्थविरकी आज्ञा होते ही तत्काल मन में बल्ली जाने वचन से प्रमान को काया कर स्पर्श कार्य निपजारे  
 अज्ञ रूप व्रत का स्वाक्षण करने पवने, मंयप भाव की रक्षा के लिये दूसरी वक्त स्थविर की आज्ञा  
 भांग कर रहे ॥ २३ ॥ दो संधर्षिक माधुओं एकछे एककर विचरते है तद्यथा-एक तो धिज्य और दूसरे

अर्थ

रायणिय उवसंपजितव्वे; भिक्खोत्रवायंदलीति कप्पागं ॥ २४ ॥ दोसाहम्मिया  
एगयतो त्रिहरंति तंजहा-सेहेय रायणिण्य, तत्थ रायणिण्य पलिच्छिणे सेहतराए  
अपलिच्छिणे इच्छा रायणिण्ये सेहतरागं उवसंपजेजा, इच्छा नो उवसंपजेजा,  
इच्छा भिक्खोत्रवायं दलाति कप्पागं इच्छाए णो दलाति ॥ २५ ॥ दो भिवसूणा

रत्नाधिक-गुरु: इन में शिष्य के तो श्रुत शिष्य का परिचार बहुत होने और रत्नादिक-गुरु के श्रुत शिष्य  
का परिचार थोड़ा होने। तब बड़ शिष्य श्रुत शिष्यादि का अधिक परिचारवाला होकर भी रत्ना-  
धिक गुरु की आज्ञा अंगीकार कर विचटना कल्पना है; तथा रत्नाधिक गुरु की समीप रहा हुआ भी  
बहुत भेदा भक्ति कर अन्य भिक्षुओं का साधुओं का संविभंग कर। नियम-वैयाच कर आहार पानी  
आदी खपती वस्तु लक्ष्मण देवे, इत्यादि। उन की योग्यता करनी कल्पता है ॥ २४ ॥ यह शिष्य आश्रय  
कहा ऐसे गुरु आश्रय करते हैं—दो पाथर्षिक साधुओं एवम् होकर विचरते हैं तथ्या-एक शिष्य और  
एक रत्नाधिक-गुरु, इनमें गुरु के तो श्रुत शिष्य का परिचार बहुत है और शिष्य के श्रुत शिष्य का  
परिचार अधिक नहीं बढ़ा। इसमें जो गुरु की इच्छा होने तो उस शिष्य को अंगीकार कर पास रखते  
और इच्छा न होने तो अंगीकार नहीं करे, पास नहीं रखे, इच्छा होने तो आहार पानी ला देना आदि  
वैयाच करे इच्छा न होने तो वैयाच नहीं करे, आहार पानी आदि नहीं ला दे ॥ २५ ॥ अब बसंत

एगतो विहरंति णोणं कप्पति अणमणस्स उवसंपजिन्ताणं विहरित्तए, कप्पतिण्ण  
आहारातिणियाए अणमण उवसंपजिन्ताणं विहरित्तए ॥ २६ ॥ एवं दो  
गणवच्छेत्तिया ॥ २७ ॥ दो आयरिय उवज्झया ॥ २८ ॥ वहवे भिक्खुणो एगयतो

विहरंति णोणं कप्पति अणमणस्स उवसंपजिन्ताणं विहरित्तए, कप्पतिण्ण

होकर नहीं रहने बहल कहते हैं. दो साधु एकत्र होकर विचरते हैं उन में दोनों परस्पर छोटे बड़े बने  
बिना बराबरी के होकर रहना नहीं कल्पता है. परंतु दोनों में से योग्यता प्रमाने एक बड़ा और दूसरा  
छोटा इस प्रकार बनकर बंदना विवहार सय गुरु शिष्यरूप आचारविधी युक्त रहना कल्पता है ॥ २६ ॥  
ऐसे ही दो गणावच्छेदक मिलकर भी जो विहार करते दोनों को बराबर रहना नहीं कल्पता है. परंतु  
योग्यता प्रमाने छोटे बड़े बन उन की व्यवहार सांचवन कर रहना कल्पता है २७ ॥ ऐसे ही दो आचार्य  
तथा उपाध्याय मिलकर भी जो विचरते उनको भी बराबरी रहकर विचरना नहीं कल्पता है परंतु योग्यता  
प्रमाने छोटा बड़ा बन छोटे बड़े का व्यावहार रल विचरना कल्पता है ॥ २८ ॥ अब बहुत साधु आदि  
आश्रय कहते हैं ॥ बहुत से साधुओं एकठे होकर विचरते हैं. उन को परस्पर अंगीकार कर  
अर्थात् परस्पर छोटे बड़े बने बिना विचरना रहना नहीं कल्पता है. परंतु सब साधुओं

आहारातिणियाए अणमणसस उवसंपज्जिचाणं विहरित्तए ॥ २९ ॥ बहवे  
 गणावच्छेइया एगयतो विहरंति, णोणं कप्पति अणमणसस उवसंपज्जिचाणं  
 विहरित्तए, कप्पतिए आहारातिणीयाए अणमणसस उवसंपज्जिचाणं विहरित्तए  
 ॥ ३० ॥ बहवे आयरिय उवज्झाया एगयतो विहरंति, णोणं कप्पति अणमणसस  
 उवसंपज्जिचाणं विहरित्तए, कप्पतिणं आहारातिणीयाए अणमणसस उवसंपज्जिचाणं  
 विहरित्तए ॥ ३१ ॥ बहवे भिक्खूणां, बहवे गणावच्छेइया बहवे आयरिया  
 उवज्झाया एगतो विहरंति, णोणं कप्पति अणमणसस उवसंपज्जिचाणं विहरित्तए,

आपस में योग्यता मयने एक को बडा स्थापन करे दूसरे उन से छोटे तीसरे उन से छोटे यों सब होकर  
 एकेक का विनय साचवन कर विचरना कल्पता है ॥ २९ ॥ बहुत गणावच्छेदक एकत्र हो विहार कर  
 परस्पर अंगीकार कर छोटे बड़े बने विना साथ विहार करना नहीं कल्पता है. परंतु योग्यता मयने छोटे  
 बड़े बने परस्पर विनय विहार साचवन करते विचरना कल्पता है ॥ ३० ॥ बहुतसे आचार्यों बहुतसे  
 उपाध्यायों एकठे होकर विचरते हैं, उन को भी सब बराबरी के रहकर विचरता नहीं कल्पता है, परंतु  
 छोटे बड़े बने एकेक को बंदन विवहार साचवन करते विचरना कल्पता है ॥ ३१ ॥ अत्र समुच्चय कहते हैं,  
 बहुतसे साधु बहुत से गणावच्छेदक, बहुत से आचार्य तथा उपाध्याय एकत्र भेले होकर विचरते हैं. उन



वासावासं वत्थए, कप्पति पविचिए कप्पइहं आहारातिणीयाए आणमणस्स उवसंप-  
जित्ताणं विहरित्ताए, हेमंतं गिम्हासु ॥ तिवेमि ॥ विवहार सुयरसं चउत्थो  
उहेसो सम्मत्तो ॥ ४ ॥

को परस्पर अंगीकार कर सब एक सरीखे बराबरी के बनकर विचरना नहीं कल्पता है. जैसे ही चतुर्मास करना भी नहीं कल्पता है. परंतु साद्वी में किसी को पवित्रनी-बही साद्वी स्थापन कर और साधुओं में एकको रत्न-धिक (गुरु) बनाकर नव छोट बड धनुक्रमणसे व्यवहार साचवन कर सीयाले उन्हाले के चार महिने में विचरना कल्पता है ॥ इति व्यवहार सूत्र का चौथा उदेशः संपूर्ण ॥ ४ ॥

# ॥ पंचम उद्देश ॥

नौकल्पति पवित्राणि अस्मन्नितायाए हेमत गिम्हासु चारए ॥ १ ॥ कल्पति पवि-  
 सिणीए अप्तत्तियाए हेमत गिम्हासु चारए ॥ २ ॥ ना कल्पति गणावच्छेदणीए  
 अप्तत्तियाए हेमत गिम्हासु चारए ॥ ३ ॥ कल्पति गणावच्छेदणीए अप्तत्तियाए  
 हेमत गिम्हासु चारए ॥ ४ ॥ नौ कल्पति पवित्रिणीए अप्तत्तियाए वासावासं वत्थाए  
 ॥ ५ ॥ कल्पति पवित्रणीए अप्तत्तियाए वासावासं वत्थाए ॥ ६ ॥ नौ कल्पति गणावच्छेदणीए

पवित्रणी (गणपतिनी आदिगण) को एक आप और दूसरी गार्धी यों दो ठणे से शीतकाल ऊष्ण  
 काल में ग्रामानुग्रह विचरना नहीं कल्पता है ॥ १ ॥ परंतु पवित्रिणी एक आप और दो दूसरी आदिगण  
 को एक आप और दो दूसरी आदिगणों से शीत काल ऊष्ण काल में विचरना नहीं कल्पता है  
 ॥ २ ॥ परंतु एक गणावच्छेदकनी और तीन दूसरी आदिगणों से चार ठाना से विचरना कल्पता है ॥ ४ ॥  
 पवित्रिणी और दो दूसरी आदिगणों से तीन ठाने से चतुर्भसि करना नहीं कल्पता है ॥ ५ ॥ परंतु एक  
 आप पवित्रिणी और तीन दूसरी आदिगणों से चार ठाने से चतुर्भसि करना कल्पता है ॥ ६ ॥ गणाव-

वासावासं वर्यणं, कल्पति पवित्रिणं आहारातिणीयाए अणमणस्स उवसंप-  
 जिचाणं विहरिताए, हेमंतं गिम्हासु ॥ तिवेमि ॥ विवहार सुजरसः चउत्थो  
 उहेसो सम्मत्तो ॥ ४ ॥

को परस्पर अंगीकार कर सब एक सरीखे बराबरी के बनकर विचरना नहीं कल्पता है, तैसे ही चतुर्मान  
 करना भी नहीं कल्पता है, परंतु साद्वी में किसी को पवित्रनी-बन्धी साद्वी स्थापन कर और साधुओं में  
 एकको रत्न-धिक (गुरु) बनाकर नव छोट बट अनुक्रमणसे व्यवहार साचवन कर सीयाले उन्हाले के नार  
 महिले में विचरना कल्पता है ॥ इति व्यवहार सूत्र का चौथा उद्देशः संपूर्ण ॥ ४ ॥

५० प्रकाशक-राजाप्रहादुर बाबा मुखदेवसहायजी बालाप साद श्री

सुत्र

अर्थ

## ॥ पंचम उद्देशः ॥

नो कल्पति पञ्चमिण्ये अप्यत्रितयाए हेमत गिम्हासु चारए ॥ १ ॥ कल्पति पञ्चमिण्ये अप्यत्रितियाए हेमत गिम्हासु चारए ॥ २ ॥ ना कल्पति गणावच्छेदणीए अप्यत्रितियाए हेमत गिम्हासु चारए ॥ ३ ॥ कल्पति गणावच्छेदणीए अप्यत्रितियाए हेमत गिम्हासु चारए ॥ ४ ॥ नो कल्पति पञ्चमिण्ये अप्यत्रितियाए चासावासं वत्यए ॥ ५ ॥ कल्पति पञ्चमिण्ये अप्यत्रितियाए चासावासं वत्यए ॥ ६ ॥ नो कल्पति गणावच्छेदणीए

पञ्चमिणी (गणपति की आज्ञा) को एक भाष और दूसरी वाची यों दो ठग से शीतकाल अण काल में ग्रामानुग्राम विवरना नहीं कल्पता है ॥ १ ॥ परंतु पञ्चमिणी एक आप और दो दूसरी आज्ञा का वाण से शीत काल अण काल में ग्रामानुग्राम विवरना कल्पता है ॥ २ ॥ गणव्यच्छेदकनी को काल परंतु एक गणावच्छेदकनी और तीन दूसरी आज्ञा यों चार टाना से विवरना नहीं कल्पता है ॥ ३ ॥ पञ्चमिणी और दो दूसरी आज्ञा यों तीन टाने से चतुर्मास करनी नहीं कल्पता है ॥ ४ ॥ पञ्चमिणी और तीन दूसरी आज्ञा यों चार टाने से चतुर्मास करना कल्पता है ॥ ५ ॥ गणाव-

वासायासं वत्थाए, कल्पति पवित्रिए कल्पइण्ह आहारातिणीयाए अणमणस्स उवसंप-  
 जिचाणं विहरिताए, हेमंत गिम्हासु ॥ तिवेमि ॥ विवहार सुवरस चउत्थो  
 उहेसो सम्मत्तो ॥ ४ ॥

को परस्पर अंगीकार कर सब एक सरीखे बराबरी के बनकर विचरना नहीं कल्पता है, जैसे ही चतुर्मास  
 करना भी नहीं कल्पता है, परंतु साद्वी में किसी को पवित्रनी-बही साद्वी स्थापन कर और साधुओं में  
 एकको रत्नाधिक (गुरु) बनाकर सब छोट बड़ अनुक्रमणसे व्यवहार साचवन कर सीयल्ले बन्हाले के चार  
 महिने में विचरना कल्पता है ॥ इति व्यवहार सूत्र का चौथा उद्देशा संपूर्ण ॥ ४ ॥

७७ कृष्णक-राजावहादुर बाबा मुखर्जिवसहायजी बालापसादजी

सूत्र

अर्थ

उत्रसंपन्नियवासिया, णस्थिया इत्थकाई अण्णाउत्रसंपज्जणारिहा, अप्पणो कप्पाए असमत्ता एवं से कप्पई एगरातियाए पडिमाए जणं २ दिसि अण्णओ साहम्मिणिओ विहरंति तण्णं २ दिसि उवल्लित्तए, नां से कप्पति तत्थ विहारंत्थच्चियं वत्थए, कप्पति से तत्थ कारण वत्थियं वत्थए, तेसिचणं कारणसि णिट्ठियंसि परोवइज्जा वसाहिणं अज्जो ! एगरायंवा दुरायंवा एवंसे कप्पति एगरायंवा वत्थए, नां से कप्पति एगरायाओवा दुरायंवा परं वत्थए, जं तत्थ एगरायाओ दुरायाओवा परं वसति सेसंतरा

वहाँ जो कोई साध्वी आचारांग नशीय की जान हो उस को 'वही' आँजिका के स्थान, स्थापन कर विचरना कल्पता है. और वहाँ जो कोई उक्त गुण धारक साध्वी न हो तो उन साध्वी को जिस २ दिनों में दूगरी साध्विनी विचरती हो उस २ दिनों में जाना कल्पता है. विहार करते हुए रास्ते में विशेष काल रहना नहीं कल्पता है. परंतु स्वयं के शरीर आश्रय या 'दूपरे' के भेवा आश्रय कोई कारण हो जाय तो रहना कल्पता है. कारण पूर्णहुवे बाद बहारही आँजिका उस आँजिका को कहे कि अहो आर्या! एक दो रात और भी रहो, तो वहाँ एक दो रात्रि रहना कल्पता है. एक दो रात्रि से ज्यादा रहना नहीं कल्पता है. जो एक दो रात्रि से अधिक रहे तो जितनी रात्रि रहे, उतनी रात्रि का छेद परिहार

\* काशीक राजाबहादुर लाला मुखदेवसहायजी आलामसादक

अप्यचउत्थिए वासावासं वत्थए ॥ ७ ॥ कप्पति गणावच्छेइणीए अप्पंपंचमाए  
 वासावासं वत्थए ॥ ८ ॥ से गामंसिवा जाव संनिवेसंसिवा बहुणं पविस्तिणीणं  
 अप्पत्तत्तियाणं बहुणं गणावच्छेइणीणं, अप्पचउत्थीणं कप्पति हेमंत-गिम्हासु चारए  
 अणमण णिरसाए ॥ ९ ॥ सेगामंसिवा जाव संनिवेसंसिवा बहुणं पविस्तिणीए  
 अप्पचउत्थीणं बहुणं गणावच्छेइणीणं अप्पंपंचमाणं कप्पति वासावासं वत्थए  
 अणमणरसाणिस्साए ॥ १० ॥ गामाणुगामं दुइज्जमाणी निगंत्यीयं जंपुरओकट्टु त्रिहेरजा,  
 साय आहच्चा वीसुंभेज्जा अस्थिया इत्थ काइअणाउवसेंपज्जिणाणंरिहा, कप्पतिसा

च्छेइकनी एक आप और तीन दूसरी यों चार ठाने से चतुर्मास करना नहीं कल्पता है ॥७॥ परंतु एक आप गणा-  
 वच्छेइकनी और चार दूसरी आठिका यों पांच ठाने से चतुर्मास करना कल्पता है ॥ ८ ॥ ग्राम नगर यात्र  
 मत्तै वंश में बहुत पविषनी एक आप और दो दूसरी यों तीन साधी, बहुत गणावच्छेइकनी एक आप  
 और तीन दूसरी यों चार साधी इस प्रकार शीत काल ऊष्ण काल में परस्पर नेश्राय ग्रहण कर विचरना  
 कल्पता है ॥ ९ ॥ ग्राम नगर यात्र सबै वंश में बहुत प्रवर्तनी और तीन साधी यों चार ठाना से, बहुत  
 गणावच्छेइकनी और चार साधी यों पांच ठाने से चतुर्मास कर परस्पर नेश्राय में रहना कल्पता है ॥१०॥

उत्सवपञ्चिवासीया, णत्थिमा इत्थिकाई अण्णाउत्सवपञ्जणारिहा, अप्पणो कप्पाए  
 असमत्ता एवं से कप्पई एगरातियाए पडिमाए जणं २ दिसि अण्णओ साहम्मिणिओ  
 विहरंति तण्णं २ दिसिं उवल्लित्तए, नो से कप्पति तत्थ विहारंत्तच्चियं वत्थए, कप्प-  
 ति से तत्थ कारण वत्तियं वत्थए, तेसिचणं कारणंसे णिट्ठियंसि परेविइज्जा वसाहिणं  
 मज्जो ! एगरायंवा दुरायंवा एवंसे कप्पति एगरायंवा दुरायंवा वत्थए, नो से कप्पति  
 एगरायाओवा दुरायंवा परं वत्थए, जं तत्थ एगरायाओ दुरायाओवा परं वसति सेसंतरा-

वहाँ जो कोई साध्वी आचारांग नाशीय की जान हो उस को 'वही' आँजिका के स्थान-स्थापन कर  
 विचरना कल्पता है। और वहाँ जो कोई उक्त-गुण धारक साध्वी न हो तो उन साध्वी को जिस २  
 दिशा में दूरी साध्विनी विचरती हो उस २ दिशी में जाना कर्त्ता है। विदार करते हुये रास्ते में  
 विशेष काल रहना नहीं कल्पता है। परंतु स्वयं के शरीर आश्रय या दूरे के भेवा आश्रय कोई कारण  
 हो जाय तो रहना कल्पता है। कारण पूर्णहुवे बाद बहारही आँजिका को कहे कि ब्रह्मो आर्य!  
 एक दो रात और भी रहो, तो वहाँ एक दो रात्रि रहना कल्पता है। एक दो रात्रि से ज्यादा रहना  
 नहीं कल्पता है। जो एक दो रात्रि से अधिक रहे तो जितनी रात्रि रहे उतनी रात्रि का छेद परिहार



छेदे वा परिहारो वा ॥ ११ ॥ वासावानं पञ्जोसचेद् णिगंथीय जं पुः ओक्त्तु विहरंति  
 साय आह्वं वा सुभजा अस्थियाइच्छकडि अणा उवसंपज्जणारिहा, कप्पतिमा उवसं-  
 पज्जिएव्वासिया, णस्थिया इरथकाई अणा उवसंपज्जणारिहा, अप्पणो कप्पिए अमम-  
 साए एव् से कप्पति एगरातियाए पडिमा, जणं रे दिमि अण्णश्चा साहश्मणीआ  
 विहरंति तण्णं रे दिमि उवल्लित्तए, ना से कप्पति तत्थ विहारस्सिय वत्थए, कप्पति  
 से तत्थ कामणवत्तियं वत्थए, तेस्सिचणं कारणमि णिट्ठियांसि परोवइज्जा वमाहिणं  
 अज्जाः एगरायंवा वुरायंवा एव् से कप्पति एगरायथा वुरायंवा वत्थए, ना से कप्पति

प्रायः श्रित्ता जाता है ॥ ११ ॥ वर्षा काल चतुर्दश में रही हुई माध्वी जिस को अपिवाणी कर विचरे  
 वह कदाचित् प्रायव्य पूर्ण कर जय ना तहां दूरी कोई माध्वी आचारांग नीतीय सूत्र की जान हा  
 उम पद पर स्थाने योग्य हा उस कं स्थापन कर उम की आज्ञा में रहना कल्पता है और उम पद  
 योग्य कोई नहीं हावे ता उन माध्वी को जिन रे दिशा में अन्य साध्विनी होवे उस रे दिशा में विहार  
 करना कल्पता है परंतु उन की अन्य साध्विनिना त मिले वहां तक रास्ते में एक रात्रि से अधिक  
 रहना नहीं कल्पता है परंतु स्वयं के अरार में रोगादि कारण हो जावे या अन्य किसी कारणिक की  
 विषयव में रहना पडता रहे, कारण नियुने वाद नहीं रहे जो कदाचित् वहां रही आजिका कहे कि अहो

एगारायाओवा दुरायाओवा पुरं वत्थए, जंतत्थ एगारायाओवा दुरायाओवा परं वत्सति, संस  
 तराच्छेदथा परिहारेवा ॥ १२ ॥ पविस्त्रिणीय गिलायमाणी अणयरं वदेजा अजा !  
 मएण कालगयंसि समाणंसि अयं समुत्तसियव्वे सेय समुत्तसिणारिहे समुत्तसियव्वे,  
 सेयणोसमुत्तसिणारिहे णो समुत्तसियव्वं, अत्थियाइत्थकाई अण्णा समुत्तसिणारिहे  
 समुत्तसियव्वे, णत्थियाइत्थकाई अण्णा समुत्तसिणारिहे सो चेंव समुत्तसियव्वं, तेसिं

आर्य ! एक दो रात्रि और रहे, तो एक दो रात्रि और रहे, जो कदाचित् एक दो रात्रि उपरांत रहे  
 तो जिन्नी रात्रि रहे उननी का छुद आवे, प्रायःश्चित्त आवं ॥ १२ ॥ कोई बड़ी आर्जिका अत्यन्त  
 बदनी से पीडाती हुई अपना आयुष्य नजदीक जान कर पाप की गुणज्ञ शिष्यनी से कहे कि अहो  
 आर्या ! मेरे मृत्यु पाप बाद इन साधवी को इस पट्टी पर स्थापन करना, फिर वह अन्य आर्जिका वह  
 आर्जिका उत पट्टी याग्य है या नहीं इस प्रकार परिक्षा करके जो वह पट्टी योग्य होवे तो उसे उत पट्टी  
 पर स्थापन करे, और वह जो पट्टी देन योग्य न हो तो उस ही समुदाय में अन्य  
 कोई पट्टी यद्यप आचार्यांग नशीय की जान होती उगे उस पट्टी पर स्थपन करे, और उस वक्त  
 कोई भी पट्टी देने योग्य उत समुदाय में नहोवे पांतु कोई आर्जिका पट्टी देने योग्य आगे वन सकी  
 ऐसा हो ता, जो मृत्यु की बड़ी नाशोर्जिन को पट्टी पर स्थापन करने का कहें गइं उन को पट्टीपर

चणं समुक्कट्टंसि पगेवएजा दुसमकट्टंते अजा ! णिविखवाहि, तरसणं णिविखवमाण-  
 रमवा णत्थि केइच्छेदेवा परिहारेवा, जाओतंसाहम्मिणीओ अहाकप्पेणं णो अब्भु-  
 ङ्खति तेसिसव्वेसिं तस्स तपत्तियं छेदेवा परिहारेवा ॥ १३ ॥ पवित्तिर्णयं उहायमा-  
 णीओ अण्णयरंधएजा अजा ! मएणं उहायत्ताए समाणंसि अयंसमुक्कसिसियव्वे,  
 सेय समुक्कसिणारिहं समुक्कसियव्वे, सेय णो समुक्कसिणारिहे णो समुक्कसि-

स्थापन करे. और पट्टी के योग्य हो उस को आचारंगदि पढाकर पवीन पट्टी योग्य करे. वह योग्य हो  
 जने जब उस पट्टी धरनी से कहे कि यह पट्टी इसे संभलादो जो वह खुशी से उस पट्टी को  
 छोडदे तो उसे किसी प्रकार का मायःश्चित्त नहीं आवे. और इतना कहते ही जो पट्टी नहीं छोडे तो कहे-  
 कि तुमारी दुष्ट पट्टी है. यह पट्टी के योग्य है अहो अर्या ! तुम पट्टी छोडकर इनको देवो. इस प्रकार कहने  
 से वह पट्टी को छोड देनेतो उसको किसी प्रकार का छेद तथा मायःश्चित्त नहीं. और नहीं छोडे तो जितने  
 पट्टी को नहीं छोडे उतने ही दिन का छेद तप आवे ॥ १३ ॥ किसी बही साद्री को भोगावली  
 कर्मदय मोहको प्रवस्यतास मैथन मोहनी का उदय हुआ हो उसे सहन करने असमर्थ हो और अपने  
 मयम धर्म की छजा रखने संभौर्यतादि गुन धारक अन्य किसी साध्री को कहे कि मे द्रव्यसिग को छोड  
 मोहका उपचार करने जाती हू. इगळिये पीछे मे मेरे पदपर अमुकी को स्थापन करना. ऐसा कह कर

यव्ये, अस्थियाइत्थकाई अण्णासमुक्कसिणारिहे, समुक्कसियव्वे णत्थियाइत्थकाइ  
 अण्णासमुक्कसिणारिहे, सो चेत्र समुक्कसियव्वे तेसिचणं समुक्कट्टसि परो वएज्जा, दुसमु-  
 क्कट्टे, अज्जो! णिक्खिवाहिं तरसणं णिक्खिवामाणस्सवा; णत्थिकंइच्छंदा परिहारेवा, जाव तं  
 साहम्मिहणीओ अह्माकप्पणं णो अब्भट्टेति, तेसिं सव्वेसिं तरस्स तप्पतियं छेदेवा परिहारेवा  
 ॥१४॥ निग्गंथस्सणं णवट्टहर तरूणगरस्स आयार कप्पेणामं अज्झयणे परिभट्टेसिया  
 संयपाच्छियव्वे केणएणे कारणेणं अज्जो! आयार कप्पनामं अज्झयणं परिभट्टेसिया किं

वइ जावे. फिर जिस का नाम वह कहगइ उस की परिष्ठा करने मे जो वह पट्टी योग्य देखने मे न आवे  
 तो अन्य समुदाय में पट्टी के योग्य आजका देखकर पट्टी पर स्थापन करे. और कोई भी नजर नहीं  
 आवे तो वह पवित्रनी जाती वक्त कहगइ है उसे ही उस पट्टी पर स्थापन करे. और वह पट्टी का बराबर  
 निर्वाहन करे. तब अन्य कहे कि तुम इस पट्टी योग्य नहीं हो, तुमारी दुष्ट पट्टी है. इसे छांट दो. इतना  
 मन वह जो पट्टी को छांटदे तो उसे किसी भी प्रकार का प्रायश्चित्त नहीं आवे. और जो पट्टी को नहीं  
 छोडे तो जिसने दिन पट्टी नहीं छोडे उतने दिन का दीक्षा का छंद तथा परिहार प्रायश्चित्त आवे ॥१४॥  
 कोई निग्रन्थ माधु नवदीक्षित बाल वयवाला तथा तारुण अवस्था वाला आचारंग नीश्रिय को भूजगया  
 हो, उस को स्थविर पूछे कि अहो आर्य्य ? किस कारण से आचार. कल्प अभ्यान नशीत भूजगये वय. कुत

आत्राहेण प्यमाएणं? सेयवएजा णो आत्राहेणं पमाएणं, जाव जीवाए तरस तंप्पत्तियं  
 णो, कप्पत्ति आग्रियत्तंवा उवज्जायत्तंवा पविचित्तंवा श्रेत्तंवा गणितंवा गणवच्छेइ-  
 यत्तंवा उद्धिंत्तंवा धारत्तंवा. सेयवएजा आवाहेणं णो प्पमाएणं, सेय संदुव्रेजा एवं म-  
 कप्पत्ति आग्रियत्तंवा जाव गणवच्छेइयत्तंवा उद्धिसत्तंवा धारत्तंवा. मेयसंदुविसमाप्पत्ति  
 णामंदुव्रेजा एवं णो कप्पत्ति आग्रियत्तंवा जाव गणवच्छेइत्तंवा उद्धिसत्तंवा धारत्तंवा  
 ॥ १५ ॥ जिगंथीएणं णवडहर तरुणियए आयारक्कपणाम अज्जयणे परिमट्टिसिया, किं  
 तापमुच्छियत्तंवे केणकारणेण अजा ! आयारक्कपणाम अज्जयणे परिमट्टिसिया किं

उगाथी रांगराची मे या प्रमद के वस्य ? तव वः क्व हि हे एस्य ! किमी भं प्रकार की अवाथा करके  
 नहीं भूला परंतु प्रवाद कर भूलाया है तो फिर उम गावतु की पर्यंत आचार्यक उपाध्यायीकी प्रवर्तककी  
 स्थावर तो गणी का गणवच्छेदक की पट्टा देना स्वयं प्रकरना नहीं कल्पता कि वह स्व कि  
 मे प्रवाद करके तो नहीं भूला परंतु रोगादि कारण से भूला हुआ है उम पुनः याद कर ल्यूता  
 तो उम को आचार्य गणवच्छेदक की पट्टा देना स्थापन करना कल्पता है  
 ॥ १५ ॥ कोई निर्ग्रन्थी—साही नवदीक्षिता वलियावस्थावाली अथवा तारुण्यता  
 का प्रसन्न है वह आचार्य नीशीम नमक अट्ठास-सूत्र भूलाई है, तब उसे प्रवर्तनीकादि पंडु कि  
 अहो अयं ! किस कारण से आचार कल्पनी शीत तू भूला गई वा क्या किमी वाधा रोगादि करके

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥

आवाहेणं प्रमाणं ? सायवएजा, जो आवाहेणं प्रमाणं, जावुजीवाय तरा तप्रतिय  
 नो कप्पति पधिसिणीयत्तवा गणावच्छेद्विणियत्तवा उदिसिचएवा धरिसचएवा  
 सायवएजा आवाहेणं जो प्रमाणं सायसद्वयसामिज्ज संद्वेजा, एवः से कप्पति  
 पधिसिणियत्तवा, गणावच्छेद्विणियत्तवा उदिसिचएवा धारसचएवाः साय  
 संद्वेससामंति जो संद्वेजा, एव से नो कप्पति पधिसिणियत्तवा गणावच्छेद्विणियत्तवा  
 उदिसिचएवा धारिसचएवा ॥ १६ ॥ थरणं थेरुसमिप्तणं आयरिक्कप्पेनामि  
 अज्जायणे परिभट्टेमिया; कप्पति तंति संट्ठावत्ताज्जा अमंठुवत्ताणवा आयारियत्तवा

प्रथम प्रमाद करके ? तय वद कहे कि प्रमाद करके सु गई हू परंतु वावा पीडा करक नो भूखी, तो  
 फि उमं जावमीव पर्यन्त पधिवनी की गणावच्छेदकनी की पढ़ी दम स्थापना करना नहीं कल्पता है  
 वद करे नि में व्यापी आदि कारण से भूखी हू पांतु प्रमाद कर नहीं भूखा हू उस पीडा  
 स्थापन का मुद्र करलूगी, तो उस का पांचवनी की गणावच्छेदक की पढ़ा देना कल्पता है  
 कदाचित् उक्त संदर्भों में थोड़ा ठका यदि कर रखे करे का कंठ और याद नहीं करे तो उसे पधिवनी की  
 तथा गणावच्छेदक की पढ़ी नहीं देवे ॥ १६ ॥ स्थिरि जे माठ यी ती अरस्याका प्राप्त हुवे हो अथ ।  
 बीम वर्षकी दीक्षा होगई हो वे मुद्रावस्थादि प्रयोगन कर आचारान नाशीथ अध्यायनु का मुद्राय हा तो

जात्र गणवच्छेद्यत्वा उद्विसिचत्वा धारित्तत्वा ॥ १७ ॥ थराणं थर भूमिपत्तानं  
 आधारकर्पनामं अञ्जयणे परिभठंसिया कप्पति तेसि सन्निसणणेत्वा उत्ताणेणत्वा  
 तुयट्टाणेणत्वा आयार कप्पे नामं अञ्जयणे दोच्चंपि तच्चंपि पडिच्छित्तत्वा परिसरिचत्वा

भी उन को आचार्य की यात्र गणावच्छेदक की पद्वी देना कल्पता है ॥ १७ ॥ स्वविर को किस प्रकार  
 पद्वी दे वह कहते हैं. स्वविर भूमिका को प्राप्त हुवे आचारांग नीशीय सूत्र को भूलगये तो उन  
 को धीरे २ बैठे २ उसे याद करें, जो कदापि विशेष काल बैठे रहने की शक्ति न हो तो सूत हुंग एक  
 करवट रहे हुवे याद करें. इस प्रकार भी याद नहीं कर सके और उनके मन में उस को धारन करने की  
 प्रावल्प इच्छा हो तो अन्य रत्नादि सशक्त शरीर के धारक आचारांग नीशीय के जान माधु हो उन का  
 विनय का उनके पाम श्रवण पठन कर धारन करे जो बंधनादि विनय करने की शक्ति नहीं तो बैठे  
 रहेही धारन करें, जो बैठे २ धारन करने की शक्ति न हो तो सूते २ धारण करे. परंतु धारण जरूर  
 करे, वर्यो कि आचारांग नीशीय के जान हुवे विना अगेवानी होकर विचारना नहीं कल्पता है. विना आ-  
 चारांग नीशीय का जान हुवे जो अगे वानी हो विचरता है. वह जितने दिन अगे वानी हो विचर  
 उतने ही दिन का दीक्षा का छेद उन को आता है. अन्य स्थान छ महिने के उपरांत छेद की मना की  
 है. परंतु यहां वह नीति लागू नहीं हावी है. यहां तो जितने काल वह विचरे उतने ही वर्षादि का ही

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥

॥ १८ ॥ जे निगमंत्थाय निगमंत्थीओय संभोइयासिया णोण्हं कप्पति अण्णमण्णरस

अतिए आलोइत्तए, अत्थिया इत्थणं केइ आलोयणारिहे, कप्पतिणं तरससंतिय

उसे छेद आता हे ऐसा अर्थधार लिखत है ॥ १८ ॥ अब संभोग का कहते हैं जो कोई साधु साध्वी आपस में शैश्या उपाधी आदि १२ प्रकार के संभोग लेन देन युक्त होंगे. वह संभोग करते कदाचित् किसी उपाध्यायादि को दोष भी लग जावे. तो उस दोष को हरेक साधु के साध्वी के आगे जाकर प्रकाने नहीं, परंतु जिस साधु साध्वी की साक्षी से दोष लगा हो प्रतीत निमित्त उन को साथ ले. जो आचार्यादि—१. पंचाचार कर युक्त होंगे, २. आलोचना के दोष के धारक होंगे. ३. आगमादि पांचों व्यनहार नीतिकर प्रायःश्चित्त के जान होंगे, ४. जघन्य आचारांग नीशीथ के धारक होंगे मध्यम बृहदकल्प व्यनहार के धारक उत्कृष्ट नव दश वर्ष के धारक होंगे, ५. बहुत काल के दीक्षित अर्थात् जघन्य तीन वर्ष मध्यम पांच वर्ष उत्कृष्ट बीस वर्ष की मवर्षा के धारक होंगे, ६. द्रव्य से भाव से चपलता रहित होंगे, ७. मेधावी परिहृत होंगे, ८. आलोचना कराती वक्त अन्तःकरण का शल्य दूर कर आलोचना करावे, ९. अतिचार छिपाने नहीं दें, १०. लज्जा रहित कर कौमल वचन कर आलोचना करावे, ११. प्रायःश्चित्त देकर बुद्ध करने सपर्य होंगे, १२. आलोचना किये हुये दोष अन्य के आगे कहे नहीं, १३. अनेक शास्त्रों में प्राबल्य बुद्धिवंत, १४. सुवाचन प्रतिवंत, १५. सत्यवादी, १६. आलोचक के शुभेच्छक, १७. महा भाग्यवन्त



आले इत्तए, णत्थि इत्थण्हं केइ अण्णे आलोयणरिहे एवण्णं कप्पति अण्णमण्णरसंतिए,  
आलोइत्तए ॥ १११ ॥ जे णिरगथाय निरगथीओय समोइयासिया नोण्हं कप्पति  
अण्णमण्णं अंतिए वेयावच्चरित्तए, अट्ठियाइयं वेयावच्चररे, कप्पतिणं तथं वेयावच्चं  
करसवित्तए, णत्थियाइणं केइ वेयावच्चंकरे एवण्णं कप्पति अण्णमण्णेणं वेयावच्चं

१८ अनुयोगवन्त. १९ सूत्रकर के उचित, २० अन्य के दाप प्रायः क्रम में उस का विश्वाम प्राप्त देव  
गुरु की चरि, मंगल प्रकृति, इत्यादि बहुत दोषोत्पत्ति होते हैं, जो प्रायः श्रुत दोषियों को आता है वही प्रायः  
श्रुत का अधिकारी वह होता है तीर्थहर की आज्ञा का भंग होता है, इत्यादि दाप मान आलोचने दोष  
क्रिया के आगे नहीं रहे. इत्यादि गुण युक्त हो उन के आगे आलोचना करे, और उक्त गुण युक्त न होवे  
तो फिर परस्पर आलोचना तब गद्गल हूच गुण विना परस्पर आलोचना करना प्रायः साधवी के  
पास आलोचना नहीं करे और साधवी साधु के पास आलोचना नहीं करे, क्योंकि इस में पर्याप्त का  
पुर्ण होता है ॥ १९ ॥ अब वेयावच आश्रित्य के मत है. जे निग्रय-साधु निर्द्वेषता साधवी-१२ ही प्रकारके  
संभोग परस्पर करनवाले, परंतु परस्पर आपस में वेयावच करना नहीं कल्पे अतः साधु को साधवी के पास  
वेयावच नहीं करवाना और साधवी को साधु के पास वेयावच नहीं करवाना. यहाँ कोई अन्य साधु  
वेयावच का करनेवाला हो तो साधु को उस साधु के पास वेयावच करवाना कल्पे. तब ही साधवी को

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥

कराविसर ॥ २ ॥ निगमंथचंगं राउत्रोत्रियोलैवा दीहपुट्टो लनेजा, त इत्थीएवा  
 परिसो उमज्जजा पुरिसोत्रा इत्थीए उमज्जजा, एवस कप्पति एवस चिट्ठति, परिहारचणो  
 पाउगति, एस कणो थेरकप्पियांग, एव से ना कप्पति एव से ना चिट्ठति परिहारच  
 पाआणइ एस कर्म्मो जिन कट्टियाण ॥ २ ॥ तिवं भो ॥ इति विवहारस वचमो उद्वेसो ॥ ५ ॥  
 कोई अन्य साध्वी पाम में हो तो उम के पां । वैया । कमाना कलना है, परंतु कोई नहीं हावे तो फिर मायु को  
 साध्वी और साध्वी की मायु को मात्र पुत्र बुद्धि कर या पितृ पुत्री की बुद्ध कर य वच काना कल्पता है ॥ २ ॥  
 गते सत्र का सुशासन-मायु का रक्षि की इक्त अथवा श्याम की वक्त किंवा देव विषय सर्पने देश  
 क्रिया, तत्र वः सायु जा तिगिच्छा-आपचाप धार करने व ल पूरा का योग्य न बने और स्त्री का योग्य बन  
 जायं वे स्त्री के पास औषधपचार करले, तैस हो सला के सर्पने देश क्रिया-हो और स्त्री का मैत्र्य न  
 बनते पुरुष का योग्य बने तो पुरुष के पाम औषध पचर करावे, इस महार कल्पता है, इस महार करते  
 है उम निसा भी प्रकार का परेहार नप प्रादःश्चित नहीं आता है, यह वलय स्थ र कल्पी (आम मे  
 (अनेक) मायु का जिनन, परंतु जिन बली (बने) रहनेवाले) सायु को ऐसा कानन नहीं कल्पता है  
 और वे ऐसा कते भी नहीं है, जो रे करे तो परिष्कार क तप व मायःश्चित के अधिकारी होते है, जिन  
 कश्यो का व्यावच कराने का बली हो नहीं है, यह आचार जिन बली का केश, यह व्यवहार सूत्र का  
 प्रांच ॥ वदेता संपूर्ण दुःख ॥ ५ ॥

सूत्र

अर्थ

६८

### ॥ षष्ठम उदेशा ॥

मिस्वयं दृष्ट्वा पायत्रिहिंस्रए नो मे कपति थे अणपुच्छता पायविहिंस्रए,  
 कपति स थे अपुच्छता पायत्रिहिंस्रए, थेरायसे विरंजा, एवं से कपति  
 पाय त्रिहिंस्रए, थेरायसे नो विरंजा एवं से नो कपति पायविहिंस्रए, जे तस्य  
 भेति अविदिण्या पायत्रिहिंस्रए सेंतरान्छेया परिहरेत्वा ॥ १ ॥ नो से कपति

किसी साधु को इच्छा हो कि मेरे संसारिक सम्बन्धों को घर को जऊं, तो उन को स्वधिर को  
 बिना पूछे ज्ञानी-स्वजनो के घर जाना नहीं कल्पता है, परंतु स्वधिर को पूछ कर ज्ञाती जनों के घर जाना  
 कल्पत है जो स्वधिर उन क घर जाने की आज्ञा दतो ज्ञातियों के घर जाना, और जो स्वधिर उन के घर  
 जाने की आज्ञा नहीं देवे तो नहीं कहे। जो तहां स्वधिर की आज्ञा बिना ज्ञाति सम्बन्धीयो  
 क घर का जाव तो जितने दिन आवागमन करे उतने दिन का प्रयश्चित्त जान। (क्ये कि ज्ञातियों का  
 संग मोह बृह का कारण है जिस के अग्रपर के स्वधिर जान हते हैं, उन साधु की जान की अभिलाषा  
 हातो स्वधिर अपसर तचिस अन्य साधुओं के साथ उन को भजे ज्ञातिविचा करे, इस लिये स्वधिर की  
 आज्ञा बिना नहीं जावे ॥ १ ॥ किस को नहीं कहे और किस को कहे यह कहे हैं ॥ जो साधु साधु

अप्यसुयस्स अप्यागमस्स एगानियस्स ॥ २ ॥ कल्पति सं जे तस्य  
 बहुरमुप बज्जगसे तेणंसद्धिं जायविहिंसुत्तं ॥ ३ ॥ तस्य सं पुव्वागमणेणं  
 पुव्वाओति चाओलोदणे पच्छाओत भिल्लिगसुं कप्पनि से चाओलोदणे पडिगाहितए  
 नो सकप्पति भिल्लगे भुये पाडिगाहितए ॥ ४ ॥ तस्य पुव्वागमणेणं पुव्वाओते  
 भिल्लिगसुवे पच्छाओते चाउलोदणे कप्पनि से भिल्लिगसुं पडिगाहितए, नो  
 से कप्पति चाउलोदणे पडिगाहितए ॥ ५ ॥ तस्य से पुव्वागमणेणं दोधि

पोटे शास्त्र के पढ़ें हो थोड़े आगम अर्थके जान हो, वे थोकेलाइ जाना यह तः होती। उसको ज्ञाति स्वम्बन्धी  
 के पर जाना नहीं कल्पना है ॥ २ ॥ परंतु जो बहुत-शास्त्र के पढ़े हो जो प्रायः धर्या विधी के शास्त्र के  
 ज्ञाता हो उनको अंगकार कर उन के माथ जूवे तो ज्ञानियों के घर जाना कल्पना है ॥ ३ ॥ अब वहां  
 आकर आहार पानी किम प्रकार ग्रहण करे यह कहते है ॥ ज्ञानियों के घर को गये के पहिले ही अपने  
 जा चांसल पकाकर चून्ने में नीच ऊपरलिपे हो, और दाल माघ के गये बाद चूल्हे नीचे उतारी हो सो  
 साधु साधी को चांसल लेने वों कल्पता है, परंतु पीछे से उठरी हुई दाऊ लेना नहीं कल्पता है ॥ ४ ॥  
 तथा साधु के गये पहिले दाऊ चून्ने नीचे उतारी हो और साधु के गये बाद चांसल चून्नेसे उतारे होतो  
 दाऊ लेना वों साधु को कल्पता है परंतु चांसल लेना नहीं कल्पता है ॥ ५ ॥ तथा जो साधु के गये पहिले दाऊ

पुत्रांस्ते कल्पति से दंदि षड्गिहत्तए ॥ ६ ॥ तस्य पुत्र्यागमणं दंदिः पच्छाओत्ते  
 नो संकल्पति दंदिः षड्गिहत्तए ॥ ७ ॥ जं से तस्य पुत्र्यागमणं पुत्र्याउत्ते से  
 कल्पति षड्गिहत्तए ॥ ८ ॥ जसे तस्य पुत्र्यागमणं पच्छाउत्ते ना से कल्पति  
 षड्गिहत्तए ॥ ९ ॥ आयरिय उवञ्जए अतो उवञ्जयस गणंसि दंच अतिसेमा पणसा तजहा-  
 आयरिय उवञ्जए अतो उवगयस पायणिग दिस्य २ एफलेभाषा एमल्लमांवा  
 णातिकमत्ति, आयरिय उवञ्जए अतो उवसयस उच्चारंवा पासवणंवा विगिचसणंवा

और चावल दानों दानों उत्तरं हो तो दानों ही ग्रहण करना वस्यता है ॥ ६ ॥ और माधु के गये बंद  
 दाल चावल दानों चुके नचि उरे हो तो दानों ही ग्रहण करना नहीं कस्यता है ॥ ७ ॥ मतस्य जि माधकं गये  
 पहिले जो कुछ नैयार होगया ही इह ग्रहण करना कस्यता है ॥ ८ ॥ और जो वस्तु माधुके गये याद नैयार इह  
 इह ग्रहण करना नहीं कस्यता है ॥ ९ ॥ अच आचर्योके अतिक्रय कृति है आचार्य उपध्याय के पांच  
 अतिक्रय कहे है तद्यथ— १ अचर्य वधाधाय च हेम से उपश्रय में पधारें तो उन के पांच को पूजनी  
 ग्रहण कर पूत तथ शिष्य प्रमज्जन वरा इवा विपकर की शशा लह्ये नहीं २ आचार्य उपध्याय  
 उपश्रय में रही नीव लुनीत करि रू हु वरे उसे योग्य स्थान परिवा कर जमीन शुद्ध करता इवा

त्रिसोहेमाणेवा णातिक्रमति, आथरिय उवञ्जाए पमत्रेयवडिय इच्छाए करेजा, इच्छाए. जो करेजा, आथरिय उवञ्जाय अंतो उवसयसम एगरयंथा दुरायंथा वसमाणेवा णातिक्रमति, आथरिय उवञ्जाए वाहि उवसयसम एगरायंथा दुरायंथा वसमाणेवा णातिक्रमति ॥ १० ॥ गणादच्छइयस्सणं गणंदिदो अतिसेसा पणसा तजहा गणाबच्छेइए अंतो उवसयस्स एगरायंथा दुरायंथा वसमाणेवा णातिक्रमति, गणादच्छेइए वाहि उवसयस्स एगरायंथा दुरायंथा वसमाणेवा णातिक्रमति ॥ ११ ॥ से गामंमिवा नगरंमिवा जाव सच्चिनेससिवा एग वगडाए एग दुवाराए एग णिवस्वमणं पवसए नेो

तीर्थकर की आज्ञा का उल्लंघन नहीं करे, २. आज्ञार्थ उपाधराय की इच्छा वैवाचन कराने की शक्ति तो अपनी शक्तियों को कदापि गौपी नहीं। शक्ति प्रदाने विषय वच करे, ४. आज्ञार्थ उपाधराय उपश्रय में एक दो रात्रि रह किं उपाधराय बुद्धलना चर्चो। तो एक दो रात्रि उपश्रय में रहता आज्ञा इच्छेने ई. और ५. आज्ञार्थ उपाधराय उपाधराय के वाहिर रहना चहत्त हीं तो उन के साथ उपश्रय के वरि भी वृत्तादि के नीचे रहता आज्ञा अतिक्रमे नहीं ॥ १० ॥ गणदच्छेइयस्सणं मधु ने दो प्रणिशा चहे ई १ गणादच्छेइयस्सणं के साथ उपाधराय में एक दो रात्रि रहता आज्ञा इच्छेने महीं करे, २. सेम हीं वे उवसयसम मी आज्ञा उल्लंघन नहीं करे ॥ ११ ॥ अ. अपद साधु प्रश्रिये तहो ई. छेउे यप में इहे उपाधराय वाहरे

पुत्राओंसे कल्पति से दैवि. पडिगाहृत्तए ॥ ६ ॥ तए से पुत्रागमणं. णं. दं. त्रि. पच्छाओत्ति.  
 नौ. से. कल्पति. दैवि. पडिगाहृत्तए ॥ ७ ॥ जं से तए. पुत्रागमणेणं. पुत्राओत्ते. से.  
 कल्पति. पडिगाहृत्तए ॥ ८ ॥ जसे. तए. पुत्रागमणं. पच्छाओत्ते. नो. से. कल्पति.  
 पडिगाहृत्तए ॥ ९ ॥ अथरिय. उवञ्जए. यस्म. गणसि. पंच. अति. से. मा. पणसा. तजहा.  
 आयरिय. उवञ्जए. अं. नो. उवमघस्स. पायणिग. डिश्य. २. ए. फ. ले. मणे. का. प्य. मज्ज. मा. णं. वा.  
 णा. ति. क. म. लि, आ. य. रि. यं. उ. व. ञ्ज. ए. अं. तो. उ. व. स. य. स. उ. च्चं. रं. वा. पा. स. व. णं. वा. वि. गिं. च. मा. णे. वा.

और चावल दानों दत्तं ही तो दानों ही ग्रहण करना बल्यता है ॥ ६ ॥ और माधु के गय चंद  
 दाह चंचल दानों चुले नीके उतरे हो तो दोनोही ग्रहण करना नहीं बल्यता है ॥ ७ ॥ मतस्य रि. माघकं गये  
 पहिल जो कुछ तैयार होगया ही इह ग्रहण करना बल्यता है ॥ ८ ॥ और जो बरतु माधुके गये याद तैयार इह  
 हा बह ग्रहण करना नहीं बल्यता है ॥ ९ ॥ अक. आ. ज. र्थ. के. अति. शय. इ. ह. ते. है. आ. च. र्थ. उ. प. ध्या. य. के. पंच.  
 अतिशय कहे है तद्यथ— अचर्यं. वा. धा. प. च. श. से. उ. प. श्रय. में. प. धा. रें. तो. उन. के. पंच. को. पू. ज. नी.  
 ग्रहण. कर. पू. न. त. ध. शि. प. म. म. ज. न. व. र. ा. इ. वा. तै. व. कर. की. अ. हा. उ. ह. धे. र्ही. २. आ. च. र्थ. उ. प. ध्या. य.  
 उ. प. श्रय. में. ब. डी. नी. व. ल. यु. गि. त. कर. र. त. इ. ह. की. इ. से. पौ. ष. प. थान. परि. वा. कर. ज. धी. न. म. उ. द. क. र. ता. इ. वा.

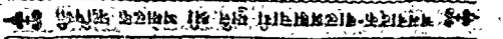
त्रिसोहेमागेवा- णातिक्रमति, आथरिय उवञ्जाए पमवेयवडिय इच्छाए करेजा,  
 इच्छाए, जो करेजा, आथरिय उवञ्जाय अंतो उवसयस एगरायंवा दुरायंवा  
 वसमाणेवा णातिक्रमति: आथरिय उवञ्जाए वाहि उवसयस एगरायंवा दुरायवा  
 वसमाणेवा णातिक्रमति ॥ १ ॥ गणादच्छेइयसणं गणं, निदं अतिसेसा पणसा तजहा-  
 गणावच्छेइए अंतो उवसयस एगरायंवा दुरायंवा वसमाणेवा णातिक्रमति: गणावच्छेइए  
 वाहि उवसयस एगरायंवा दुरायंवा वसमाणेवा णातिक्रमति ॥ १ ॥ मे गामं निवा नगरं सवा  
 जात्र सधनेससिवा एग वगडाए एग दुवाराए एग णिवस्वमणं पत्रसए नो

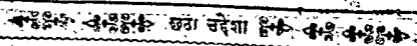
१ धर की आजा का उल्लेख नहीं करे, २ आचार्य उपाध्याय की इच्छा है यावच वराने की होने तो  
 अपनी कर्क की कक्षा में गोपी नहीं, शक्ति माने भय वच करे, ४ आचार्य उपाध्याय उपाश्रय में एक  
 दो रात्रि रह फिर उपाश्रय बदलना चधी, तो एक दो रात्रि उपाश्रय में रहना आज्ञा इच्छे है, अर  
 ५ आचार्य उपाश्रय उपाश्रय के बाहर रहना चहत हो तो उन के पाथ उपाश्रय के उपाश्रय भी वृक्षा दे  
 के नीचे रहता आज्ञा अतिक्रमे नहीं ॥ १२ ॥ गणावच्छेइयसणं पधु ने दो प्रतिसय वहे है १ णावच्छे-  
 इयसणं के साथ उपाश्रय में एक दो रात्रि रहना आज्ञा रह्य, भई करे, २ नैम ही वडिराहना भी  
 आज्ञा उल्लेख नहीं करे ॥ १३ ॥ अ अपद साधु अश्रिय रहो निच्छे गप में दहे जगसय-यावच



कल्पति बहुलं अंगडसुयाणं- एगओ वत्थए, अत्थियाइणं केइ आयाकप्पधरे  
 णत्थियाइणं केइ छेदेवा परिहरेवा. णत्थियाइणं केइ आयाकप्पधरे सव्वेभित्तिसित्तिसि  
 ज्ञप्पत्तियं छेदेवा परिहरेवा ॥ १२ ॥ से गामंसिवा जाव संस्सिधंसिवा आभिण्णं-  
 वगढाए अभिनिदुधाराए अभिनिस्समणप्पवेसणाए नो कप्पति बहुलं अंगडसुयाणं  
 एगओ वत्थए, अत्थियाइणं केइ आयाकप्पधरं जेतत्तीययाणि संवसत्ति णत्थियाइ  
 केइ छेदेवा परिहरेवा ॥ णत्थियाइणं केइ आयाकप्पधरं जेतत्तीयं रायाणि संव-

मन्त्रोच्यते में ऐसा मकान होवे कि जिस में एक ही कप्पा होवे जिस के चारों तरफ भीत होवे,  
 जिस के एक ही द्वार होवे, निकलने प्रवेश करने का एक ही रास्ता होवे. ऐसे स्थान में बहुत साधुओं  
 सूत्र के अज्ञान आचारांग सुयोगांग के ज्ञात के पाठी हूँ वना एरुव रहना नहीं कल्पता है. और जैन में  
 जो कोई साधु आचारांग नशीनका पढाइवा हाता उमक साथ रह, किमी प्रकार का षडःश्रुत नहीं आता है  
 और दिन आचारांगदिके पढेके साथ जो रहे तो जितने दिन रह वतने हा दिनका छंद प्रायः श्रुत आता है ॥ १२ ॥  
 उक्त प्रकार का प्रापदि में बडा चोगों तरफ कोट वाला अलग २ द्वारवाला होवे जिस स्थान नमस्सने  
 प्रवेश करने का रास्ता अलग २ हो ऐसे स्थान में बहुत साधुओं में से कोई भी एक साधु आचारांग  
 नशीन का ज्ञान हा इन के साथ रहे तो छंद प्रायः श्रुत नहीं आवे. अर्थात् बिना पढे साधु को अलग

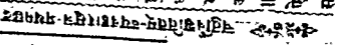




सति सत्वेति तरस तत्पत्तियं छेदेवा परिहारिवा ॥ १३ ॥ से गामंसिवा जाव संक्षि-  
वेसंसिवा अभिणिवगडाए अभिणि दुगाराए अभिणिवखमणपवेसाए नो कप्पति बहुसुयस्स  
बझागमस्स एगणियस्स भिवखुस्सवत्थाए किमगुण अप्पसुयस्स अप्पागमस्स

॥ १४ ॥ से गामंसिवा जाव सञ्जेसंसिवा एगवगडाए एगदुवासाए कप्पति बहुस्तु  
यस्स चञ्जगमस्स एगणियस्स भिवखुस्सवत्थाए उभओकालं भिवखु भावं पाडिजाग

स्थानमें नहीं रहना परंतु बहुत अप्ठ साधु भ्रा एहपठ हुआ साधु गुरु भ्रा चाँदिये, नहीं तो वे अल्प ज्ञानकर  
आशा पानो उपहास्य मरुही पपाद् मेरन आद अनेक दंप सेवन करने का संभव गंगा है और पदा  
हुवा साधु हो तो वो उन को उन्वार्ग में नहीं जानेदे ॥ १३ ॥ ग्राम में यावत् मसी वेम में, कोई मराय  
धर्म सालादि पकान हो वह खुला हो बहुत द्वार वाला हो निकलने प्रवेश करने के रास्ते अलग २ हो वहाँ  
भी आचारंग नीशीथ के पढ़ेने गतिथ्र स घुं भेला रहने ही कल्या है तो फिर अल्प सूत्रथोडे रटे.  
आत्मागमोथंटे शास्त्रके ज्ञान. उनक तो कहना ही नगा? अर्थात् उाओ त ऐसे स्थानमें रान कले नही है  
॥ १४ ॥ ग्रामंतु ग्रापादि यावत् मरुथेयश में मराय आदि मकान में एकही कपर. हाँ जिसवा एकही द्वार होवे  
ऐसे स्थानमें बहुतो शास्त्र ज्ञानके पारगमिक साधुओ अकेला रहना कल्याता है. परंतु वहाँ उनओ भी दोनो  
सन्ध्या अर्थात् आशाराकी साधु धर्मकी चिंतन करते सावधानपने अप्रमादी रहना चारिये. जिससे आतेजाते



रमाग्रम ॥ ११५ ॥ जै तथ्ये बहवे इत्थीओ परिमाय पाणथिति तथ्ये समणे  
 निगंथे अंगयंसि अचित्तंनि सांयंभि सुक्कांगले नियमाणे हृथ्यकम्म पंडम-  
 वणपत्ते आवज्जति माणिय परिहारट्टाणं अणुघंतिथि ॥ १६ ॥ जे तरे बहवे इत्थी  
 ओ परिसाय पणायति तथ्ये समणे निगंथे अणंगयंनि अचित्तंसि सांयंसि सुक्का  
 पुगले निगंथमाणं महण पडिसंणपत्ते अवरज्जइ धांआम्मांसिय परिहारठण  
 अणुघंतिथि ॥ १७ ॥ जे कयति निगथणवा निगथीणवा जिग्गथीण  
 रहने लागे म संयर की विरथवा नही होवे ॥ १८ ॥ कोई साथ साथी किमा पन्य पनुयती या  
 पशु पशुनी को काप मंग तेवन करता देख लिकार का उदय होगे मे किपी अनित्त श्रेव मे इन्दी प्रसंग  
 या गोनी मे काष्ट दि पक्षा वीर्य स्वस्ति करे हस्तर्ष कर वीर्य क्षप करे तो उते एरु मणिक मायः अच  
 अणुय निक आता है ( २३४ वाय तथा चारा दिनका देखा का छद धार कयो जिहसा कर्म करने यथुन की  
 इच्छ होतो है तथा हस्तकर्म करने भयन भी भेवन कंकड़ इव लिय जर दोष कहा है ) ॥ १९ ॥ किपी  
 सान मे लो पला यथुन कर्म मांयत होवे उन को देहका श्रयण निग्रय अन्य अनित्त श्रेवति मे  
 इन्द्र मंत्र पद्य सेन के अथक भाव कर वीर्य शीण करे, मेय। सवन दिया पेना मान लाव, तो  
 उा को बोधादि मायः अच ( २२३ उा ल कं मायः अच या २२ दिन का दासा क छेद पत्र )  
 ॥ २० ॥ अन्त गच्छ मे सद्धो यान उज्ज आओ। तरो हे सत्तु मही के पातु किपी अन्य गच्छ से

अणगणाओ आगयः कखुयायारः सवलायारः भिन्नायारः संकलिट्टुयायारः चरित्तं तसस  
 ट्टुणरंम अणालोप्रावेत्ता अणडिकमावेत्ता पायच्छत्तः अणडिवज्जावेत्ता पुच्छत्तएवा  
 वाईत्तएवा उट्टुद्वित्तएवा संभूजित्तएवा संवसावित्तएवा, तिभे इत्तरियदिसवा  
 अणुरिसवा उद्विकित्तएवा धरित्तएवा ॥ १८ ॥ कप्पति निगंत्थाणवा नगणीणवा  
 निरंथी अणगणतो आगई कखुयायारं सवलायार भिन्नायार संकलिट्टुयायार चरित्तं  
 तससट्टुणरंम अलोप्रावेत्ता अणडिकमावेत्ता पायच्छत्तं पाण्डवज्जावेत्ता पुच्छत्ताएवा वाईत्त

साधु आयं हो, जिसका अक्षर खण्डन हुआ है, इक्ष्म म मथले शेषों का कोई शेष लगा हो, आचार का  
 भेद अनाचार से हुआ हो, क्रेषादि कर मलीन हुआ हो, उप को उन पाप स्थानिक को अलोचना दिये  
 विना, पाठकपण करण्ये विना प्रयश्चित्त दिये विना नवा दशादिया विना संको सुत्र माता पूजना  
 सूत्रादि की संवना देनी, महा प्रतादि में स्थापन करना इही शीघ्रा देना, उन के साथ आहार करना,  
 उन के साथ एक स्थान में रहना, तथा उस को आचार्यादि की पद्वी थोड़े काल के लिये तथा जावनीव  
 पर्यन्त की देना इही अत्यन्त है ॥ १८ ॥ परंमु एने ही किसी साधु माधुी के पास कोई साध्या अपने  
 गच्छ को छुट आई हुई जिस का आचार खंडित हुआ हो, तिनने २१ फवले दांप पैका दोष मेवन  
 किया ऐ, जिस का आचार अनाचार से भिन्न हुआ हो, केषादि से पंक्ति आचार हुआ ही, उस को उ ।

एवाऽउग्रदृष्टिचएवा संभुञ्जिचएवा संवासाञ्जिचएवा तीसं इचरियं विसंवा अणुदिसंवा  
 उद्विसिचएवा धरिचएवा ॥ १९ ॥ नो कल्पति निगंथाणवा निगंथीणवा  
 णिगंथे अणगगात्रा, आगय वृखुंभायार सवलायारं भिणायारं संकिल्लिद्धायार  
 चरिचं, तस्म टाणस्म अणालोथोत्ता अणडिकम्मात्रेत्ता पायञ्जिचत्ता  
 अपाडिवज्जवेत्ता पाञ्चत्तएवा वाइत्तएवा उग्रदृष्टिचएवा संभुञ्जिचएवा स-  
 वसात्रिचएवा तीसइचरिय विसंवा अणुदिसंवा उद्विसिचएवा धरिचएवा ॥ २५ ॥  
 कल्पति निगंथाणवा निगंथीणवा निगंथ अणगणतो आगयं अक्खुयायार

शयःश्रिच के स्थान की आलोचना करा, प्रतिक्रमण करा, प्रायःश्रिच दे फिर उमे सुखसाता पूछता,  
 वाचना देना, बहो दीसा देना, साय मे आहार करना, साय पे रटना थोडे काल तक बचवा आवशीव  
 की पवित्रणी आदि की पढे पर स्वपन करना कल्पता है ॥ १९ ॥ अब सातु आश्रिय कहते है-  
 सातु साश्वी को किसी दूसरे गच्छ का आया हुआ शत्रु खंडताचरी मरुत दोष लगानेवाला, भिन्न  
 भाचारी, क्रोधादि से संकल्लुपरिणामी, उम दे पस्थान की आलोचना प्रतिक्रमण विन किये शयःश्रिच  
 विन दिये सुख साता पूछता वाचना देना मन्त्रत्रारोपण करना, साय आहार करना मात्र रटना थोडे  
 काल तथा प्राश्रीव की पढे देना नहीं कल्पता है ॥ २० ॥ परंतु सातु अथवा साश्वी को दूसरे मरुत स



असबलायार अभिणायार असंकिलीद्वयार, चरितं तस्य दृगणस्त- आलोयावैचा-  
 पडिकसावैचा पायच्छित्तं पडिवज्जवैचा, पुञ्जचपत्रा, वाइचपत्रा उवट्टात्रिचपत्रा  
 सं भुञ्जिचपत्रा, संवसात्रिचपत्रा, तीसं इतरियं दिसंवा अणुदिसंवा उदिसिचपत्रा,  
 धारिचपत्रा ॥ २१ ॥ सिचेभि ॥ त्रिवहार सुयस्य छट्ठा उहेसां सम्भचं ॥ ६ ॥

कोई साधु किसी कारण प्रयोजन से निकल कर आया हो. उन का आचार अखंडित हो रहने किसी  
 भी सबके दोष का सेवन नहीं किया हो, उस का आचार अनाचार से मंग नहीं हुआ हो, जो क्रोधादि से  
 संकष्ट बन नहीं निकला हो, अंग कारण से आया हो, उस कारण की आशंचना प्रतिक्रमण करे, दोष  
 छटा हो. उस का प्रायश्चित्त लेने तो उस को मुक्त सत्ता पूजना. मूर्त्रार्थ की शिचनी देना महाव्रत में  
 स्थापन करना, उस के साथ भाहार पानी करना, उन के साथ रहना जो वष पोग्य हो तो उसे योहे  
 हास के लिये अथवा शिवजीव के लिये आचार्यादि की पढी घर स्थापन करना कल्पया है ॥ २२ ॥ षट्  
 त्वनहार एत का छटा श्रेया संपूर्ण हुआ ॥ ६ ॥

# ॥ सप्तम् उद्देशा ॥

जे निगंथाय निगंथीओय संभोइयासिया तो कप्यइ निगंथीणं निगंथे अणापुच्छिचा  
 णिगंथी अणंगणाओ ओगथं खूयायारं भिपगायारं सवलयाारं, संकिलट्टायाार  
 चरित्तं, तस्सं ठाणरस अणलायावत्ता अणडिकमोवेत्ता पायच्छत्तं अपडिवजावित्ता  
 पुच्छित्तएवा, वाइत्तएवा, उवट्टदिच्चएवा, संभं जत्तएवा, संवसावित्तएवा, तीसे  
 इसरिय दिसवा अणदिमत्ता उदिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ १ ॥ जे णिगंथाय निगंथीओय  
 संसाइयासिया कप्यति निगंथीणं निगंथे अपुच्छित्ता निगंथी अणंगणाओ आगय  
 जो कोइ निग्रथसाधु निग्रयनीसाद्धो वारं प्रहार के संभोग कर संभोगी होवे उस में साधी को  
 माधु को बिना पुछे कोइ साद्धो दूरे गळ्ळे संलिकलकर आई हो वह भी आचार को खंडित करने वाली  
 हो, असाचार संसाचार की भेदने वाली हो, संवेक दोषों में भेदोप की लगाने वाली हो, क्रोधदि रूपाय  
 कर संकल्लु आचार वाली हो, इस पाप की ओज्जना मत्तक्रमण विन किये पायः श्रित्त विन लिये उस  
 को सुलसता पूरुवा, वाचनादेना, महाव्रत में स्थानामाय में आहार करना एक स्थान साथ रहना  
 उस को थोड काल के लिये अथवा जात्र जेव के लिये पवित्रणी आदि पदों पर स्थापन करना कलरता  
 नहीं है ॥ १ ॥ जिन साधु साद्धी का १२ प्रहार का संभोग भला हो उस में साद्धी को कोइ अन्य संभोगी

कुबुयायारं भिन्नायारं जाव उद्विसिचएवा धारिएएवा ॥ २ ॥ जे निगंथाय निगं-  
 थीओय संमोइयासिया कंपति निगंथानं निगंथीओय आपुच्छिचत्ता निगंथी  
 अणगणओ आगय वलुनायारं सबलायारं भिण्णायारं संकलिट्टायार चरिंत्तं, तरस  
 ट्टाणरस आलोयावेत्ता पडिकमावेत्ता पायच्छिचं पडिवज्जावेत्ता पुच्छिचएवा वाइसएवा  
 उवट्टुविएएवा, संमूजिएएवा, संवसिएएवा, तीसेट्टुरियंसिवा अणविसवा उद्विसिचएवा  
 धारिएएवा ॥ नंच निगंथीओ णो इच्छेज्जा समयं च णियंटाणं ॥ ३ ॥ जे निगंथाय,

साद्री आइ हो उस का आचार खंडित हुआ हो यावत् अपने संगीतिक साधु को पूछकर यावत् पद्वी पर  
 स्थापन करना कल्पता है ॥ २ ॥ जिन साधु साद्री का संगीग भेला हो, तो साधु को अपने संगीग की  
 साध्री को पूछकर अन्य गच्छ से आइ हुई साध्री को खंडिताचारी को सर्वल दोष वांछी को भिन्ना  
 चारी को कपाय से संकिए चारित्रीनी की उस स्थानक को जालोचना नतिप्रमणा करा कर मायःधित्तसे  
 शुद्ध करके सुख साता पूजना. वाचना देता महाश्रत में स्थापन करना साथ आशर करना साथ रहना  
 उसे छोडे काळ की अर्थवा विदेष काळ की प्रती पर स्थापन करना कल्पता है, परंतु उस चडी साध्री  
 को अपने संगीतिक साधुकी राजा विना अपने मनसे प्रण करने की इच्छयात्र प्री नई करी ॥ ३ ॥ जो साधु



गिरगंभीओय संभोइयासिआ गोण्हं कथ्यति गिरगंथे परोविंश्च पाडियक्कं संभोइयं  
 वीसंभोइयं करिचए, कथ्यतिण्ह पच्चक्खं पाडियक्कं संभोइयं विसंभोइयं करिचए,  
 अत्थेवणो अण्णमणं पासेजा तत्थेव एव वएजा अहणं अज्जो ! तुमए सद्धिं  
 इमंमियकारणंमि पच्चक्खं पाडियक्कं संभोइयं विसंभोइयं करेमि, सेय पद्धितएजा,  
 एवं से नो कथ्यति पच्चक्खं पाडियक्कं संभोइयं विसंभोइयं करिचए, सेय नो पद्धि-  
 साध्वी एकं संभोमी शे, और किमी संभोमीका विसंभोग करना हो अर्थए संभोग मे से निकाळना होवे  
 वह समय हुआ बिना उसको विसंभोग करना नहीं कल्पता है परंतु वह प्रत्यक्ष सन्मुख हो तब एम का  
 दोष उन को कबूल करावे कि अहो अर्थ ! तुम पास्त्यादि को आहार पानी आदि देवे हो हमने तुमारे  
 को दो तीन वक्त मना किया वो भी तुम मनेते नहीं हो और चौथी वक्त भी देते हो इत्यादि करण से  
 तुम हमारे संभोग के बाहिर हो, हमारे संभोगी साधु थप तुमारे साथ बाराही प्रकार के संभोग में का  
 किमी भी प्रभाग का संभोग नहीं करेगे. इत्यादि कह के उन को विसंभोग करे, परंतु वह साधु एतल सेवित  
 दोष का पश्चात्ताप करे. मिथ्या दुष्कृतदिदे शुद्ध होते और कहे कि अब में ऐसा नहीं करेगा  
 वो इस से साथ प्रत्यक्ष में अथवा परोक्ष में संभोग का विसंभोग करना नहीं कल्पता  
 है. और जो बर एउ दोष का पश्चात्ताप नहीं करे प्रत्यक्ष के शुद्ध न होवे, जाने दोष से

तपेजा एवं से कल्पति पचकलं पाडियकं संभोइयं विसंभोइयं करिचए ॥ ४ ॥  
 जाओ निरर्थीओ निगंथाया संभोइयासिया णोण कल्पति निगंथी पचकलं  
 पाडियकं संभोइयं विसंभोइयं करिचए, कल्पतिणं परोक्खं पाडियकं संभोइयं  
 विस्संभोइयं करिचए, जत्थेवताओ आप्पणो आयरियं उवज्जाय पासेजा तत्थेव एवं  
 वएजा अहणं भंते ! अमुग्गाए अज्जाए सद्धि इंसमियं २ कारणंमि परोक्खं पडि-  
 यकं संभोइयं विसंभोइयं करेमि, साथसे परिवपेज्जा, एवं से नो कल्पति परोक्खं

निवृत्तना कष्ट नही करे, वो वत को प्रत्यक्षमें अथवा परोक्ष में विसंभोगी करना कल्पता है ॥४॥ परोक्षमें किस प्रकार विसंभोग करे यह कहते हैं. कोई छाधी साधु पारे प्रकार का संभोग शामिल करते हो उस में से किसी साधु का प्रत्यक्ष उपाश्रय में संभोगी की विशेष्योनी, करना नहीं कल्पता है. वस्तु दूसरे साधु के पास अथवा साधुओं के पास यह जिस स्थान रहती हो वहां कइलाये कि इस कारण से तुम को विसंभोगी की है. इस प्रकार करना कल्पता है. तब वह अजिज्ञा गित स्थान अपने आचार्य उपाध्याय हो वहां जाकर कहे कि अहो भगवन् ! अमुक आर्यी के साथ अमुक कारण करके परोक्षपने में मेरा विसंभोग किया, ऐसा मेरे स्थान मुझे कइलाया. तब वे आचार्य उपलक्षण से उस प्रवृत्तियों को जानकर

पण्डित संभोइयं विसंभोइयं करिष्या; सायसे णो पण्डितपेजा एवं से कथ्यति परीवसं  
 पण्डित संभोइयं विसंभोइयं करिष्या ॥ ५ ॥ नो कथ्यति निगंथाणं निगंथायि  
 अण्णो अट्टाए पव्वाविचएवा मुंडाविचएवा सिक्खाविचएवा संहवितएवा  
 उवट्टाविचएवा, संभुज्जिचएवा, संवासिचएवा, तीसे इत्तरियं दिसंवा अणुदिसंवा  
 उद्विसिचएवा धारिचएवा ॥ ६ ॥ कथ्यति निगंथाणं निगंथायि अण्णोसि अट्टाए

कहे कि अहो आर्या ! उत साधु का कहना है कि अनुह प्रकारका मिथ्या दुष्कृत्य देवे तो विसंभोइयणा  
 नहीं करूं. तब वह आजिका उप सेवित दोष का मिथ्या दुष्कृत्य दे देवे तो प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष विसं-  
 भोगी नहीं करे. इन दो अंशपत्रों में प्रथम अंशपत्र का साधु का है और दूसरा साधु का है ॥ ५ ॥  
 साधु साधु को अपने लिये—अपनी नेत्राय में कर दीक्षा देना सुपिठत करना, आचारादि की शिक्षा  
 देना शिष्यनी करना, महाजन में स्थापन करना नामिष्ठ आहार पानी करना, एक स्थान रहना, उसे थोड़े  
 काल के लिये अथवा जावजीव के लिये किसी पट्टी पर स्थापन करना, इतने काम करना साधु को नहीं  
 कल्पता है ॥ ६ ॥ परंतु साधु साधु को दूर के लिये दीक्षा देना. सुपिठत करना यात्रा पट्टी देना  
 कल्पता है. अर्थात् किसी दूर देशान्तर में विहार करते किसी बृहस्तीनीयों को वैराग्य भाव प्राप्त हुआ हो  
 और पश्चिमीक में कोई आर्जिका आने जैसी न हो तो साधु उनको कोरे कि मैं तुमारे को दीक्षा

पवाविचएवामुंडाविचएवा जाव उदिसिचएवा धारिचएवा ॥७॥ णो कप्पत्ति निगंथीणं  
 निगंथं अप्पणो अट्टाप पवाविचएवा मुंडाविचएवा जाव उदिसिचएवा धारिचएवा ॥८॥  
 कप्पत्ति निगंथीणं निगंथाणं अट्टाप पवाविचएवा मुंडाविचएवा जाव उदिसिचएवा धारि-  
 चएवा ॥९॥ नो कप्पत्ति निगंथीणं वित्तिकिट्ठयं विसंवा अणुदिसंवा उदिसिचएवा धारिच-  
 एवा ॥ १० ॥ कप्पत्ति निगंथाणं वित्तिकिट्ठयं विसंवा अणुदिसंवा उदिसिचएवा धारिच-

देऊंगा, आहार पानी आदि का देऊंगा, परंतु आचार्योद का योग भिडे वे कहे उन आर्जिका के नेश्राय  
 में दुयारे को रहना होगा, यों अन्य की नेश्राय की उन को जान दीक्षा दे मुण्डित करे यावत् पट्टी पर  
 स्थायि ॥ ७ ॥ आर्जिका को किसी साधु को अपने लिये दीक्षा देना मुण्डित करना यावत् पट्टी पर  
 स्थापन करना नहीं कल्पता है ॥ ८ ॥ साध्वी को दूसरे साधु से लिये दीक्षा देना मुण्डित करना यावत्  
 पट्टी देना कल्पता है, एक कथानुसार ही किसी देव में साधु न हो आर्जिका का उपदेश मुन किती  
 को परैरंग्य प्राप्त होवे तो आर्जिका उस को दीक्षा दे आहार पानी आदि योग्य भक्ति कर अन्य साधु के  
 सुपत्ता करे ॥ ९ ॥ साध्वी को पिकट दिवा - ( जिस दिशा में चोर जाए अनार्यों रहते हैं उस दिशा ) में  
 विहार करना नहीं कल्पता है, यों कि ऐसे स्थान बलादि के हरण होनेका तथा घत मंग आदि संयम निरावना  
 का संभव होता है ॥ १० ॥ परंतु साधु को विकट दिशा में अनुविद्या में विहार करना कल्पता

एवा ॥ ११ ॥ नो कर्षति निगंथाणं वितिकिट्टायं पाहुडाइं विओसवित्तएवा  
 ॥ १२ ॥ कर्षति निगंथीणं वितिकिट्टाइं पाहुडाइं विओसवित्तएवा ॥ १३ ॥  
 नो कर्षति निगंथाणं वा निगंथीणवा वितिकिट्टाए कालेसव्झायं उदिसित्तएवा  
 करित्तएवा ॥ १४ ॥ कर्षति निगंथीणं वितिकिट्टाए कालेसव्झायं उदिसित्तएवा  
 करित्तएवा निगंथीणस्साए ॥ १५ ॥ नो कर्षति निगंथाणवा निगंथीणवा अस-  
 दे ॥ १६ ॥ किसी साधु आदि से विरोध होगया हो और ये साधु विकट दिशा में जाकर रहे हों तो  
 उन को साधु विकट दिशा में जाकरही समझे. परंतु स्वस्थान रहा नहीं समझे ॥ १७ ॥ किसी आर्जिक  
 को किसी के साधु से विरोध हुआ हो और वह विकट दिशा में जाकर रहा हो तो उस को समझे जाना  
 नहीं कल्पता है परंतु स्वस्थान रही हुई ही समझना करे ॥ १८ ॥ साधु साध्वी को विकट काल में अकाल  
 में शास्त्र की स्वध्याय करना नहीं कल्पता है ( विकट काल दो प्रकार के-१. कालिक विकट तो प्रथम पहर  
 चौथा पहर दिन रात्रि का छोड़ बाकी के काल में कालिक शास्त्र की स्वध्याय करे, और उत्कालिक सो  
 मातःकाल सन्ध्या काल मध्याह्न और अर्ध रात्रि इस में शास्त्र की स्वध्याय करे, यह दोनो काल टालकर  
 यथा उचित शास्त्र की स्वध्याय करना कल्पता है ) ॥ १९ ॥ साध्वी को विकट काल में पांच प्रकार की  
 की स्वध्याय करना अन्य को उद्देश करना कल्पता है. परंतु साधु की नेश्राय में रहकर कोई कार्य  
 प्रयोजन साधु कहे कि तुम यहाँ रहे इतनी स्वध्याय करो तो करना कल्पता है ॥ २० ॥ साधु साध्वी

ज्ञाए सञ्ज्ञायं करिचए ॥ १६ ॥ कप्पति निगंथाणवा निगंथीणवा सञ्झाईए सञ्झा-  
 यं करिचए ॥ १७ ॥ नो कप्पति निगंथाणवा निगंथीणवा अप्पणो असञ्झाईए  
 सञ्झायं करिचए, कप्पतिणं अणमणस वायणं दलिइत्तए ॥ १८ ॥ तिवास परि-  
 याए समणे निगंथे तीसंवास परियाए समणेनिगंथीए कप्पति उवञ्झायत्ताए  
 उदिसिचएवा ॥ १९ ॥ पंचवास परियाए समणेनिगंथे सट्ठिवास परियाए समणीए

को असञ्ज्ञाय की वक्त स्वध्याय करना कल्पता नहीं है ॥ १६ ॥ साधु साध्वी को स्वध्याय करने के  
 काल में स्वध्याय करना कल्पता है ॥ १७ ॥ साधु साध्वी को अपने शरीर से उत्पन्न हुई असञ्ज्ञाई  
 रक्तरादि चिष्टादि उस में स्वध्याय करना नहीं कल्पता है परंतु परस्पर वांचना देना लेना कल्पता है  
 अर्थात् साधु को कोई व्रणा ( गुपडा ) दि हुवा हो वह झरता हो तो उसपर तीन पडलका पल्ल वांच कर  
 परस्पर वांचना देवे लेवे, जैसे ही साद्वी के व्रणादि हुवा हो अथप कतु प्राप्त हुवा हो तो उस को रासादि  
 की पोटनी युक्त सात पट का वल्ल वांचकर वांचना देना लेना कल्पता है ॥ २८ ॥ जिस साधु की  
 तीन वर्ष की दीक्षा हुई है उनको तीस वर्षकी जिसकी दीक्षाहुई ऐसी आर्या की उपाध्याय पदपर स्थापन  
 करे, तीन वर्ष की दीक्षित साध्वी को उपाध्याय स्यापे विना न रहना ॥ १९ ॥ जिस साधु की पांच वर्ष  
 की दीक्षा होगई है उस साधु को साठ वर्ष की जिस की दीक्षा हुई है ऐसी साध्वी को आचार्य पने

निर्गम्ये कल्पति आर्यरिप्साए उदिसिचएवा ॥ २० ॥ गामाणुगामं दुईज्जमाणे  
 मिक्वूए अहच्च वीसुंभेज्जा तंचसरीयं केइसाहम्मिथाए पासेजा, कप्पति से तंसरीरयं  
 मासागरियंमि तिकट्टु तं सरीरायं एगंते अचिंचे बहुफासुए थंडिले पडिलेहिचा  
 पमज्जित्ता परिट्टुवित्तिए, अट्ठियया इत्थंकेइ साहम्मियं संतिए उवगरणजाए  
 परिहरणारिहे कप्पतिणं सागरकंडं गहाय दोच्चपि उगहं अणुवेत्ता परिहारं  
 परिहरिचए ॥ २१ ॥ सागारीए उवस्तयं वक्कएणं पडजेज्जा, सेयवक्कइयं वएज्जा,

स्थापन करना कल्पता है. बिना आचार्य रहना नहीं कल्पता है ॥ २० ॥ ग्रामानुग्राम विहार करते  
 हुये पाय अथवा साधवों में कोई साधु साधवी अर्चित आयुष्य पूर्ण कर जावे तब साधु के साधु भिक साधु  
 साधवी उस साधु साधवी के शरीर की ग्रहस्थ के शरीर प्रमाणे विटम्बना नहीं होवे ऐसा  
 विचार कर उस मृत्युक शरीर को एकान्त में लेनाकर उत्तम भूतिका को प्रति लेखकर प्रमर्गनकर परिटोवे  
 और उनका उचरण जो साधुके कामों अने लायक बचा डवा हो उसको गृहस्थ की आज्ञा पांगकर ग्रहण करे, उसे  
 नहीं आचार्य उपाध्याय होवे वही आवे. उन के सुमत वह उपाधी करे, जो आचार्य उपाध्याय वह  
 उपाधी उस साधुको देवे तो उन ही आज्ञा से उसे ग्रहण कर भोगवे ॥ २१ ॥ जिस प्रकार स्थानक में

५ जपन्य पत्र कर्म की विद्या वाली आर्याको भी आचार्य पदपर स्थापन फला, ऐसा कर्म में लिखा है.

इमंभियं २ उवासेसमणा गिरगंथा परिव्रसंति, से सागरिए परिहारिए सेयणो एवं वएजा वक्कइएवएजा इमंभिय २ उवासे समणा निगंथा परिवसंति से सागरिए परिहारिए दोविए एवं वएजा जात्र दाविते सागरिया परिहारिया ॥ २२ ॥ सागा-रिए उवरसयं विक्किणेया सेयवक्कइयं वदेजा, इमंभिय २ उवासे समणा निगंथा

साधु रहे हैं उस मकान का मालक उस मकान के छोड़ीं विभाग को मोटे देवे. तब वह मकानवाला साधु से कहे कि इस कमरे में आप रहो पेरी आशा है, इतना मकान मोटे दिया है. उस में भांडेती रहेगा. तो साधु उस मकान के घणी को शैयांतर भान कर उस के घर से आहम आदि ग्रहण नहीं करे. कदापि घर का मालक गृहस्थ कुछ नहीं पाले वह मकान भांडे देवे. तब माहेलेने वाला कहे कि अहो साधु गुमाइतगे मकान में रहो पेरी आशा है. तो साधु यहाँ रह और उस भांडेती को शैयांतर पानकर उस के घर का आधार पानी ग्रहण नहीं करे. कदाचित्त घर का पाछिक और शैयांतर दोनों ही कहे हमारी आशा है आप यहाँ रहेतो साधु मकान के पाछिक को और माहेती का दोनों को शैयांतर मानकर दोनों के घर का आधार पानी आदि ग्रहण नहीं करे ॥ २२ ॥ जिस मकान में साधु राते है उस का मालक किसी को मकान बेचता है. उस के पहिले ऐसा कहे कि इतनी जगह साधु के रहने को है. पक्ष इतने दिन यह साधु रहे पेरी आशा है. तो साधु रहे और उस

सुत्तं उवासेसमणा गिरगंथा परिव्रसंति, से सागरिए परिहारिए सेयणो एवं वएजा वक्कइएवएजा इमंभिय २ उवासे समणा निगंथा परिवसंति से सागरिए परिहारिए दोविए एवं वएजा जात्र दाविते सागरिया परिहारिया ॥ २२ ॥ सागा-रिए उवरसयं विक्किणेया सेयवक्कइयं वदेजा, इमंभिय २ उवासे समणा निगंथा



## ॥ अष्टम उदर्या ॥

गिहीडुपजोसविण ताए गिहाए ताए यएसाए ताए उवासंतराए जमिण सेजासथरयं  
लभेजा तमिणं तमियं मवेवतिया थेरायसे अणुजणेजा तरसेवसिया थेरायसे जो  
अणुजणेजा, जो तरसेवसिया एवं से कप्पति आहारपाणियाए सेजासंधारयं परिग्ग-

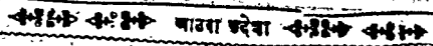
साधुओं चौपासा करने के लिये किसी ग्रामादि में गये पाषा अयात्र से आगे और क्रांतिसे पीछे अर्थात्  
कार्तिक पूर्णिमा पर्यन्त रहने को इच्छे वहाँ रहने को स्थानकमहान की याचना की उस में कोई योग्य  
स्थान देखकर कोई साधु रत्नादि गुरु से कहे कि यह कोई ठी कपरा इतना अंदर के प्रदेश और इतना  
बाहिर का प्रदेश श्लेषमादि परिठाने की जगह परे नेश्राय में रखू यहाँ में संयारा ज्ञयन करुंगा वैदुंगा  
स्वध्यायदि करुंगा. इत्यादि कारणसमें रखुं? तब स्थविर उस के स्वभाव से मुख मुख दिसे अर्धुत करल  
स्वभाव जान कर आश्रद कि यह तुमारी नेश्राय में रहने दे. इस प्रकार स्थविर आह्लादेवे तो आप उस  
भोगनेवहाँ परे. और जो स्थविर उसे घृत घृति जाने कंदर्पदि इच्छा से यह जगा रखतो है ऐसा जानने से  
आवेतो उसे कहे कि पहिले वहे फिर उन से छोटे फिर उन से छोटे जगह ग्रहण करते  
जो तुमारे नेश्राय में जगा अब उसे ग्रहण करारो. सो उस ही प्रमाण कर पथमा रत्नादि ग्रहण किये

हितं ॥ १ ॥ से अहालहुस्सयं सेजासथारगं गवेसेजा जचक्विया एगेहथेण  
 आगिञ्चिय २ जात्र एगाहंवा दुयाहंवा तियाहंवा अच्चाणं परिवहिचाए एसमे हेमंतं  
 गिम्हासु भविस्सति ॥ २ ॥ से अहालहुस्सयं सेजासथारयं गवेसेजा अचक्विया  
 एगणहत्थेण उणिञ्चिय २ जात्र एगाहंवा दुयाहंवा तियाहंवा अच्चाणं परिवहिचाए,  
 एसमे वासासु भविस्सति ॥ ३ ॥ से अहालहुस्सगं सेजासथारयं गवेसेजा जचक्विसा

चारं मकानं विछीना पंढ पाटलादि आप ग्रहण करे ॥ १ ॥ जो गाढ पाटला संथारक-पराळ  
 आदि याचन किये उस को एक हाथ से उठासके उठाकर एक दिन के पंथ जितनी ट/से  
 यथावा दो दिन के पंथ जितनी दूसरे अथवा तीन दिन के पंथ जितनी दूसरे लपक  
 अर्थन उसगाम में नहीं मिलितो दूसरे ग्राम से लानके तो चार महिने शीत काल और चार महिने  
 उष्ण काल के दिन में इतनी दूरसंले आना कल्पता है ॥ २ ॥ जे शैथ्या मंधरे के इच्छरु मापु छाया  
 हलकी पाट संथारा आदि की गवेपना करे और उसे एक हाथ में ग्रहण कर उठा लाने सपुर्थ होवे याचन  
 रासे में एक दिन दो दिन तीन दिन मिश्रामले करनी लान के तो जुभास के लिये ले आना कल्पता  
 है ॥ ३ ॥ यह शय्या संथारा का अर्थ सापु छाया हलका शय्यपाट या रागरा दिदि की याचन करे

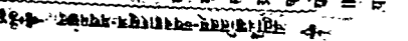
एणेण हृत्थेण उगिञ्जिय २ जाण एगाहंथा दुयाहंथा तियाहंथा चउयाहंथा पंचाहंथा  
दुरमन्त्रि अद्धानं परिवहत्तए, एसमे बुढावासासु भन्त्रिस्सति ॥४॥थेराणं थेरभूमि पत्ताणं  
कप्पति देउएवा, भंडएवा, छचएवा मत्तएवा, लड्डियंवा, भिसिंवा, चेलेवा, चेलिचिलि-  
मिलिवा, चम्मंवा, चम्मकोसंवा, चम्मपल्लिकएणं, अविरहित, उवासेट्टवेत्ता, गाहावति

पिले, उमे एक शय्य में बठाकर एक दिन में दो दिन में तीन दिन में चार दिन में पांच दिन में इतनी  
२ के रास्ते लापके तो खाना कल्पता है, चिन्तने की यह मेरी बृद्ध कायाको आश्रय भूत होगा ऐसा जान  
। कल्पता है (स्थवास्ति कलिये)॥४॥ अब स्थविरकी उपाधी करते हैं ॥ जो स्थविर साधुकी मूर्धिका  
प्राप्त हुये हैं, उनको इतने उपकरण कल्पते हैं- १ दंढ-रास्ते में आश्रय भूत, २ मंद-अधिक पात्र, ३  
प्र ताम चार्पाद की रसार्थ, ४ मट्टी के बर्तन, ५ मारीया-लघुनीत के लिये, ६ लघु टोकेलेने कृष्ट पीछे  
केपटिया, ७ समुदाय समणोदि करने बैठते को पाटला, ८ आहार करते कोई जंतू आहार में न रहे  
। र का अंश/ बचन का दस चिकित्सी, ९ पान में चर्श। पहनाय भीर चला नहीं जाय जो यहाँ  
के लिये चमड़े का टुकड़ा, १० किमी-गुल रोगादि पर बाने चमड़े की कोथली, ११ किसी रोगादि  
स्थान बंधने चमड़े का टुकड़ा, इन उपकरणों में से जो उपकरण उठाकर साथ लजान असमर्थ हो  
उन को उपाश्रय के तमीक में रखते हुये गुहस्थ के यहाँ रखकर गौचरी एदी नीत आदि कारण के लिये



कुलं, भस्त्राएवा, पाणएवा, पविसिचएवा, निक्कमिचएवा. कप्पतिसे संभियद्वचारीणं  
 दोच्चपि उगगहं, अण्णुणवेत्ता, परिहारं परिहरिचएवा ॥ ५ ॥ नो कप्पति निगंथाणवा  
 नीगंथीणवा, पडिहरियंवा, सागारियंवा, सतियंवा, सेज्जासंथारगं दोच्चपि उगगहं  
 अण्णुणवेत्ता यहियाणीहरिचएवा ॥ ६ ॥ कप्पति निगंथाणवा निगंथीणवा  
 पडिहरियंवा सागारियंवा संतियंवा सेज्जासंथारगं दोच्चपि उगगहं अण्णुणवेत्ता

बाहिर आने और पीछे आवे तब गृहस्य को आज्ञा लेकर उन को ग्रहण कर ले. उन को भोगवे. परंतु  
 गृहस्य के घर एवं गंगे वाट्ट पीछा आकर गृहस्य की आज्ञा बिना ग्रहण नहीं करे क्योंकि गृहस्य को  
 संशय होवे कि कोई चोरादि तो न लगय, इस लिये भिन्नो वक्तु ग्रहण करे उतनी वक्तु आज्ञा केकराही  
 ग्रहण करे ॥ ५ ॥ माधु साधवी एक स्थान गहत हुए गृहस्य के यहाँ से पहिहार (छोड़ हुवे पीछा दे प्येते)  
 पाट पराले आदि वाचकर लाया हो. वसे एक पकान का छोड़ दूसरे पकान में जात तथा एक ग्राम  
 छोड़ दूसरे ग्राम जात जिन गृहस्य की घर वस्तु है उस को पुंज बिना ग्रहण कर लेजाना कल्पता नहीं है  
 ॥ ६ ॥ परंतु माधु साधवी गृहस्य के यहाँ से पहिहार पाट पाट्या पगल जो लाय है वे दूसरे पकान में  
 या दूसरे ग्राम में लेजाना हो तो उन की आज्ञा मांगकर वे आज्ञा दे वो बाहिर लेजाना दण्यता है ॥ ७ ॥



एगण हृत्थेण उगिञ्जिय २ जाण एगाह्वा दुयाह्वा तियाह्वा चउयाह्वा पंचाह्वा  
 दुरमत्रि अद्धाणं परित्रह्त्तए, एसमे बूढावासासु भविस्सति ॥४॥थेराणं थेरभूमि पत्ताणं  
 कप्पति दंडएवा, भंडएवा, छत्तएवा मत्तएवा, लट्ठियंवा, भिसिंवा, चेल्लेवा, चेल्लिचिल्लि-  
 मिलिंवा, चम्मंवा, चम्मकोसंवा, चम्मपल्लिच्छणं, अविरहितं, उवासिद्धवेत्ता, गाहाव्रति  
 मिले. उसे एक हाथ में बठाकर एक दिन में दो दिन में तीन दिन में चार दिन में पांच दिन में इतनी  
 दूरके रास्ते लापके तो लाना कल्पता है, चिन्तने की यह घरी बृद्ध कायाको आश्रय मनु होगा ऐसा जान  
 लाना कल्पता है (स्थिरवास्ति कल्पिये) ॥४॥ अब स्थानोंकी उपाधी करते हैं ॥ जो स्थान साधुकी मूर्धिका  
 को प्राप्त हुये हैं, उनको इतने उपकरण कल्पते हैं: १ दंड-रास्ते में आश्रय भूत, २ मंड-अधिक पात्रे, ३  
 छत्र ताम चापाद की रसायं, ४ मट्टी के वर्तन, ५ मधीया-लघुनीत कं लिय, ६ वाष्टिक टेकालेने पृष्ठ पीछे  
 रखने के पट्टिवा, ७ साध्याय स्मरणादि करने बैठते को पाटला, ८ आहार करते कोई जंतू आहार में न पड़े  
 इस प्रकार का आटा बंधन का इत्थ चिकपिळी; ९ पान में चाँदी परतना और चला नहीं जाये तो चरां  
 बंधन के लिये बसंटे का टुकड़ा, १० किसी गुह्य रोगादि पर बंधन बंधन की कोयली, ११ किसी रोगादि  
 स्थान बंधने बंधन का टुकड़ा, इन उपकरणों में से जो उपकरण उठाकर साथ लजान असमर्थ हो  
 उनको उपाश्रय के नजीक में रखे हुये गुह्य के यहाँ रखकर गौचरी बंधी नीत आदि कारण के लिये

कुलं, भक्ताएवा, पाणाएवा, पधिसिस्तएवा, निक्खमित्तएवा, कप्पत्तिसे संभियद्वचारीणं  
 दोच्चंवि उग्गहं, अण्णुणवेत्ता, परिहारं परिहृत्तएवा ॥ ५ ॥ नो कप्पति निगंथाणवा  
 निगंथीणवा, पाडिहरियंवा, सागारियवा, सतियंवा, सेज्जासंथारगं दोच्चंविउग्गहं  
 अण्णुणवेत्ता बहियाणीहृत्तएवा ॥ ६ ॥ कप्पति निगंथाणवा निगंथीणवा  
 पाडिहरियंवा सागारियंवा संतियंवा सेज्जासंथारगं दोच्चंवि उग्गहं अण्णुणवित्ता

बादिर आने ओर पीछे आने तब गृहस्थ को आज्ञा देकर उन को प्रार्थन कर ले. उन को भोगने, परंतु  
 गृहस्थ के घर रख गये वाट पीछा आकर गृहस्थ की आज्ञा बिना प्रार्थन नहीं करे क्योंकि गृहस्थ को  
 संशय होवे कि कोई चोरादि तो न लाये, इस लिये मित्रों रक्त ग्रहण करे उतनी वस्तु आज्ञा देकर ही  
 प्रार्थन करे ॥ ५ ॥ साधु साधु एक स्थान रहत हुए गृहस्थ के यहाँ से पढ़िहारा (घाँठ हुवे पीछा दे पैसे)  
 पाट पराले आदि वाचकर लाया हा. उसे एक पकान का छोटा दूसरे पकान में लात तथा एक प्राय  
 छोटा दूसरे प्राय जांत जिम गृहस्थ की वर वस्तु है उस को पूछ विना प्रार्थन कर लेजाना कल्याता नहीं है  
 ॥ ६ ॥ परंतु साधु साधु गृहस्थ के यहाँ से पढ़िहार पाट पाट्या पगल जो लाय है वे दूसरे पकान में  
 या दूसरे प्राय में लेजाना हाँ तो उन की आज्ञा माँगकर वे आज्ञा दे तो बाहिर लेजाना कल्याता है ॥ ७ ॥

ब्रह्मियाणिहरित्प ॥ ७ ॥ नो कल्पति नेत्राधाणत्र निगंधीणत्रा यद्विहरियंवा सागाग्रियं स तेय-  
 वा सेजासंथारगं पच्चिणित्ता दोच्चपि तमेव उगहं अणुणनेत्ता अहिट्टित्प ॥ ८ ॥  
 कल्पति निगंधीणत्रा निगंधीणत्रा पडिहारियंवा सागारियं संतियंवा सेजासंथारय  
 पच्चपिणित्ता दोच्चपि उगहं अणुणवेत्ता अहिट्टित्प ॥ ९ ॥ नो कल्पति निगं-  
 थाणत्रा निगंधीणत्रा पुञ्जामेव उगहं ओगिणित्ता ततोपच्छा अणुणवित्ता कल्पति  
 निगंधीणत्रा निगंधीणत्रा पुञ्जामेव उगहं अणुणवित्ता ततोपच्छाओ गिणित्ताएवा

साधु साध्वी किसी स्थान में रहे वहाँ रहे पाट पाटला पराळ मकान की आज्ञा ग्रहण की है उस में से  
 अधिक लेवे नहीं तथा जिनने पाटादि की आज्ञा उन गृहस्थ का पीछी सुभरत करदी है और उनको पीछी  
 दूसरी वक्त चहा शत्रे तो गृहस्थ की आज्ञा ग्रहण किया बिना भोगवना नहीं कल्पता है ॥ ८ ॥ परंतु  
 साधु साध्वी को फिर उन को गर्न हो तो पीछी याचना करनी आज्ञा लेनी वह आज्ञा दे तो उन को  
 भोगवना कल्पता है ॥ ९ ॥ स्थानक पाट पाटवे के मालक की प्रथम आज्ञा बिना स्थान में उतरना  
 पाट पाटले भोगवना नहीं कल्पता है परंतु प्रथम भंडोपकरण अपने शरीर परही धारन किये हुवे  
 मकान पाट पाटला पराळ जो कल्पता उस की आज्ञा याचले, फिर उस मकान में उतरे पाट पाटला पराल  
 भोगवे ॥ कदाचिन ऐसा ही प्रसंग आजावे कि यहाँ यह उतारे के लिये एक ही मकान है दूसरा मकान

०० ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥

अर्थ

अहापुण एवं जाणंती, इह खलु निगंधाणवा निगंधीणवा णी सुलने सेजासिथा-  
 राएतिकट्टु एवं कप्पति पुत्रामेव उगहं उगिण्हता ततोपच्छा अण्णुणविष्ठा  
 मादुहओ अजीवत्तियं अणुलोमेणं अणुलोमेयन्वेमिया ॥ १० ॥ निगंधरस गाहावति  
 कुलं पिंडवाय पडियाए अणुप्पविट्टुस्स अहालहुरसए उवकरणजाए परिमट्टेमिया तं च  
 केइ साहंमिया पासेजा कप्पति से सागारकडंगहाय जत्थेवते अण्णमण्ण पासेजा,  
 मिठने का अपंपव है और यहाँ जो जगसंभले में देर हो जावेगी तो अन्य कापादिया दिक आत्रावेगे  
 जित से फिट भगा हाथलगनी मुशकिल हो जावेगी, एसा अवसर देखते आहा लिया बिना ही प्रथम यहाँ  
 भंडोपकरण की स्थापना का फिर आहा लेने जावे, इतने में यह ग्रहस्थ के पायमान हो लटने लग जावे और  
 माथुओं उमे कठोर बचन कर उत्तर देते हैं तो आचार्य अपने साधुओं को कहे कि एक तो इस के मकान में  
 बिना पूछे उरि और दूगरा कठोर बचन कहते हो, यह योग्य नहीं है, काम पीठास से होता है, इत्यादी  
 काम उचन कर संतोषित करे ॥ १० ॥ किसी स्थान बहुत से साधु रहे उन में से कोई साधु ग्रहस्न के  
 या किसी भंडोपकरण को भूक आया, फिर दूसरा कोई साधु यहाँ गया हो तब गृहस्थ उनको  
 देना कहे कि यह भंडोपकरण आप के साधुकाई सोले जावे। तब बट माथु उभ भंडोपकरण को लेकर  
 आपे स्थान आये, तब साधुओं को बतावे कि यह जिन का होवे वह प्रार्थन करो तब गो कोई साधु संधी



बहियाणिहरित्पए ॥ ७ ॥ नो कल्पति निरगंधाणवा निरगंधीणवा पंडिहरियंवा सागारियं स तियं-  
वा सेजासथारगं पच्चिणिता दोच्चोप तमेव उगहं अणुणवेचा अहिट्टित्पए ॥ ८ ॥  
कप्पति निरगंधाणवा निरगंधीणवा पंडिहरियंवा सागारियं संतियंवा सेजासथारय  
पच्चविणिता दोच्चोपि उगहं अणुणवेचा अहिट्टित्पए ॥ ९ ॥ नो कप्पति निरगं-  
थाणवा निरगंधीणवा पुन्वामेव उगहं ओगिणिता ततोपच्छा अणुणविता. कप्पति  
निरगंधाणवा निरगंधीणवा पुन्वामेव उगहं अणुणविता ततोपच्छाओ गिणिताएवा

साधु साधु किसी स्थान में रहे वहाँ रहे पाट पाटो पराल मकान की आशा ग्रहण की है. उन में स  
अधिक लेवे नहीं, तथा जिनने पाटादि की आशा उन गृहस्थ को पीछी सुरत करदी है और उनको पीछी  
दूसरी वक्त चहा होवे तो गृहस्थ की आशा ग्रहण किया विना भोगवना नहीं कल्पता है ॥ ८ ॥ परंतु  
साधु साधु को फिर उन को गर्म हो तो पीछी याचना करनी आशा लेनी वह आशा दे तो उन को  
भोगवना कल्पता है ॥ ९ ॥ स्थानक पाट पाटवे के मालक की पथप आशा जिया विना स्थान में उतरना  
पाट पाटले भोगवना नहीं कल्पता है. परंतु प्रथम भंडोपकरण अपने शरीर परही धारन किये हुवे  
मकान पाट पाटला पराल जो कल्पता उस की आशा याचले, फिर उस मकान में उतरे पाट पाटला पराल  
भोगवे ॥ कदाचित्त ऐसा ही भोग आशवे किं यथा यह उतारे के लिये एक ही मकान है दूसरा मकान

अहापुण एधं जाणेज्जां, इह खलु निर्गन्धवा निर्गन्धीगवा णीं सुलभे सेजासंथा-  
 राएतिकट्टु एवंण कप्पति पुव्वामेव उगगहं उगिण्हता ततोपच्छा अण्णुणवित्ता  
 मादुहओ अज्जीवत्तियं अणुलोमेणं अणुलोमेयव्वेमिया ॥ १० ॥ निर्गन्धस गाहावति  
 कलं पिडवाय पडियाए अणुप्वविट्टुस अहालहुरसए उवकरणजाए परिभट्टुभिया तंच  
 केइ साहंमिया पासेज्जा कप्पति से सागारकडंगहाय जत्थेवते अण्णमण्ण पासेज्जा,  
 मिळने का अमंथव हे. और यहाँ जो जगसंभलने में देर हो जावेगी तो अन्य कापटिया दिक आत्रावेगे  
 नित से फिर अगा हाथलगनी मुशकिल हो जावेगी, एसा अवसर देखते आंहा लियो विना ही प्रथम वहाँ  
 भंडोपकरण की, स्थापना का फिर आंहा लेने जावे, इतने में वह ग्रहस्थ के पायमान हो लटने लग जावे और  
 माधुओं उमे कठोर वचन कर उत्तर देते हैं तो आचार्य अपने साधुओं को कहे कि एक तो इस के मकान में  
 विना पूछे उरि और दूगरा कठोर वचन कहते हो, यह योग्य नहीं है, काम पीवास से होता है, इत्यादी  
 क्रोमठ वचन कर संतोषित करे ॥ १० ॥ किमी स्थान बहुत से साधु रहे उन में से कोई साधु ग्रहस्त के  
 या किमी भंडोपकरण को भूल आया, फिर दूसरा कोई साधु वहाँ गया हो तब गृहस्थ उनको  
 देतर कहे कि यह भंडोपकरण आप के साधुकाँद सोले जावे, तब वह साधु उस भंडोपकरण को लेकर  
 अपने स्थान अने, तब साधुओं को बतावे कि यह जिन का होवे वह प्रण करो. तब जो कोई साधु संधी

तत्थ एव वदेजा इमेते अजो ! किपरिणाए ? सेय यदेजा परिणाए तस्सेव परिणिजा  
यवेसिया । से वदेजा णो पारणाए त णोअप्यणा परिभुंजाए णो अन्नासिदावए पंगंतवहु  
फासुएपदसे पडिलेहिचा पारटुव्वेसिया ॥ ११ ॥ निगंथस्स बहिया विहारभमिवा  
विधारभमिवा णिक्खंतस्स अहल्लहुस्सए उवगरणजाए परिभट्टेसिया ।  
तंचेव कइसाहम्मिया पासजा, कप्पतिसे सागारकडगहाय जत्थेचत्ते  
अणमण पासजा तत्थेव एवं वएजा, इमेते अजो ! कि परिणाए ?

कहूँ करे कि हीं यह मेरी नेत्राय काहे में भूल आया, तब उस के सुमत करे. और वे सब ही कहे कि इग का  
मातुप नहीं यह किस का है, तब उस भंडापरकण को बह लाने वाला साधु भी नहीं भोगवे दूसरे  
साधु माधी को भी नहीं देवे परंतु एक न्त फलुक बहुत निर्दोष स्था क देखकर पूनकर उन भंडेपे  
करण को पडि देवे ॥ ११ ॥ साधु साधी अपान्नाम फितं हवे किस स्थान कोइ भंडोपकरण भू  
जवे और पीछे में कोइ साधु भवे उवे भंडोपकरण गृहस्थ देवे तब उवे गृहस्थ का यका ग्रहण कर जा  
अन्य बहुत साधु होवे वहाँ जाकर उमे बतावे, तब वे साधु साधी कह इयारा नहीं दे अपुन का हे त  
साधु उस के पास आवे वह भी कहे कि मेरे को मालु नहीं यह किस का हे, तब वह भंडोपकरण लाने  
वाला साधु उस को आप भी नहीं भोगवे दूसरे को भी नहीं देवे परंतु एकान्त में जाकर फासुक निर्दोष

११ ॥ निगंथस्स बहिया विहारभमिवा विधारभमिवा णिक्खंतस्स अहल्लहुस्सए उवगरणजाए परिभट्टेसिया ।

सुत्र

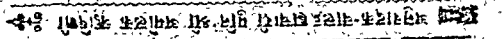
अर्थ

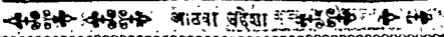
? सेय वएजा परिणाए, तस्सेव परिणिज्जायव्वेसिया, सेयवएजा णो परिणाए  
 ते नो अप्पणापरिभुंजए णो अण्णेहिं दावए एगंते बहुफासए पंदसे पडिल्लहिंत्ता.  
 परिट्टवेयव्वंसिया ॥ १२ ॥ निराश्रम गामाणुगाम दुत्ताज्जमात्तए अण्णये उवक-  
 रणजाए परिभट्टेनिया, तेच केइ साहम्मिया पामेज्जा कव्वत्त न मागारदल्ल गहाय,  
 दूरमवि अक्खणं परिवाहत्तए, जत्थेव अण्णमण्ण पामज्जा तस्थथ एव वएजा, इमेते  
 अज्जा ! किं परिणाए ? सेय वदेजा परिणाए, तेस्सेव परिणिज्जायव्वेसिया, सेय  
 वएजा णो परिणाए, तं नो अप्पणापरिभुंजए, णो अण्णेहिं दावए, एगंते बहुफानुए

स्थानक मिलेलेतर पुंमकर यत्ना से परिठ देवे ॥ १२ ॥ माधु साधवी उपश्रय के बाहिर थंडल की  
 भूषी का, अथवा स्वाध्याय की मूष का ये गमनागमन करते हुवे कोई छोटा बडा उपकरण  
 भूठ आवे पर त्थि साधु साधा के जते माने हष्टी आवे तो उो मी गृहस्थ की  
 आशा लेतरं ग्रहण कर स्थान आवे, और माधु साधवी को कहे कि अहो मर्षो ! यह उपकरण  
 किस का है ? तब जो कोई कहे यह मेरा है, तो जिस का हो उग को देवे, और वे पाधु माधवी बोले  
 कि हमारे का नहीं मालुम यह किस का है, तब उप को न तो आप भांगवे और न अन्य को, द परंतु  
 एतान अचित्त फूसुक भूषी का देलकर परिठा देवे ( उपकरण परिठाने का कारण यह

पदेसे पडिलेहिता परिदृष्टेयञ्चेसिया ॥ १३ ॥ कप्पति निगंथाणवा निगंथीणवा  
 अतिरेगं पडिग्गहं अणमणस्स अट्टापे दुरमत्ति अह्माणं परिवाहित्तए, सोत्तणं  
 धारिस्सइ अहत्तण धारिस्समि अण्णेत्तणं धारिस्सइ नो से कप्पति ते अणपुच्छियञ्चा  
 अणानिमत्तिय अणमण्णेसि दाओवा अणुप्पदाओवा, कप्पति सेतं अपुच्छियं आमत्तिय  
 अणमण्णेसि दाओवा अणुप्पदाओवा ॥ १४ ॥ अट्टुकुकडअडग प्पमाणमित्ते कवल्ले  
 आहारं आहारेमाणे समणे निगंथे अप्पहारै, दुवल्लस्सक कुकड अडग प्पमाणमित्ते  
 कवल्ले आहारं आहारेमाणे समणे निगंथे अवह्णामोयरिया, सोल्लस्सकुकड अडगप-

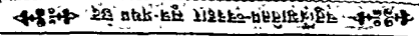
बनाया है कि उनमाधु के पास पर्याप्त उपकरण होने से अधिक खर्च सकते नहीं है इसलिये परिठा देवे )  
 ॥ १३ ॥ कोई माधु माधवी को कहीं पावादि की प्रती हुई हो तब वह विचार कि मेरे तो खर्च नहीं है  
 परंतु थपुक साधु को खर्च है इस लिये यह लल्लू, यों विचार कर उस ले लेवे और जिस ग्राम में वह साधु  
 होने वरदा आते, तब वह कहे कि मेरे को तो खर्च नहीं है, मय वहां पत्र जा बंद नाघ होने उन के पास  
 ल जाते उन को बनाय विना दूतरे को आमनण करना नहीं कल्पता है परंतु बड़े भाधु को बनाये वाद वे  
 कहे कि जिस के खरता है उसे दे दो, तो जिस को खपना होवे उस को वह पावादि देवे ॥ १४ ॥  
 १ माधु त्रिग्रय कूकड अड प्रमाण एक ग्राम ऐसे आठ ग्राम लेवे तो अल्प आहारी, २ कूकड क बंद





माणमित्ते कचले आहारं आहारमाणे समणे णिगंथे दुभागपत्ते, च उव्वीसं कुकड  
 अंडगप्पमाणमित्ते, कचले आहारं आहारमाणे समणे णिगंथे पत्तोमोयरियां ॥ वचीमं  
 कुकड अंडगप्पमाणमित्ते कचले आहारं आहारमाणे समणे णिगंथे प्पमाणपत्तेरिएत्तो,  
 एणेणविधासेणं ऊणं आहारं आहारमाणे समणे णिगंथे णां पग्गमरस भोइतिवत्तव-  
 सिया ॥ चिबेसि ॥ त्रिवहार सूयस्स अट्टमोइत्तो सम्मत्तं ॥ ८ ॥ \* \* \* \*

प्रमाण वारा कबल का आहार करे तो तो पोण उणोदरी तप, कुकड के सोलह अंड प्रमाण जो साधु आहार  
 करे तो उसे आधी उणोदरी तप कहना, कुकड के अंड प्रमाण चौबीस ग्राम का आहार करे तो उस को  
 पाव उणोदरी तप कहना, कुकड के अंड प्रमाण एक ग्राम ऐसे चत्तीस ग्राम का आहार करे उन, साधु  
 को प्रमाणोपेत आहार का करनेवाला कहना, और चत्तीस ही ग्राम में से एक ही ग्राम कभी आहार  
 करनेवाला साधु होवे तो उस को पप्रामरम का भोक्ता नहीं कहना अर्थात् उणोदरी तप करनेवाला कहना,  
 यह तीसरी सूत्र का आठवा उर्ध्वा संपूर्ण हुआ ॥ ८ ॥



पदेसे षडिलेहिता परिद्वेयव्येसिया ॥ १३ ॥ कप्पति निगंथाणवा निगंथीणवा  
 अतिरेगं पंडगहं अणमणस अट्टापे दुरमत्ति अद्धानं परिवाहित्तए, सोथाण  
 धारिसइ अहत्ताण धारिससामि अण्णेत्ताणं धारिसइ नो से कप्पति ते अणापुच्छियव्वा  
 अणानिमत्तिय अणमण्णेसि दाओत्ता अणुप्पदाओत्ता, कप्पति सेतं आपुच्छियं आमत्तिय  
 अणमण्णेसि दाओत्ता अणुप्पदाओत्ता ॥ १४ ॥ अट्टुकुडअंडग प्पमाणमित्ते कवल्ले  
 आहारं आहारमाणे समणे णिगंथे अप्पाहारं, दुवाल्लस्सक कुकड अंडग प्पमाणमित्ते  
 कवल्ले आहारं आहारमाणे समणे णिगंथे अन्नद्धामोयरिया, सोल्लस्सकुकड अंडगप्प-

चनाया है कि उनसाधु के पास पर्याप्त उपकरण होने से अधिक खर्च सकते नहीं है इसलिये परिठा देवे )  
 ॥ १३ ॥ कोई साधु माध्यों को कही पात्रादि की मंती हुई हो तब वह विचार कि भेरे तो खप नहीं है  
 परंतु चमुक साधु को खप है इस लिये यः लेल्ले, यों विचार कर तस ले लेवे और जिस ग्राम में वह साधु  
 होते वहाँ आवे, तब वह कहे कि भेरे को तो खप नहीं है, तब वहाँ पत्र जा बड नाधु होते उन के पास  
 ले जावे उन को वनायं विना दूगरे को आपंण करना नहीं कल्पता है परंतु बडे पाधु को वनाये चाद वे  
 कहे कि जिस के स्वता हो उभे दे दो, तो जिस को खपना होवे उम को चह पात्रादि देवे ॥ १४ ॥  
 १. साधु त्रिभूय कूकड अंड प्रमाण एक ग्राम एसे आठ ग्राम लेवे तो अल्प आहार, २. कूकड के अंड

१. २. ३. ४. ५. ६. ७. ८. ९. १०. ११. १२. १३. १४. १५. १६. १७. १८. १९. २०.

माणमित्ते कवल आहार आहारमाणे समणे णिगंथे दुभागपत्ते, च उव्वीसं कुकड  
 अंडगप्पमाणमित्ते, कवले आहार आहारमाणे समणे णिगंथे पत्तामोयरिया ॥ वत्तीम  
 कुकड अंडगप्पमाणमित्ते कवले आहार आहारमाणे समणे णिगंथे प्पमाणपत्तेरिएत्ते,  
 एणेणविधासेणं ऊणं आहार आहारमाणे समणे णिगंथे णा पग्गमरस भोइत्तिवत्तव-  
 सिया ॥ त्तिवेमि ॥ त्रिवहार सूयस्स अट्टमोद्धसो सम्मत्तं ॥ ८ ॥ \* \* \* \*

प्रमाण बारा कवल का आहार करे तो पोंण उणोदरी तप, कुकड के सोलह अंड प्रमाण जो साधु आहार  
 करे तो उसे आधी उणोदरी तप कहना, कुकड के अंड प्रमाण चौबीस ग्राम का आहार करे तो उस को  
 पाव उणोदरी तप कहना, कुकड के अंड प्रमाण एक ग्राम ऐसे वत्तीस ग्राम का आहार करे उन साधु  
 को प्रमाणपेत आहार का करनेवाला कहना, और वत्तीस ही ग्राम में से एक ही ग्राम कभी आहार  
 करनेवाला साधु होवे तो उस को प्रग्रामरम का भोक्ता नहीं कहना अर्थात् उणोदरी तप करनेवाला कहना  
 यह नीशीय सूत्र का आठवा उदंशा संपूर्ण हुआ ॥ ८ ॥



# ॥ नवमम् उदेशा ॥

सागारियस्स आ अंतोवगडाए भुंजते णिट्ठिए णिसिट्ठे पाडिहारिए तम्हा दावए,  
 नो से कप्पति पडिग्गाहिच्चए ॥ १ ॥ सागारियस्स आएसे अंतो वगडाए भुंजति  
 णिट्ठिए णिसिट्ठे अपाडिहारिए तम्हा दावए, एत्थे से कप्पति पडिग्गाहिच्चए ॥ २ ॥  
 सागारियस्स आएसे बाहिं वगडाए भुंजए णिट्ठिए णिसिट्ठे पाडिहारिए तम्हा दावए नत्ते

श्रयंतर के यहाँ पाहुने आये उन के लिये आहार निपजाया वन को जीमने को घर के अंदर बाहर  
 आदि में बैठाये और उन को वह आहार देदिया, दंकर बोल कि इसमें से तुमारे को मीने णित्तमा  
 खावो वंचसो पीछा न्यको देदना. वह आहार पाहुना जीम लिय बंद आहार बचा हो वह साधु का  
 देना चहावे तो वह आहार साधु को नहीं करता है. क्यों कि बचा वह श्रयंतर का है ॥ १ ॥ श्रयंतराने  
 पाहुणे जीमाये घर के अन्दर बाडा आदि स्थान में बैठाये, उन को आहार आदि दंकर बोला तुमार  
 को लपे सो खाना बाकी पचे उस का तुमारी इच्छा मपाते करना, हमारे काम का नहीं है, वह बचा  
 हुआ आहार साधु को बरगावे तो साधु को लेना कल्पता है, क्यों कि वह श्रयंतर का नहीं रहा परम्पु  
 उस पाहुणे का होगया ॥ २ ॥ जैसे ही श्रयंतराने घर के बाहिर पाहुणे को जीमने बैठाये और मोजनानि

● महासंन्यसनाचार्यश्री लाला सुखदेव सहायकी व्यासभाष्यभाष्यकी ●

कल्पति पडिगाह्चिप ॥ ३ ॥ सागारियस्स आएसे बाहियगडाइ भुज्जइ णिट्ठिए  
 णिसिद्धे अपाडिहारिए तम्हा दावए एवं से कल्पति पडिगाह्चिप ॥ ४ ॥ सागा-  
 रियस्स दासेइवा पेसेइवा भायेइवा, भाइणइवा, अंतोयगडाए भुज्जइ णिट्ठिए णिसिद्धे  
 पाडिहारिए तम्हा दावए नोसे कल्पति पडिगाह्चिप ॥ ५ ॥ सागारियस्स दासेतिवा  
 पेसेतिवा भयश्रुतिवा, भतिण्णतिवा, अंतोयगडाए भुज्जति णिट्ठिए णिसिद्धे

परिहारादिषु अर्थात् उपादा रोगा वह इमको पीछा देदना, और यह आहार बढा हा वा साधु को लेना  
 नहीं कल्पता है ॥ ३ ॥ श्रेयार्थिने मःदुणे को घर के बाहिर जीमने को बैठाये भाजनादि परुषादिषु  
 और कहा उपादा हो तो हम नहीं लेंगे तुमः, इच्छा ममाने करना. वह बढा हुआ आहार जो साधु को  
 वैश्रवनि तो लेना कल्पता है. यह पणुणा के बार सूच करे ॥ ४ ॥ अब दामादि के कहते है. श्रेयार्थि  
 के यथा काम करने वाले दास दासी आमजीव तक काम करने वाले, प्रेमिक, प्रेमिका ( नोकर मर्यादित  
 काल प्रमाण काम करने वाले ) इन के वास्ते आहार निपत्रायां उन को खाने को दिया घर के अंदर बढे  
 आदि में जीमने को बैठाये और कहा कि तुपर को मन्त्रे जितना खाना चाकी बचे वह हमारे को पीछा देदना.  
 ये बढा हुआ आहार जो साधु को बहराब तो प्राण करना नहीं कल्पता है ॥ ५ ॥ श्रेयार्थि के दास  
 प ६ पर के अर्थ र ६ दि में जीमने को बैठाये और कहा यह तुमारा है

अपाडिहारिए तम्हा दावए एव से कण्पति पडिगाहिचए ॥ ६ ॥ सागारियस्स दास  
 इवा पेसेइवा अयइवा भईणीइवा वाहिंवागडाए भुंजंति णिट्टिए णिसिट्ठे पाडिहारिए  
 तम्हां दावए नो से कण्पति पडिगाहिंचए ॥ ७ ॥ सागारियस्स दासेतिवा पेसेइवा  
 मएइवा भगिणिइवा वाहिंवागडाए भुंजइ णिट्टिए णिसिट्ठे अपाडिहारिए तम्हा दावए  
 एव से कण्पति पडिगाहिचए ॥ ८ ॥ सागारियस्स णायएसिया सागारियस्स  
 एगवगडाए अंतो सागारियस्स एगवगडाए सागारियंच उवजीवइ तम्हा दावए नो

पढेगा तो हमारे काम का नहीं है. उन के भोगने बाद वह आहार बढजावे वे साधु को देने तो क्या  
 कल्पता है ॥ ६ ॥ शैर्यांतर के दास प्रेमक घर के बाहिर जाने बैठे ह उन को पादहार आहार आदिक  
 दिया है. वह अधिक हुये साधु को वहरावे तो ग्रहण करना नहीं कल्पता है ॥ ७ ॥ शैर्यांतर के दास  
 प्रेमक घर के बाहिर भोजन करने विठोये उन को भोजन देकर कहदिया कि इस का तुमारी इच्छा से  
 करो हम नहीं लेंगे. वह साधु को वहरावे तो ग्रहण करना कल्पता है ॥ ८ ॥ अब शैर्यांतर के स्वजनो  
 आश्रिया कहते हैं—शैर्यांतर के स्वजन शतीजन सम्वन्धी यो एक ही घर में रहते हों एक ही चूले  
 पर एक ही भोजन में जिन का भोजन तैयार होता होवे, उस से कर के सब आजीविका करते हों उस

से कथ्यति पडिगाहित्तए ॥ ९ ॥ सागारियस्स जायएसिया सागारियस्स एगगहाए अतो सागारियस्स अभिणियाए सागारियच्च उवजावति तग्हा दावए नोमे कथ्यति पडिगाहित्तए ॥ १० ॥ सागारियस्स जायए सिया सागारियस्स एगगहाडाए बाहि सागारियस्स एगपयाए सागारियच्च उवजीवति तग्हा दावए नो मे कथ्यति पडिगाहित्तए ॥ ११ ॥ सागारियस्स जायएसिया सागारियस्स एगगहाए बाहि सागारियस्स अभिणियाए सागारियच्च उवजीवति तग्हादावए नोमे कथ्यति पडिगा-

भाजन में भी साधु को देवे तो श्रेष्ठ, करना कह्यता नहीं है ॥ ९ ॥ श्रुतगतर के स्वजन श्रातीजन मन्त्रियों एक ही घा में रहते हों, एक ही बूते पर त्रि के लिये आहार होना हावे, उन का पनि प्रमत्त भी पैला हावे, परन्तु अलग र भाजन में आहार राधने हवे, वे उम से उर्जा मि कु करत, हावे यह आहार सधु को देवे तो श्रेष्ठ करना नहीं करता है ॥ १० ॥ श्रुतगतर के स्वजन श्रातीजन मन्त्रियों एक ही मकान में रहते हों, परन्तु श्रुतगतर के घर के बाहर खूले पर सब का आहार पाविल तैयार है त ही, उम से वे उपजीवि का चलते हावे, इस में से साधु को देवे तो श्रेष्ठ करना नहीं कथ्यति ॥ ११ ॥ श्रुतगतर के श्राती स्वजन सम्बन्धी एक ही घर में रहते हों परन्तु उन के आहार निमित्तने के खूले अलग रहे हों परन्तु अदि खुले के पानी भूने के पात्र एक ही हने कि प्रकार वे

हित्त्वा ॥ १२ ॥ सागारियश्च ण्यप्यसिधा सागारियश्च अभिनिवृत्तगडाएः एगदुवाराएः  
एगनिकस्वमण्यवेसाएः अंतो सागारियश्च एगपयाएः सागारियं च उवजीवद्भुः तम्हाः  
दावए नोसे कल्पति पडिगाहित्त्वा ॥ १३ ॥ सागारियश्च ण्यप्यसिधा सागारियश्च  
अभिनिवृत्तगडाएः एगदुवाराएः एगनिकस्वमण्यवेसाएः अंतोसागारियश्च अभिनिवृत्तगडाएः  
सागारियं च उवजीवति. तम्हाः दावए नोसे कल्पति पडिगाहित्त्वा ॥ १४ ॥ सागारियश्च

उपजीविका करते होते, इस में भे साधु को बहरावे तो प्रशण करना नहीं कल्पता है ॥ १२ ॥ यह तो एक  
एर आश्रिय कहा, जब अलग २ पर आश्रिय करते हैं. देवपातर के शर्तीजन स्वजन सम्बन्धीयो होते  
वे मयः अलग २ घर में रहते होते, परंतु इन सब घरों के निकटने का प्रवेश करने का एक ही रास्ता  
होये. सब का एक ही खूले पर भोजन तैयार होता हो, एक ही बरतन में पानी रहता हो. इस प्रकार  
वे आजीविका करते हो इन में से कोई साधु को आहार पानी देवे तो केना कल्पता नहीं है ॥ १३ ॥ देवपातर के स्वजन  
कृतिजन सब अलग २ घरों में रहते होते, सब घरों का एक ही द्वार होये. एक ही द्वार से निकलते  
प्रवेश करते होवे. परंतु अन्दर सब घरों बाहों के आहार पचाने का बूके अलग होये परंतु अन्दर  
पानी का बरतन सब ही का एक होये अर्थात् सब का भेजा पानी रहते होये इस प्रकार वे आजीविका  
करे होते, इस में से कोई साधु को आहार देवे तो केना कल्पता नहीं है ॥ १४ ॥ देवपातर के शर्ती स्वजन

भावपुंसिवा सागारियरसः अभिनिवृत्तमणपवेसाए एगदुवाराए, एगनिवृत्तमणपवेसाए बाहिंसा-  
 गारियरसः एगप्ययाए सागारियंष उवजीयति, तम्हा दावए नोसे कल्पति  
 परिगाहिणए ॥ १५ ॥ सागारियरस पायपुंसिया सागारियरस अभिनिवृत्तग-  
 दाए एगदुवाराए एगनिवृत्तमणपवेसाए बाहिं सागारियरसः अभिनिवृत्तपयाए सागारियंष  
 उवजीयति तम्हादावए एषं से नो कल्पति पडिगाहिणए ॥ १६ ॥ सागारियरस

बलग २ घर में रहते हैं। उन के कोटही-कमरे बलग २ हों परंतु बाहे का एक ही द्वार हो निकरने प्रवेश  
 करने का रास्ता एक ही हो। उन के भोजन पकाने का बूला एक हो परंतु पानी का भोजन अलग २ हो  
 उस में से कोई साधु को आहार आदि देवे तो प्रश्न करना कल्पना नहीं है ॥ १५ ॥ शय्यांतर के झानि  
 स्वप्न हो बलग २ घर में रहते हों घरों के द्वार अलग २ हो परंतु बाहे का द्वार एक ही निकलने का  
 प्रवेश करने का रास्ता एक ही हो। सब के पचने के बूके अलग २ हो। उन का पानों में अलग २ हवे।  
 परंतु निमक मिरची पसाला एक ही बरतन में भेजा रहता हो। इस प्रकार आहार निपजाकर आर्जविक  
 करते हो। इस में से कोई साधु को आहार देवे तो प्रश्न करना कल्पना नहीं है ॥ १६ ॥ अब शीयांतर की  
 पत्तु का कहने में शीयांतर की तेल पचने की दुकान है। वशा तल पचनेवाला अर्घ्य के ई है परंतु

वक्रियसाला साधारण वक्रपण्डिता तम्हा दात्रए नौ से कल्पति पडिगाहितए ॥ १७ ॥  
 सागारियस्स वक्रियसाला निमाहरणं वक्रपण्डिता तम्हा दात्रए एवं से कल्पति  
 पडिगाहितए ॥ १८ ॥ सागारियस्स गोलियसाला साधारण वक्रपण्डिता तम्हा  
 दात्रए नौस कल्पति पडिगाहितए ॥ १९ ॥ सागारियस्स गोलियसाला निमाहरणं  
 वक्रपण्डिता तम्हा दात्रए एवं से कल्पति पडिगाहितए ॥ २० ॥ सागारियस्स बोधि-  
 यसाला साधारण वक्रपण्डिता तम्हा दात्रए नौसे कल्पति पडिगाहितए ॥ २१ ॥

शेथानर का उम में विभाग (दिसा-पानी) है उस का क्रय विक्रय जाना है वह बेचनवाला उम के मे  
 तल मायु को देवे तो ग्रहण ना करना बरता नहीं है ॥ १७ ॥ शेथानर की दुकान है पंगु तेल बचने-  
 थाला कल्प है उस में शेथानर का दिसा-शार नहीं है, क्रय विक्रय बरता क पालना है, वह उम में से  
 तेल मायु को देवे तो वह ग्रहण करना बरता है ॥ १८ ॥ शेथानर की गुड बेचने की दुकान है उस में  
 शेथानर का भग-दिसा है, वह क्रय विक्रय युक्त है, उम में से गुड माघ का दान भी वह ग्रहण करना  
 बरता नहीं है ॥ १९ ॥ शेथानर की गुड बेचने के दुकान है, पंगु उस में शेथानर का कुल दिसा  
 नहीं है क्रय विक्रय करनेवाला का ही सब इत्यार, वह जो माघ को गुड देव तो ग्रहण कर श्रमा  
 बरता है ॥ २० ॥ शेथानर की दिकान की दुकान है, उस में शेथानर का दिसा है क्रय विक्रय  
 जाना है, उस में से कोई दिसा पना, उम का दान तो वह करना बरता नहीं है ॥ २१ ॥ शेथानर की

सागारिया चांद्रिसाला निसाहरण वक्ष्यप्यओत्ता तम्हा दावए एवं से कप्यति पडिगाहि  
 चए ॥ २२ ॥ सागारियस्म दोसियसाला साहरण वक्ष्यप्यओत्ता तम्हा दावए नोमे  
 कप्यति पडिगाहिचए ॥ २३ ॥ सागारियस्म दोसियसाला निसाहरण वक्ष्यप्यओत्ता  
 तम्हा दावए एवं से कप्यति पाडिगाहिचए ॥ २४ ॥ सागारियस्म सोतियसाला  
 साहरण वक्ष्यप्यओत्ता, तम्हा दावए नोसे कप्यति पाडिगाहिचए ॥ २५ ॥ सागा-  
 रियस्म सोतियसाला निसाहरण वक्ष्यप्यओत्ता तम्हा दावए एवं से कप्यति पाडिगा-

कमाने की दुकान हो परंतु उस में शेर्यांतर का हिस्सा नहीं है। फ्रग विक्रय करनेवाला ही मालक होने  
 उस में से प्रायु को कोई वस्तु देने तो लेना कल्पता है ॥ २२ ॥ शेर्यांतर के कपडे की दुकान होने  
 उप पर फ्रग विक्रय करनेवाला अत्रग हो, परंतु उस में शेर्यांतर का हिस्सा हो यां, उस दुकान में से  
 कपडे से यु को लेना कल्पता नहीं है ॥ २३ ॥ शेर्यांतर की कपडे की दुकान हो उस पर व्यपार दूसरा  
 करता है, उस में शेर्यांतर का हिस्सा नहीं हो, देनेवाला भी दूसरा हो तो उस में से कुछ प्रायु को लेना  
 कल्पता है ॥ २४ ॥ शेर्यांतर के सूत की दुकान हो व्यपार दूसरा करता हो परंतु उस में शेर्यांतर का  
 हिस्सा हो उस में से कोई मूर्ति देने तो प्रायु को लेना कल्पता नहीं है ॥ २५ ॥ शेर्यांतर की सूत की  
 दोरे की दुकान हो व्यपार दूसरा करता हो उस में शेर्यांतर का भाग नहीं



२६ ॥ सागारियस सोडियसाला साहारणवक्रय पओत्ता तम्हा दावए नो  
 से कप्यति पडिगाहितए ॥ २७ ॥ सागारियस सोडियसाला निसाहारण वक्रयप-  
 ओत्ता तम्हा दावए एवं कप्यति पडिगाहितए ॥ २८ ॥ सागारियस गंधियसाला  
 साहारण वक्रयपओत्ता तम्हा दावए नो से कप्यति पडिगाहितए ॥ २९ ॥ सागा-  
 रियस गंधिसालानिसाहारण वक्रयपओत्ता तम्हादावए एस कप्यति पडिगाहितए  
 ॥ ३० ॥ सागारियस सोडियसाला साहारण वक्रयपओत्ता तम्हादावए नोसे कप्यति

शोधे दुनरा ही मालक होवे वह उसमें से मूत्र साधु को देवे ना लेना कल्पता है ॥ २६ ॥  
 श्रेयार्तर को कपास-रई की दुकान हो, क्रयविक्रय दूसरा करता हो परंतु उसमें श्रेयार्तर का ।इस्ता हा  
 उसमें से कोई कपास-रई साधु को देवे तो लेना कल्पता नहीं है ॥ २७ ॥ २७ ॥ श्रेयार्तर की ल- की  
 दुकान है, उनपर क्रयविक्रय दूसरा करता है वही उस का मालक है, श्रेयार्तर का इसमें शिस्ता  
 नहीं है, उसमें से का कपास साधु को देवे तो षट लेना कल्पना है ॥ २८ ॥ श्रेयार्तर की गंधी की  
 ( कौषीधियों की ) दुकान हो उसमें श्रेयार्तर का शिस्ता है, उसमें से कोई साधु को देवे तो वह लेना  
 नहीं कल्पता है ॥ २९ ॥ श्रेयार्तर के गोषी की दुकान हो उसपर श्रेयार्तर दुनरा कल्पता हो श्रेयार्तर का  
 इसमें शिस्ता नहीं होवे वहां से कोई कौषीधियों को देवे तो साधु को लेना कल्पता है ॥ ३० ॥ श्रेयार्तर के मीमां

पडिगाहिसए ॥ ३१ ॥ सागारिपरस सोडियसाला निसाहारण थकयपउत्ता तम्हा  
 दावए, एधं से कप्यति पडिगाहिसए ॥ ३२ ॥ सागारियरस ओसहिओ सध-  
 डाओ तम्हा दावए नासे कप्यति पाडगाहिसए ॥ ३३ ॥ सागारिपरस ओसहिओ  
 असंथडाओ तम्हा दावए एवं से कप्यति पडिगाहिसए ॥ ३४ ॥ सागारियरस  
 अन्फला संपडाओ तम्हा दावए णो से कप्यति पडिगाहिसए ॥ ३५ ॥ सागारिपरस  
 अन्फला असंथडाओ तम्हा दावए एधं से कप्यति पडिगाहिसए ॥ ३६ ॥ सत्तम-

(इल्लवाह) की दुकान हो. उसपर यथाग दूगारा कागता हो, पांतु गंधांश का हिस्सा हो तो उस दुकान  
 से मिडइ साधु को लेना नहीं कल्पता है ॥ ३१ ॥ यथान्त इल्लवाह की दुकान हो उन पर वैपर दूसरा  
 करता हो शैश्वतर का उस में हिस्सा नहीं हो माथक दूसरा हो उस में से को मिडइ साधु को  
 देखतो लेना कल्पता है ॥ ३२ ॥ शैश्वतर के अन्विष मन्त्र का शाला (दाभा-भीमी) हो. उस पर  
 आहार आदि दूगारा निषजाना हो उस में शैश्वतर का हिस्सा हो तो यह आहारवि  
 साधु को लेना नहीं कल्पता है ॥ ३३ ॥ शैश्वतर का मोजन की शाला (दाभा-भीमी)  
 हो उस में मोजन दूगारा निषजाना हो. उस में शैश्वतर का हिस्सा नहीं होवे पालक दूगारा  
 शिवे और उस में कोई दूसरा आहार आदिक साधु के देखतो यह लेना कल्पता है ॥ ३६ ॥ यह शैश्वतर

संततमियां भिखवपट्टिमाणं एगुणपण्णाए राइदिएहि एगेणयच्छणदएण भिखवासएण  
अहसुत्तं अहाकप्व अद्वासगं अद्दात्तच्चं समुक्काएण फासिचा पालिचा सो चकिट्टिचा

क्र. आहार आदि ग्रहण करने का निषेध क्रिया अत्र साधु की प्रतिज्ञा का अधिकार कहते हैं ॥ तमी  
पितृकी पतिमा क धारण साधु सत् दात आहार की और मात दाति पानी की ग्रहण करे अर्थात् प्रथम  
सप्तक में प्रथम दिन एक दात आहार की एक दा पानी ग्रहण करे, दूसरे दिन दा दात आहार की दा  
दात पानी की ग्रहण करे तीसरे दिन तीन दात आहार की तीन दात पानी की ग्रहण करे यों यावत्  
सात व दिन सत् दात आहार की सात दात पानी की ग्रहण करे ॥ फिर दूसरे सप्त में प्रथम दिन  
एक दात आहार की एक दात पानी की यावत् सात व दिन सात दात आहार की सात दात  
पानी की ग्रहण यों पात सत् तक करे तिसरे दिन प्रथम दो व दिन और दातियों १२ व दोषे इस  
प्रतिज्ञा को यथा सूत्र अर्थान सूत्र में तिसरे वियों में आराधने वा कथा उक्त ही विधी पमाने आरंभ  
इस का यथा कल्प अर्थात् जिन प्रकार कल्प है तसा यथातथ्य तस्य आचार रखे, इन में यथा मां  
अर्थान प्रतिज्ञा में प्रवर्तने को जो क्षय प्रथम मार्ग है उस में माने उक्त्य मां व निषेध वरे इम प्रतिज्ञा को  
यथातथ्य अर्थान जिन प्रकार मर्यानुष्ठान आसनादि करने का बह करे, इस को सम्यक् प्रकार कायाकर  
स्पष्ट क्रिया अर्थान कथा मत्र नरीं पस्तु करे यथाग, सुद, उपयोग रखे गलन किया समाप्ति तक

किट्टिता आणए अणुगलित्ता भवति ॥ ३७ ॥ अट्टम अट्टनियणं भिक्खुपडिसणं  
 चउसट्ठेण रातिरेणं देहिय अट्टासित्तिहिं भिक्खासतेहिं महासुत्त अहाकण  
 महामग्ग अहातच्चं सम्मकाएणं फेसित्ता म्हात्ता तरिष्वा किट्टिता  
 आणए अणुगलित्ता भवति ॥ ३८ ॥ णव्वेणव्वमियाणं भिक्खू पडिसाण एक्कागिण्हि  
 गुएके आइय प्रपाने णोभत्त क्रिया जिम उत्साह से प्रव्रण किय्या उअही उर ॥ इमे ते र पार पडोवया प नेदिन  
 मया ते के हर्ष युक्त भाराथा, जिम प्रचार इन को करते की जिनश्वर की आज्ञा है उय ही प्रकार पालत  
 कर समस्त क्रिया ॥ ३७ ॥ अत्र आठवी प्रतिज्ञा कइत है. अष्टम आठवी माधु की प्रतिज्ञा आठ समाह  
 तक आठ २ दात आहार की और आठ दात पानी की ग्रहण कइ. अर्थात् प्रथम अठवारिहिये में प्रथम  
 दिन एक दात आहार की एक दात पानी की दूसरे दिन दो दात पानी की यावत् आठवे दिन अठ  
 दात पानी की. एव ही दूरे अठवारिहिये में और ऐसे ही यावत् आठवे अठवारिहिये में जानना. यो इस  
 प्रतिज्ञा में दिन ६४ होते हैं और २८८ दातों होती हैं. इस का मतवो प्रतिज्ञा प्रपने यथा सूत्र  
 यथा कल्प यथा मार्ग यथा तथ्य सम्यक् प्रकार काया से स्वर्ग के प्रालकर शुद्ध कर तीर पदोचि. कति  
 युक्त जिनाहा का अनुपालन करनेवाले दाते हैं ॥ ३८ ॥ अथ नवमी कहते हैं. नवमी माधु की प्रतिज्ञा  
 नव दुहेरु की नव दात आहार की तत्र यान पानी की ग्रहण करे. अर्थात् प्रथम २८४ क मे प्रथम दिन

मत्तसिवाशां भिक्षुत्वपट्टिमाणं पुगुणपण्णाए राइदिएहि एगेणयच्छणदण्ण भिक्षुत्वासएण  
अहसुत्वं अहाकप्य अहामगग अहातच्च समुकाएण फासिसा पालिसा सो चिकिट्ठिचा

क आहार आदि ग्रहण करने का नियम किया अन्न माधु की प्रतिज्ञा का अधिकार कहते हैं ॥ तभी  
भिक्षुकी पतिमा क ध्राण माधु सत् दात आहार की और मात दानि पानी की ग्रहण कर अर्थात् प्रथम  
मसक में प्रथम दिन एक दात आहार की एक दा पानी ग्रहण करे, दूसरे दिन दा दात आहार की दो  
दात पानी की ग्रहण करे तीसरे दिन तीन दात आहार की तीन दात पानी की ग्रहण करे यों यावत्  
सात व दिन सत् दात आहार की सात दात पानी की ग्रहण करे ॥ फिर दूसरे सप्त में प्रथम दिन  
एकदात आहार की एक दात पानी की यावत् सातवे दिन सात दात आहार की सात दात  
पानी की ग्रहण यों पात सप्त तक करे, शेष ४२ दिनों और दानियों १२६ भेषे इस  
प्रतिज्ञा को यथा सूत्र अर्थान सूत्र में जिन शिष्यों में आरंभने का कथा उन ही शिष्यों पमाने आरंभ  
इस का यथा कल्प अर्थान् जिन प्रकार कल्प है तैसा यथातथ्य कल्प आचार रखे, इन में यथा मार्ग  
अर्थान् पतिज्ञा में पर्वनेने को जो सपे पशम मार्ग है उस में पर्वने उदय मात्र निषेध करे इस प्रतिज्ञा को  
यथातथ्य अर्थान् जिन प्रकार पट्टेगानुष्ठान आसनादि करने का यह करे, इस को सम्यक् प्रकार कायाकर  
स्पष्ट किया अर्थान् यथा मंत्र नरीं पस्तु कर धर्याया, बुद्ध उपयोग रखे पालन किया समाप्ती तक

किट्टिता आणाय अणुगलित्ता भवति ॥ ३७ ॥ अट्टम अट्टनियणं भिक्खुणं पडिसाणं  
 चउसाट्टप रतिरेणं दोहिय अट्टासित्तिं भिक्खासतेहि अहासुत्त अहाकप  
 अहामग अहात्तच्चं सम्मकाएणं केसित्ता पालित्ता मोहित्ता तरित्ता किट्टित्ता

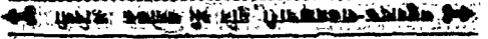
आणाय अणुगलित्ता भवति ॥ ३८ ॥ गणवणवमियाणं भिक्खू पडिसाणं एकानिपट्टि  
 गुरुके आदेशं प्रदाने घोभत कियो तिस वत्साह से ग्रहण किया उन्ही उर रहने तैर पार पडोचया पाने दिन  
 मपानी के हर्ष युक्त अराधा, निम मेर इन को करने की जिन्शरी आशा है उम ही प्रकार पालन  
 कर सम्पन्न किया ॥ ३७ ॥ अब आठवी प्रतिज्ञा कहते हैं. अष्टम आठवी माधु की प्रतिज्ञा आठ समाह  
 तक आठ दो दात आहार की और आठ दात पानी की ग्रहण करे. अर्थात् प्रथम अठारहवें में प्रथम  
 दिन एक दात आहार की एक दात पानी की दूसरे दिन दो दात पानी की यावत् आठवें दिन अठ  
 दात पानी की. एम ही दूरे अठमाहाये में और से ही यावत् आठवे अठमाहाये में जानना. यो इस  
 प्रतिज्ञा में दिन ६४ होते हैं और २८८ दाती होती है. इस का मतवो प्रतिज्ञा पमने यथा सूत्र  
 यथा कल्प यथा योग यथा तथ्य सम्यक् प्रकार काया से स्वर्ग करे पालकर शुद्ध करे तौर पदोचा. कति  
 युक्त जिनाशा का अनुगलन करनेवाले होते हैं ॥ ३८ ॥ प्रथम नवमी कहते हैं. नवमी माधु की प्रतिज्ञा  
 नव नवैक की नरु दात आहार की तवदान पानी की ग्रहण करे अर्थात् प्रथम नवदिन

सूत्र

राहिएहि चढाहिम पंचहत्तरेहि भिक्खासंतहि अहासुसं अहाकप्यजाय अणुपालिसा भवति

॥ ३९ ॥ दस दसमियागं भिक्खुपडिमाणं एकंशराइदिपुमए अचछट्टुहिय भिक्खासएहि  
अहामग्गा आहातच्चं तम्मकण्णं फामित्ता पालित्ता साद्वित्ता तीरिच्चा क्किट्ठित्ता आणाए  
अणुपालित्ता भवति ॥ ४० ॥ दो पडिमाओ पणत्ताओ तंजहा-खुडियावेव, मोयपडि-

एक दात आहार की एक दात पानी की, दूसरे दिन दो दात आहार की दो दात पानी की, याचसु  
नवमे दिन नव दात आहार की और नव दात पानी की ऐसे ही दूबरे नवक में ऐसे ही तीसरे नवक में  
चरसु ऐसे ही नवके नवक में यो इस प्रतिज्ञा के ८१ दिन और ४७२ दानि होती है। इस प्रकार इस  
व्रत में कते प्रयाण इस के कलए पुक्त याचए जिनाशा प्रमान पालन करनेवाले होते हैं ॥ ३२ ॥ अब  
इसो कहते हैं, दशमी प्रतिज्ञा दश दशके की, साधु इसदात आहार का दश दात पानी की प्रण करे,  
बर्णास्यप दशके के प्रयमदिन एक दात आहार की पानी कीच एक दात प्रण करे यो दशवेदिन दशदाति  
आहार की दशदाति पानी की प्रण करे ऐसे ही दूबरे दशक में याचए ऐसे ही दशवे दशके के भी  
जानना। इस के सब दिन २०० होते हैं और २५० दाति होती है। यथा सूत्र यथा कल्प, यथा मार्ग  
यथा तथ्य सम्यक् प्रकार काया करे स्पर्शा पात्रा शुद्ध क्रिया तीर पशोषया जिनाशा सहित पालन  
करने पाक होते हैं ॥ ४० ॥ अब दश पूर्ण में छगाकर पाँचर पूर्व के पठक की दो प्रतिज्ञा करते हैं ये दो



ना ॥ महाछिपायेन मोययटिमा सुडियार्ग मोयापडिमा वडिवञ्जस्स अणगारस्स  
 कल्पति से पहले सरदकाल समयनिवा चरिमोणीरहकालसमयसिवा, बहिया  
 ठाडपन्था गामरमथा जात्र ससिनेसरमथा वणंसियण विदुगंसिवा पव्वयंसिवा  
 पव्वयं विदुगोन्निवा मोच्चाआरुमई वाइसमेणं पारति आमोच्चाआरुवति, सोलसमेणं  
 पारेइ, जाएजाएमोए आइयये रिपाआंगच्छइ आइयये राति आगच्छइ जो आइयये  
 समानमये आगच्छइ जो आइयये अप्पाणिमये आगच्छइ आइयये सत्रीएमये

बहार की प्रतिष्ठा कही है तथा-सुछ्छ ( छेरी ) मोय प्रतिष्ठा और महालिवा ( बही ) मोय प्रतिष्ठा  
 इस के वाग येद-त्रय से प्राप्तन ( मात्रा ) परिहाये नहीं, २. संव से प्राप्त बाहिर रहे, १ काल से  
 शीत काल में तथा उदय काल में या बाहर रहकर बंगीकार करे तो शीत काल होये जोर का बाहार  
 बिना किये बंगीकार करे तो सोका भक्त होवे, उत्पन्न करे तथा वर्षीय दिनको प्राप्तवण परिहाये नहीं,  
 रात्री को न. र्ति. और ४ मास से उपसर्ग सरे, इस प्रतिष्ठा के गऊने वाले साधु मयम एतद काल  
 ( मृयाबेर ) बहिने के समय से अन्तिम मण्ड पंदिने पर्यन्त प्राप्त के बाहिर बाहर सन्नायेम के बाहिर,  
 बनकी विषम जगह में, पर्वत से पर्वत के विषम स्थान में बाहार शमी कर बंगीकार करे तो बोधा भक्त  
 अर्थान्त उ उपशाम में कूटी होये किना बाहार किये बंगीकार करे तो बाळ भक्त जर्वाए सात उपवास में पूर्ण



आगच्छेत् आइयच्च अत्राएमेत् आगच्छेत् आइयच्च अससणिद्धमेत् आगच्छेत् आइयच्च अससखेमसे आगच्छेत् आइयच्च जाएजाएमाए आइयच्च तजहा-अप्यवा, बहुएवा, एवं खलु एसा खुडियासाय पडिमा, अहासुत्त जात्र अणुयुल्लिवा भवति ॥ ४१ ॥ महाह्रियाण मोयपडिम पडिवण्णरस अणगाररस कप्पात्तस पढमे सरदकाल समयसिवा चारमे निदहकाल समयसिवा बहिया ट्ठाइयव्वा

होने पारणाकरे जो पात्रा दिनेको अत्रि उपका प्राप्तकरे और रोत्रिको जो मात्रा प्राणी सहित जीव सहित नही करे और जो जीव रहित अत्रि जो प्राप्त करे जो मात्र वीर्य सहित अत्रि तो प्राप्त नही करे और जो वीर्य रहित अत्रि तो प्राप्त करे जो मात्र चिकनास सहित अत्रि तो प्राप्त नही करे और जो चिकनास सहित अत्रि तो प्राप्त करे जो एज सहित अत्रि तो प्राप्त नही करे और रज रहित अत्रि तो प्राप्त करे, नित्यसक्त घोडा बहुत मात्रा आद उससक्त उक्त प्रकार करे, निश्चयसे यह सुष्टक (छेटी) प्राप्त पतिना को तथा सूत्र आराधे यावत् जिनाही युक्त चौर पदोचोत्रे ॥ ४१ ॥ अत्र परिमास प्राप्तमा कहते हैं वही प्राप्त पतिना प्रतिपन्न-अगसिार करने बल अनगार १२ द्रव्य से पात्रा परितोत्रे नहीं, सूत्र से प्राणादि कवाहर रहे. काठ से सियाले उन्हे ले, आक्षर कर अगसिार करने तो सोलाभक्त आक्षर



श्रीमद्भागवत-संस्कृत-भाष्य-संग्रह-प्रथम-खण्ड-प्रथम-अध्याय-प्रथम-श्लोक-पर्यन्तम्

आगच्छेत् अत्रैवमत्तं आगच्छेत् आइयच्चैः संसर्जिष्ये मत्ते  
 आगच्छेत् अत्रैवमत्तं आगच्छेत् आगच्छेत् आइयच्चैः संसर्जिष्ये मत्ते  
 आगच्छेत् अत्रैवमत्तं आगच्छेत् आगच्छेत् आइयच्चैः संसर्जिष्ये मत्ते  
 तजहा-अप्यवा, बहुएवा, एव खलु एसा खुडियामाय पडिमा, अहासुस जाव  
 अणुपालिता भवति ॥ ४१ ॥ महाह्लियाण सोयपडिम पडिवणरस अणगाररस  
 कप्यति स एवमे सरदकाल समयसिवा चारमे निद्रहकाल समयसिवा बडिया टुडियव्या

होने पारणाकरे जो मात्रा दितकी अत्रि उर्पक प्राप्त करे और रचितो जो मात्रा माण्डि सहित जीव सहित  
 नहीं करे और जो जीव रहित अत्रि तो प्राप्त करे जो मात्रा कार्य सहित अत्रि तो प्राप्त नहीं करे  
 और जो जीव रहित अत्रि तो प्राप्त करे जो मात्रा चिकनास सहित अत्रि तो प्राप्त नहीं करे और जो  
 चिकनास रहित अत्रि तो प्राप्त करे जो अत्रि सहित अत्रि तो प्राप्त नहीं करे और रज रहित अत्रि  
 तो प्राप्त करे, निरुक्त शोडा बहुत मात्रा आदि उरुक्त उरुक्त प्रकार करे, निश्चयमे यह सुष्टक (छेटी)  
 प्राप्त प्रायेवा को यथा सूत्र आराधे वास्तु जिनाहा युक्त वार पशुचिन्त्रे ॥ ४१ ॥ अत्र परिमाण प्राप्तिमा  
 करत है वही प्राप्त प्राप्तिमा परिपत्र-अंगकार करने व ल अनगार १ द्रव्य से मात्रा परिपत्रे नहीं,  
 अत्र से शीपादि कवाहिर रहे, काल से नियोल उन्हे ले आकर करे तो सोला भक्त आशर

गामर्शमवा जाव सन्निवेशमवा, वणसिवा, वणविद्गमिवा, पव्वयसिवा, पव्वयविद्ग-  
 मसिवा भोधा, मारुभइ सोलसमेण पारेति अभोधा आरुभति अट्टारसमेण पारेति,  
 जाए २ मौए आइच्च तहच्च अगाए अणपालिचा भवति ॥ ४२ ॥ संखादातिघरसण  
 भिक्खुरस पडिगह धारिस्स गाहावतिकुलं पिडवाय पडियाए अणुविट्ठस्स जावतिमं २  
 अतो पडिगाइस्स उचिचा इलएजा तावतियाओ सोओ दत्तिओ वत्तव्वसिया,

विना किये अंगीकार करे तो अश्रा मक्त और मात्र से उपसर्ग महन करे इस प्रकार प्रतिप्र अंगीकार करके वाले  
 अनगराका द्रव्य से श्राद काल के मृगशीत माइनस अन्तम अणुद पहिते पर्यंत प्राप्त के बाहिर यावत् संनिवेशके  
 बाहिर अनेमे वन के कठिन स्थान में पर्यंत में पर्यंत के कठिन स्थान में, आहिर कर के अंगीकारे करते सोला भक्त  
 (साग वापान) और विना आहार किये अंगीकारे करते अहंरामक्त (-आठ उपवास) बाद प्राराना  
 करे, तो याथा आरे तो उक्त प्रमाण करे, यात्रु उक्त प्रकार जिनाहा को आराधन करे ॥४२॥ अब  
 प्रथम जो दास को प्रतिष्ठा कर ही उम् का खुलासा करते है, दाती की संख्याका प्रमाण कर अइण कर  
 पिताके लिये गये हुये साष्टु ओ गृहस्थ आहार पानी आतेलाभवा हुवा एक ही वक्त में जितना  
 पापु के पात्र में डाले उसे एक दाते आहार की करते है, फक्त एक चिकल का दावा गिरजावे तो  
 परी एक दाते गिनी आनी दे, देम ही पानी आदि पत्रला पदार्थ देम की इच्छा से गृहस्थ किमी

तस्य से कंडूस्थपणवा पुरसपणवा चालपणवा अंतोपडिगहसि उचिचा दलपुजा सब्वा  
 विणं सा एगा दत्ता वसुवंसिया तत्थसे बहवे भुंजमाणा सब्वेते सयं २ पिंडसाहणियं  
 अतो पडिगहसि उचिचा दलपुजा सब्वविणं सा एगादत्ताति वसुवंसिया ॥ ४३ ॥  
 संखावचियरसनं भिक्खुस्स पाणिपडिगहरस गाहवतिकुलं पिंडवायपट्टियाए  
 अणुपविट्टरस जावतियं अंतोपाणिसि उचिचं दलपुजा ताबइबाओ ताओ व्हीओ  
 वसुवंसिया, तत्थ सेकेइ छपपणवा इसपणवा चालपणवा अंतोपाणिसु उचिचा दल-  
 पुजा, सब्वाविणं सा एगादत्तीनि वसुवंसिया तत्थसे बहवे भुंजमाणा सब्वे ते सयं २

वस्त्र में या चालनी में छान कर पात्र में डाले, उस की धार खंडन नहीं होवे, तहां तक एक एक दाती कही हे  
 कदाचित् साधु मिथ्या अर्थ गया और वहां बहुत लोक भोजन करते हैं. वे सब जीपते हुवे अपने र  
 नेश्राप का आहार भेला करके एक एक पिंड बनाकर पात्र में प्रक्षेपे तो वह एक ही दाति गिनी जाती हे  
 ॥ ४३ ॥ अब पानी की दात का करते हैं. दात की संख्या बावकर साधु पानी प्रहण करे वह साधु  
 गृहस्थ के घर में पानी के लिये प्रवेश करे. पानी को बख या चालनी से छानकर देता हुवा ऊपर से  
 डालता हुवा जहां तक उस बख में से या चालनी में से पडते हुवे पानी की धार झंझित नहीं होवे वहां

सुत्र

अर्थ



पिउसाहणिये एगंरिडः अंतो पडिगाहंसि पाणिमु उचिता दलएआ; सव्यात्रिणं सा एगा  
 र्चति पशव्वंसिया ॥ ४४ ॥ तिविहं कोवहडे पणसे तंजहा-फलिहोवहडे,  
 सुखोवहडे, समट्टोवहडे ॥ ४५ ॥ तिविहे उवगहे पणत्तं तंजहा-जंचउंगणहइ,  
 जंचसाहरइ, जंचआसयंसि पक्खिवइ ॥ एगे एव माहंसु ॥ ४६ ॥ एगेपुण एव  
 माहंसु, दुविहे उवगहे पणसे तंजहा-जंच ओगिण्हंति जंचआसयंति पक्खिवइ ॥  
 तिवंसि ॥ विवहार सुयरस नवमो उहेसो सम्मत्तो ॥ ९ ॥

तक एक दाती गिनकर प्रहण करे. जहां बहुत लोक मौजन करते हुवे अपनी २ नेश्राय का पानी प्रहण  
 कर भेजा कर जो एक ही वस्तु पात्र में डल दे तो वह एक ही दात कही जाती है ॥ ४४ ॥ अब अभि-  
 प्रह का करते हैं. तीन प्रकार के अभिप्रह करते हैं—१ काष्ठ पात्र में डालकर देवे तो उसे प्रहण करूंगा,  
 २ बुद्ध आहार चावलदि गुद्ध हाय से देवे तो प्रहण करूंगा, और ३ अशुद्ध भंग हुवे हय से तथा  
 माजन से देवे तो प्ररण करूंगा ॥ ४५ ॥ और भी तीन प्रकार के अभिप्रह करते हैं—तथाया—१ भाजन  
 से वस्तु निकालना हुवा देवे तो लेवूंगा, २ भाजन में वस्तु प्रक्षेपता देवे तो लेवूंगा, और ३ जो कोई वस्तु  
 आश्वादेने को मुख में रखना हो उस वस्तु में से देवे तो लेवूंगा; एक ऐसा कहते हैं ॥ ४६ ॥ एक फिर  
 ऐसा भी कहे है कि—दो प्रकार के अभि प्रह हैं. तथाया—१ प्रहण करते देवे और २ जो अश्वादन—  
 करना बलना देवे तो लेवूंगा ॥ इति नवमा उवशा समयस ॥ ९ ॥

## ॥ दशमोद्देशः ॥

शो पडिमाओ पणरा आ तंजहा-जवमश्चवदपडिमा वयरमञ्जाय चंदपडिमा ॥ १ ॥

जवमश्चवदपडिमं पडिवणरस अणगाररस मासंबोसट्टुकाए चियत्तंदेहे जे करे

एवसगा उपज्जति तंजहा- देवावा, मणसावा, तिखखजाणिण्वा, अणलांसावा

पडिलोमावा, तत्थणुलोमावा ताववेजा वा नमंसेजावा संकारजावा, समणज्जावा,

तप रूप अभिप्रद धारन करने की दो प्रतिष्ठा कही है. उन के नाम-१ जो जव के सभान मध्य में जाही और दोनों तरफ पतली तपस्या करे वह यवमध्य चन्द्र प्रतिष्ठा और जो वज के साभान मध्य में पतली दोनों तरफ जाही तपस्या करे सो वज्र मध्य चन्द्र प्रतिष्ठा ॥ १ ॥ अब इस में से प्रथम जवमध्य चन्द्र प्रतिष्ठा किस प्रकार करते हैं. यह कहते हैं. यवमध्य प्रतिष्ठा को धारनकर प्रतिपन्न-प्रतिष्ठा इति अन्तर्ग-साधु एक महिने पर्यन्त अपने शरीर को बोधीराते हैं. अर्थात् एक महिने पर्यन्त शरीर के मसत्त्व का त्यागकर जो किसी प्रकार का उपमर्ग परिमह कर किया हुआ दुःख प्राप्त होवे उस का सम्भान में सहते हैं. वे उपमर्ग तीन प्रकार के करते हैं उन के नाम-१ दवता से किया हुआ उपमर्ग, २ मनुष्य का किया हुआ, और ३ तिरिच यौनिक ( जानवरों ) का किया हुआ उपमर्ग. इन तीनों के किये उपमर्ग दो प्रकार के होते हैं उन के नाम-१ अनुलोप-अनुकूल मनका अच्छा लगे सुखप्रद होने और २ प्रतिलोप-प्रतिकूल बुरा दुःखप्रद होने सो इस में अनुलोप उपमर्ग इस प्रकार होते हैं. कोह-वदना

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

कक्षाण मंगल देवयं, चंद्रयं, पञ्जुवासेजा ॥ तत्रपडिलोमा अणयरेण दंडेणवा  
 अट्टिणवा जोत्तिणवा, वेत्तेणवा, रुसेणवा, काए आओडजा ते सव्वे उपपणे सम्मं  
 सहेजा खसजा, तिरितखेजा, अहियासेजा ॥ २ ॥ जत्रमड्डणं चंद पडिमं पडिव-

नमस्कर करे, सरकार मन्थान देवे, कल्याण के करता, पंगलिक के करता देवता समान धर्म देव मानवत  
 जान कर पर्याप्तना सेवा भक्ति करे उन वक्त जो मनमें हर्ष लो सुख पाने तो वह उपसर्ग से हारगये  
 महन नहीं करके और जो समभाव रखे अपना समस्त भाव नहीं लावे तो उस उपसर्ग को जीने कहे  
 जान है। ऐसी ही दूमा प्रतिलोम उपसर्ग इस प्रकार होता है। उक्त तीनों में से कोई एक दंडकर इष्टि कर  
 रस्सी कर, बेलकर, चातुक कर इत्यदि कर शरीर को परिताप उपजावे मारे, और भी अनेक प्रकार के  
 दुःख मद् उपसर्ग करे जा उन उपसर्ग से घबरा कर शरीर को छिपाने बचाने का प्रयत्न करे उपसर्ग  
 करने का बूग। चिन्तये तो उस उपसर्ग से हारगये और समभाव सहै, महाकर्मों की निर्जरा का अवसर  
 प्राप्त हुवा जान देय भाव न लावे तो उस उपसर्ग को सहन किया कहा जाता है। इन प्रकार तीनों की  
 वरफ से किये दोनों प्रकार के शरिया उपसर्ग हुवे समभव सहित राग द्वेष रहित सहन करे सया भाव  
 धारण करे दीनपता धारण नहीं करे, काया को स्थान से खलावे नहीं ॥ २ ॥ अथ यत्र मध्य चन्द्र पतिमा



एणस्स अणगारस्स सुक्कपक्खस्स पडिअए कप्पंति एगादप्पि भोगणस्स, पडिगाहिअए  
 एगायणस्स, सव्वेहि दुप्पयचउप्पयादिएहि आहारकंखी सत्तेहि पडिणियत्तेहि  
 अण्णाय उत्थं सुद्धोवहडं कप्पति से एगस्स भुंजमाणस्स पडिगाहिअए नो दण्णं,  
 नो तिण्हं, नो चउण्णं नो पंचण्णं, नो बालस्थाए, नो गुल्लिणीए, नो दाग्गं पेज्ज-  
 माणीए, नोमे कप्पन्ति अंतोएल्लस्स देविवाए साहडु दलमणीए पडिगाहिअए अह  
 पुण एवं जाणेज्जा एगपायं अंतोकिच्चा एगं पायं बाहिकिच्चा एल्लय विक्खंभइत्ता एयाए  
 एसगाए एममाणे लब्भंज्जा आहारज्जा, एयाए ए णाए एसमाणे णो लभेज्जा णो

रूप करने की विधी बताते हैं—पत्रमध्य चन्द्र प्रतिभा को प्रतिपक्ष हुवे मायु शुक्ल पत्र की  
 प्रतिपदा को एक दात आहार की और एक दात पानी की ग्रहण कर, वह आहार ग्रहण करने की विधि  
 बताते हैं, त्रिम वक्त आहार की इच्छा करने वाले भिक्षु को बावा जोगी वगैरे द्विपद तथा पक्षियों  
 कोवा वगैरे चतुपद, गौ कुत्ता आदि जानवरों को योजनार्थ निकलथे वे गृहस्थों के यहाँ से भोजन ग्रहण  
 कर स्वस्थान गये उस वक्त अर्थात् दो प्रहर दिन आये भिक्षालेने स्स्थान से निकले, उद्योग रहित  
 चपलता रहित आज्ञात कुले जिन २ कुलों में से साधु का भिक्षा ग्रहण करने की आज्ञा तीर्थकरोंने दी है,  
 उन २ कुलों में प्रवेशकर भिक्षा ग्रहण कर, वह भिक्षा इस प्रकार ग्रहण करे कि जहाँ एक ही पशुपय अलग

आहारेजा वीथाए कप्यति दो दत्तीओ भोगणरस पडिगाहित्तए दो पाणरस सव्वेहिं  
 दुष्पयचउप्पयादिएहिं आहार कंखीहिं सचेहिं, पडिणियचंहि अणायओच्छं सुद्धो  
 वहड कप्यति से एगरस भुंजमाणरस पडिगाहित्तए, नो दुण्णं, नो तिण्णं, नो चउण्णं,  
 नो पंचण्णं, नो वालच्छाए, णो गुत्थिणीए, नो दारगं पेज्जमाणीए, नो से कप्यति  
 अंतो एलुपरस दोवि पाए साद्धु दलयमाणीए पडिगाहित्तए, अहं पुण एवं जायेजा  
 एगं पायं अंतो किच्चा, एगं पाय वाहिं किच्चा एलुपं विक्खंमइत्तए याए एसणाए  
 एसमाणे णो लब्भेजा णो आहारेजा ततीयए कप्यति तिण्णं दत्तीआ भोगंरस

घेठ कर अपनी नेश्राय का भोजनदि ग्रःण पर भोजन के उय के पग ने ग्र ण के परंतु से तेन  
 चार पात्र जन एकत्र बैठ भोजन करते हैं उय के पग ने ग्रःण आदिक भ्रंश नहीं करे. भोग की  
 शालक के भोजन में से देवतो नहीं लेवे. गर्भदत्त के कसेवे रगया या गर्भरत्न देवतो वह भी ग्रःण नहीं  
 करे, माता शालक को दुग्धपान कराती छोडाकर देवतो ग्रहण नहीं करे, दोनों पात्र एकत्र कर भेले रख  
 घर के अंदर या घर के बाहिर खडा रहे देवतो ग्रहण नहीं करे, परंतु ऐसा जनने में आने की एक पात्र  
 नो घर की देखली (जंवर) के बाहिर है और एक पात्र घर के अंदर है दोनों पात्र के मध्य देखली रह  
 इत प्रकार अभिग्रह धून कर एषणा शुद्ध ४२ दोष रहित गंत्रपणा करते जो बाहर मिलतो उसे ग्रःण

आहारेजा वीथाए कप्यति दो दत्तीओ भोगणरस पडिगाहित्तए दो पाणरस सव्वेहिं  
 दुष्पयचउप्पयादिएहिं आहार कंखीहिं सचेहिं, पडिणियचंहि अणायओच्छं सुद्धो  
 वहड कप्यति से एगरस भुंजमाणरस पडिगाहित्तए, नो दुण्णं, नो तिण्णं, नो चउण्णं,  
 नो पंचण्णं, नो वालच्छाए, णो गुत्थिणीए, नो दारगं पेज्जमाणीए, नो से कप्यति  
 अंतो एलुपरस दोवि पाए साद्धु दलयमाणीए पडिगाहित्तए, अहं पुण एवं जायेजा  
 एगं पायं अंतो किच्चा, एगं पाय वाहिं किच्चा एलुपं विक्खंमइत्तए याए एसणाए  
 एसमाणे णो लब्भेजा णो आहारेजा ततीयए कप्यति तिण्णं दत्तीआ भोगंरस

आहारेजा वीथाए कप्यति दो दत्तीओ भोगणरस पडिगाहित्तए दो पाणरस सव्वेहिं  
 दुष्पयचउप्पयादिएहिं आहार कंखीहिं सचेहिं, पडिणियचंहि अणायओच्छं सुद्धो  
 वहड कप्यति से एगरस भुंजमाणरस पडिगाहित्तए, नो दुण्णं, नो तिण्णं, नो चउण्णं,  
 नो पंचण्णं, नो वालच्छाए, णो गुत्थिणीए, नो दारगं पेज्जमाणीए, नो से कप्यति  
 अंतो एलुपरस दोवि पाए साद्धु दलयमाणीए पडिगाहित्तए, अहं पुण एवं जायेजा  
 एगं पायं अंतो किच्चा, एगं पाय वाहिं किच्चा एलुपं विक्खंमइत्तए याए एसणाए  
 एसमाणे णो लब्भेजा णो आहारेजा ततीयए कप्यति तिण्णं दत्तीआ भोगंरस

पडिगाहिचए तिणं पाणरस संवेहिं, दुपयचउपयादिएहि आहारकंखीहिं सचैहिं पडि-  
 णियचैहिं जाव नो लमेजा णो आहारेजा चउत्थीए कप्पति चउदत्तीओ भोयणरस पडि-  
 गाहिचए चउपाणरस संवेहिं दुपयचउपयादिएहिं जाव नो आहारेजा पंचमियाए  
 कप्पति पंचदत्तीओ भोयणरस पडिगाहिचए जाव नो आहारेजा छट्टीए कप्पति  
 छ दत्तीओ भोयणरस पडिगाहिचए जाव नो आहारेजा सत्तमीए कप्पति सत्तदत्तीओ  
 भोयणरस पडिगाहिचए जाव नो आहारेजा अट्टमीए कप्पति अट्टदत्तीओ भोयणरस  
 पडिगाहिचए जाव णो आहारेजा णवमीए कप्पति णवदत्तीओ भोयणरस पडि-

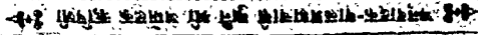
कर भोगे और जो उक्त प्रकार की गवेषणा करते विशि युक्त आहार नहीं मिले तो ग्रहण बिना किये ही रहे ॥  
 यह प्रथम दिन की विशि कही इस ही प्रकार दूरे दिने द्वितीया को दो दाति आहार को ग्रहण करे और  
 दो शती पानी की ग्रहण करे, इस ही विशि भी उक्त प्रमान व द्विपद चतुष्पद आहारादि ग्रहण कर  
 सास्थान गये उा चक्त जिनको प्रमाने कुल से प्रवेशकर शब्द निर्दोष एक ही जीपता हो उस के पास मे  
 रतु हो तीन चार पांच जीपत हो उस के पास मे नहीं ग्रहण करे, बालक को गर्भवती को, दुग्धपति वृष  
 को अन्तरायदे ग्रहण नहीं करे, दोनों पांच घर के अंदर वा घर के बाहिर रखदे तो ग्रहण  
 नहीं करे परंतु एक पांच घर के बाहिर और एक घर के भीतर रखर देवेतो ग्रहण करे, यो ४२ दोष

गृह्णन्ति जाव नो आहारेजा दसमीए कल्पति दसदत्तीओ भोयणरस पडिगाहितए जाव नो आहारेजा एगारसीए कल्पति एगारस दत्तीओ भोयणरस पडिगाहितए जाव नो आहारेजा वारसीए कल्पति वारसदत्तीओ भोयणरस पडिगाहितए जाव नो आहारेजा तेरसीए कल्पति तेरसदत्तीओ भोयणरस पडिगाहितए जाव नो आहारेजा चउदसीए कल्पति चउदसदत्तीओ भोयणरस पडिगाहितए जाव नो आहारेजा पुण्णिमाए कल्पति पुण्णरसदत्तीओ भोयणरस पडिगाहितए जाव नो आहारेजा बहुपक्खरस प्राडिवाए से कल्पति चौदसभत्तीओ भोयणरस पडिगाहितए चाहरस

रहित शुद्ध आहार पानी मिले तो भोगवे, नहीं तो बिना आहार रहे बृत्तिया के दिन तीन दात आहर की व तीन दात पानी की उक्त विधि से मिले तो ग्रहण करनी तो आहार बिना रहे, इतुर्थी के दिन चार दात आहार की चार दात पानी की उक्त विधि से मिले तो ग्रहण करे नहीं तो आहार बिना रहे. पंचमी को पांच दात आहार भी पांच दात पानी की उक्त विधि से मिले तो ग्रहण करे नहीं तो आहार बिना रहे. छ दात पानी की उक्त विधि से मिले तो ग्रहण करे. सप्तमी को सात दात आहार की सात दात पानी की उक्त विधि से मिले तो ग्रहण करे. अष्टमी को आठ दात आहार की आठ दात पानी की उक्त विधि से ग्रहण करे. नवमी को नवदात आहार की नवदात पानी की उक्त विधि से मिले तो ले. दशमी को दशदात आहार की दशदात पानी की उक्त विधि से ग्रहण करे. एकादशी को इधारा दात आहार

पाणरस सुखेहि दुष्पयं जात्र नो आहरेजा। वितियाए कथति तेरसदचीओ  
 भोयणरस पडिगाहिचाए तेरस पाणरस जात्र अहरेजा। तन्याए कथति वारस  
 दचीओ भोयणरस जात्र नो आहरेजा चउथीए कथति एकारसदचीओ भोयणरस  
 जात्र नो आहरेजा पंचमीए कथति दसदचीओ भोयणरस जात्र नो आहरेजा,  
 छट्टीए कथति णवदचीओ भोयणरस जात्र नो आहरेजा, सचमीए कथति  
 अट्टदचीओ भोयणरस जात्र नो आहरेजा, अट्टमीए कथति सचदचीओ  
 भोयणरस जात्र नो आहरेजा, णवमीए कथति छदचीओ जात्र नो आहरेजा।

की इग्यारा पानी को, द्वादशी को पाग २ दात आहार पानी को, तेरस को तेरा २ दात आहार पानी की  
 चउदस को चौदा २ दात आहार पानी की, और पूर्णमा को पन्धरे दात आहार की व पन्दरा दात पानी  
 की प्रथम कही हुई विधी प्रमाने मिलतो ग्रहण करे नहीं तो आहार विना रहे, पुनरपि कृष्ण अंधारे पक्ष  
 की प्रतिपदा को उन साधु को रक्षता है नौदा दात आहार की और चौदा दात पानी की वह भी सब  
 द्वाद चतुष्पद आहारअर्थी आहार ग्रहण कर बल गये हो पावत उक्त विधी प्रमाने मिलतो ग्रहण करे  
 नहीं तो आहार विना ही रहे, द्वितिया को तेरा २ दात आहार पानी की उक्त विधी प्रमाने मिलतो लेवे,  
 तृतीया को पारा २ दाती आहार पानी की, चतुर्थी को शयारा २ दाति आहार पानी की पंचमी को



दसमीए कल्पति चंद्रक्षीओ भोयणरस जाव नो आहारेजा,  
 एकारसमीए कल्पति चउदक्षीए भोयणरस जाव नो आहारेजा, चारसमीए  
 कल्पति त्रिदक्षीओ भोयणरस जाव नो अहारेजा, तेरसीए कल्पति दादक्षीओ भोयणरस  
 जाव नो आहारेजा, चउदक्षीए कल्पति एकादक्षीओ भोयणरस पडिगाहिचए एगा-  
 पाणरस सवेहिं दुप्यचउप्ययाएहिं आहार कंसीहिं संचेहिं जाव आहारेजा,  
 अमावासाए सेय अमंतदु भवइ ॥ एवं खल एमात्रवमज्ज चंपडिमा अहासुच  
 अहाकल्पं जाव अणुपालिता भवति ॥ ३ ॥ चंद्रमक्षणं चंद्रपडिमं पडिवणरस

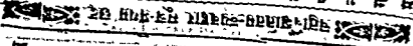
दश २ दानी आहार पानी की, पही को नव २ दाति आहार पानी की, सप्तमीको आठ २ दाती आहार  
 पानी की, अष्टमी को सात २ दानी आहार पानी की, नवमी को छ २ दाती आहार पानी की  
 दशमी को पांच २ दाति आहार पानी की एादशी को चार २ दाती आहार पानी का  
 द्वादशी को तीन २ दानी आहार पानी की त्रयोदशी को दो दानो आहार पानी की  
 चौदस को एकद दानि आहार पानी की प्रहण करे, तस मा हेतु चतुष्वन् आहार ग्रहण कर गये हो  
 यात्र प्रथम कही विशी पै पाणे भिले नो ग्रहण करे, तसो ओ आहार कियो को रह और अमावस्या के  
 दिन उपवास करे, यो निश्चय यह यमधर्मपीत्या को सूत्र में कही निधी प्रपाने प्रतिशा के कल्प-भाचार  
 प्रदाने यात्र भिनाशा प्रपणे पालने बाके हावे हे. इति यमधर्म प्रतिमा तप ॥ ३ ॥ अब चतुष्वन् चन्द्र





दूतीओ भोयणस्स पडिगाहित्थए पणरस पाणगस्स सञ्जेहि दुप्पय चउप्पयादिएहि  
 आहार कळेहि जाव नो आहारेज्जावि तियाए से कप्पति चउहसदचीओ भोयणस्स  
 पडिगाहित्थए जाव नो आहारेज्जा त्तियाए कप्पति तेरसदचीओ भोयणस्स  
 जाव नो आहारेज्जा चउत्थीए कप्पति वारसदचीओ भोयणस्स जाव नो आहारेज्जा  
 पचमीए कप्पति एगा रसदचीओ भोयणस्स जाव नो आहारेज्जा छट्ठीए  
 कप्पति दस दचीओ भोयणस्स जाव नो आहारेज्जा सत्तमीए कप्पति षड्दचीओ

आहार की ग्रहण करता और पन्द्रहा दति पानी हीं ग्रहण करना. वह भी जिस वक्त द्वीपद मनुष्य पक्षी  
 चतुष्पद गौ फुण आदि गृहस्थ के यहाँ से आहार आदि लेकर भले गुँवे हो उड़मवच्छ स्यात्क से नीकल  
 कर उछरंग रहित अज्ञान कुलों में से जो अहेला द्वी मनुष्य सोजन रता है उम के पास से परंतु दो तीन  
 बार भोजन करते हैं, उन के पास से नहीं उम के दोनो पाँघर के अरु गुया वर के बरिहा होयते ग्रहण  
 नहीं करे परंतु एक पात्र पर के अन्दर और एक देहकी वाहिर होवे आहार दोष रहित होवे इम प्रकार  
 ग्रहणना करता विले तो उस आहार पानी को ग्रहणकर भोगवे, और नहीं मिले तो आहार विनाही रहित इस  
 प्रकार ही क्षीनीयाकी चउदा दति आहारकी व चउउह दामि पानीकी तृतीयविजे तेरह दति आहार की तेरे





भोयणरस जाव नी आहारेजा अट्टुमीए कप्पति अट्टुदत्तीओ भोयणरस जाव णो  
 आहारेजा णवमीए कप्पति सत्तदत्तीओ भोयणरस जाव नो आहारेजा दसमीए  
 कप्पति छदत्तीओ भोयणरस जाव नो आहारेजा एगारसीए कप्पति पंच दत्तीओ  
 भोयणरस जाव नो आहारेजा बारसीए कप्पति चउदत्तीओ भोयणरस जाव नो  
 आहारेजा तेरसीए कप्पति तिदत्तीओ भोयणरस जाव णो आहारेजा चउदसीए  
 कप्पति दो दत्तीओ भोयणरस जाव नो आहारेजा अमात्रासाए कप्पति एगादत्तीओ

दाति पानी की चतुर्थी को चारा दाति आहार की वारा दाति पानी की, पंचमी को इग्वारा दाति आहार  
 की इग्वारा दाति पानी की, षष्ठी को दश दाती आहार की दश दाती पानी की, सप्तमी को नव दाती  
 आहार की नव पानी की, अष्टमी को आठ दाती आहार की आठ पानी की नवमी को सात दाति  
 आहार की सात पानी की, दशमी को उ दाति आहार की छ पानी की, एकादशी को पांच दाती  
 आहार की पांच दाती पानी को, बारस को चार दाति आहार की चार दाति पानी की, तेरस को तीन  
 दाती आहार की तीन पानी की चौदस को दो दाति आहार की दो दाति पानी की अमावास्या को एक  
 दाति आहार की एक दाति पानी की उक्त विधी ममाने मिले तो आहार करे नहीं तो आहार बिना ही रहे

भोयणरस पडिगाहिए जाव जो आहारेजा सुकरवखरस पडिगाए से कल्पति  
 दो दत्तीओ भोयणरस पडिगाहिए दो पाणरस जाव जो आहारेजा  
 भितियाए कल्पति तिणिग दत्तीओ भोयणरस जाव जो आहारेजा ततियाए कल्पति  
 चउदत्तीओ भोयणरस जाव जो आहारेजा चउदत्तीए कल्पति पंचदत्तीओ  
 भोयणरस जाव जो आहारेजा ॥ पंचभीए कल्पति छ दत्तीओ भोयणरस जाव  
 जो आहारेजा छट्टीए कल्पति सत्तदत्तीओ भोयणरस जाव जो आहारेजा

फिर शुक्र पक्ष की एरुम को कल्पता है दो दाती आहार की और दो दाती पानी की प्ररण करना  
 द्वितीया को तीन दाति आहार की तीन दाति पानी की तृतीया को चार २ दाति आहार पानी की,  
 चतुर्थी को पांच २ दाति आहार पानी की, पांचवी को छ २ दाति आहार पानी की, छठीको सात २  
 दाती आहार पानी की, सप्तमी को आठ २ दाती आहार पानी की, अष्टमी को नव २ दाति आहार  
 पानी की नवमी को दश २ दाति आहारपानी की, दशमी को इगारि २ दाती आहार पानी की, एकादशी  
 को धारा दाती आहार पानी की, द्वादशी को तेरा दाति आहार पानी की, तेरस को चउदा २ दाति  
 आहार पानी की और चउदस को पंद्रह दात आहार की पंद्रह दाती पानी की प्ररण करे द्विपर



पडिगाहिसंग सन्वेहि दुपप वउपय जाव नो लभेजा नो आहारेजा पुण्णिमाए  
 अभसंठे भवंति ॥ एवं खलु एसा बहरमज्झं चंपडिमा क्हासुत्तं महाकप्पं जाव  
 अणुपालिजा भवंति ॥ ५ ॥ पंचविहं ववहारे पण्णत्ते तंजहा-आगमे, सुए, आणा,  
 धारणा, जीए ॥ ६ ॥ जहेव तत्थ आगमे सिया आगमेण ववहारं पट्टवेजा, णो

में रहे १३ आदि द्वारा मायश्चित्त दि आत्मा मिले मेंने व कहलाभने उस प्रमाने प्रवृत्ता करे वह आत्मा  
 व्यवहार. ४ गीतार्य-यहु सूत्री प्रायःश्चित्त देते थे उमें मुनकर धारन कर रक्खा हो धी प्रवृत्ति आगे  
 बलागे वह धारन कर रक्खे वह धारना व्यवहार और ५ पूर्वचार्य की आशरमा मुजब करे चार या पांच  
 मनो मिलकर जो व्यवहार की स्थापना करे उस मुजब चले वह नीत व्यवहार ॥ ६ ॥ जहां २ आगम  
 व्यवहार होवे तो आगमव्यहार ही प्रती स्थिति अधिन प्रागमाविहारी की आत्मा मपाने चले वेमायश्चित्तने  
 जो ग्रहण करे कदाचित्त आगम-व्यवहारी का व्यच्छेद होनाय आगम व्यवहारी नहीं रहे तो जहां जो  
 सूत्र व्यवहार होवे तो सूत्र व्यवहार प्रमाने चले सूत्र अधिन प्रायःश्चित्तने, कदाचित्त सूत्र व्यवहार  
 भी न रहे सूत्रों का व्यच्छेद हो पथका उसका व्यवहन सूत्र में नहीं किया हो तो जिग प्रकार अपने गुरु  
 यदि जगु फुरूप आत्मा देवे प्रदेश में हों तो पत्रादि द्वारा आत्मा मंगवि और उस अनुसार चलना उस प्रमाने  
 मायश्चित्तने, कदाचित्त गुरु आदि जगु फुरूपों का ही व्यच्छेद होगया होतो जो पहिल अपने गुरुवादि

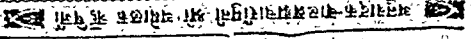
से तत्थ आगमे सिया जहा से तत्थ सुसिया, सुएणं ववहरं पट्टवेज्जा, नो से तत्थ सुए सिया जहा से तत्थ आणा सिया आणाए ववहारे पट्टवेज्जा, नो से तत्थ आणा सिया जहा से तत्थ धारणा सिया धारणाए विवहारे पट्टवेज्जा, णो से तत्थ धारणा सिया जहा से तत्थ जीए सिया जीएणं ववहारे पट्टवेज्जा सिया एएहि पंचहि ववहारेहि ववहारं पट्टवेज्जा तंजहा-आगमेण सुएणं, आणाए धारणाए जीएणं ॥ जहा से आगमेसुए आणाधारणा जीए तहा तह ववहारं पट्टवेज्जा ॥ ७ ॥ से किमाहु भते ! आसवल्लिया समणा निगंथा इच्चय पंचविहं ववहारं जया २ जेहि २

थे उन के पास जो प्रायःश्चिचादि की विधी धारन थी उन प्रमाने चले. उन प्रमाने प्रायःश्चिचा देवे और जो कदाचित्ता एमाही प्रयाजन आकर बन जावे कि इसका धारना भी नहीं वो तब जीत व्यवहार प्राप्तस्थापे अर्थात् जो पूर्वपरंपरा में चलता आयाहै उनही प्रमाने आगे चलाया जावे (तथा पांचघटे मनुष्य मिलकर जो कानून वाचदेवे उन प्रमाने चके)इन पांचो व्यवहार प्रमाने प्रवृत्ति सदैव रखले तद्यथा आगम, सूत्र, ३ आशाध धारणा और नीत. जिसप्रकार आगम सूत्र आशाध रणा जीत व्यवहार हैवे उस २ व्यवहार प्रमाने चलना ॥ ७ ॥ शिष्य पूछता है अहो भगवान् ! कि लिये व्यवहार प्रमाणं चलना ? अहो शिष्य ! आगम बलिये श्रमण



माणकरे नामेगे णो अट्टकरे, एगे अट्टकरेवि माणकरेवि, एगे णो अट्टकरे णो

जैसा साफ कह दो. वह आलोचना करना जो सरल भाव से दाप भूलजाय तो क्षानी उसे स्मरण करादेवे और जो वह कपट कर छिपाने वा उत दो याद भी न करावे और प्रायःश्चिन्ता भी नहीं देवे, कहदे कि अन्य स्थान जायो आलोचन करके केवल क्षानी तो मनोगत जान कर कह सकत है और चउदे पूरे के पाठी उपयोग लगाने से केवली क्षिप्ता ही जान सकते है ॥ १ ॥ अब सूत्र व्यवहार कहते है-आचार प्रकल्प नीशीथ आदि उपचार अंग से तब पूरे तक का ज्ञान सब सूत्र व्यवहार में समावेश होता है यह अनेन्द्रिय अर्थ में विशिष्टज्ञान इतु योहि-का सातिस्यप युक्त आगम केवली कथित केवली के समान ऐसे सूत्र ज्ञान के धारक हों उन के पास आलोचना के ज्ञाने तब वे उनके मुख से तीन वक्त बह दोष कथाएँ एक वक्त सुनकर कहे मझे प्रमाद से स्मरण नहीं रहा, फिर कहे, दूसरी वक्त कहे चित्त विग्रह से स्मरण नहीं रहा फिर कहे, यो तीन वक्त एकमा ही दाप प्रकाश दे तब समझे की यह आलोचक शुद्ध चिक्पटी है. तब यथा उचित आलोचना उसे देवे और जो वह कपट कर दोष छुपाने तीनों वक्त अन्य २ प्रकार कहे तब उसे प्रथम कपट का प्रायश्चित्त देवे फिर दोष की आलोचना देवे ॥ २ ॥ अब आशा व्यवहार कहते है. दो गीतार्थ आचार्य जबा बल की क्षीणता से अलग २ देशान्तर में रहे. उस में से एक आचार्य को आलोचना करने का अवसर प्राप्त हुवा परंतु दूसरे आचार्य के पास जाने को अशक्त हा अपना दोष



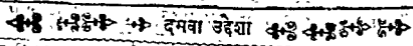
रुद्धांशरूप बनाकर अपने पासके साधुको पढाकर उन दूसरे आचार्य के पास भेजे. वे दूसरे आचार्य गुदर्थमें  
 क्षेत्र काल भाव धृति बलादि विचार कर आपकी सुदकी जाने की शक्ति हो तो आप उनसे जाकर  
 मिले और जाने की शक्ति न होतो उस शिष्य को पीछा गुदर्थ में प्रायश्रुत पढाकर पीछा भेजे, उसे  
 वे प्रश्न कर वह आज्ञा व्यवहार कहते हैं. कोईक आचार्य किसी शिष्य को किसी प्रकार के दोष की  
 आलाचनाही वह उसने धारण कर रखी और आचार्य के वियोग में दूसरने उस ही प्रकार दोष लगाया.  
 उसे उस ही प्रकार प्रार्थित दवे, वह धारणा व्यवहार, तथा कोई वैयावच्य का करने बांटा जाय है  
 वह समस्त छेद देने योग्य नहीं है अर्थात् प्रायश्रुत की विधी बतावे योग्य नहीं है तब उस को आचार्य  
 प्रमाद कर कितनेक प्रायश्रुत के पद का उद्धृत कर उमे कहे, वह उने मन में धार रखे प्रसंग में उस ही  
 दूसरे को आलोचना दे वह धारणा व्यवहार ॥ ४ ॥ अब जीत व्यवहार कहते हैं—जिस अपराध की  
 युद्धि प्रथम साधुओं बहुत तप करके करते थे उस ही अपराध को प्राप्त हुने सो प्रत काल में द्रव्य सेव  
 काल भाव विचार कर संघयन भुंति वातादि की हानी जान कर यथा उचित योग्य तप का प्रायश्रुत  
 दवे समय का विचार कर, अथवा आचार्यों के गच्छ में आचार्य ने अलग २ प्रायःश्रुत देने की  
 विधी बंधी है. गने में लिख रखी है, उस मुजब उन के शिष्यादि प्रायश्रुत दे सो जीत, चार ॥ ५ ॥  
 इन पाँचों व्यवहार में से जो इच्छा में आवे उस व्यवहार सहित गीतार्थ के पास प्रयःश्रुत  
 प्रश्न करे उस से वह शुद्ध हो सकता है. परंतु अगीतार्थ पास प्रायश्रुत लिये शुद्ध



गाणकरेणामेगेणो अट्टकरे, एगे अट्टकरेवि माणकरेवि, एगेणो अट्टकरेणो

जैसा साफ कह दो. वह आलोचना करता जो सरल भान से दोष भूलजाय तो ज्ञानी उसे स्मरण करादेवे और जो वह कपट कर छिपाये तो उस ने याद भी न करावे और प्रायश्चित्त भी नहीं देवे, कहदे कि अन्य स्थान जाओ आलोचना के लिये तब ही जान सकते हैं और चउदे पूरे के पाठी उपयोग लगाने से केवली जैसा ही जान सकते हैं ॥ १ ॥ अब सूत्र व्यवहार करते हैं-आचार प्रकल्प नीशीथ आदि शब्दों अंग से तब पूरे तक का ज्ञान सब सूत्र व्यवहार में समावेश होता है यह अनेन्द्रिय अर्थ में विशिष्टज्ञान उक्त आदि का सात्त्विक युक्त आगम केवली कथित केवली के समान ऐसे सूत्र ज्ञान के धारक हों उन के पास आलोचना के जाते तब वे उनके मुख में तीन वक्त यह दोष कहावे एक वक्त सुनकर कहे प्रमाद से स्मरण नहीं रहा फिर कहे, दूसरी वक्त कहे चित्त विग्रह से स्मरण नहीं रहा फिर कहे, यों तीन वक्त एकमा ही दोष प्रकाना दे तब सपझे की यह आलोचक शुद्धि एकपटी है. तब यथा उचित आलोचना उसे देवे और जो वह कपट कर दोष छुपावे तीनों वक्त अन्य २ प्रकार कहे तब उसे प्रथम कपट का प्रायश्चित्त देवे फिर दोष की आलोचना देवे ॥ २ ॥ अब आशा व्यवहार करते हैं. दो गीतार्थ आचार्य जघा बल की क्षीणता से अलग २ देशांतर में रहे. उम में से एक आचार्य को आलोचना करने का अवसर प्राप्त हुआ परंतु दूसरे आचार्य के पास जाने को अशक्त हो अपना दोष





र्द्वार्यरूप धनाकर अपने पासके साधुको पढाकर उन दूसरे आचार्य के पास भेजे. वे दूसरे आचार्य गुढार्थ में  
 क्षेत्र काल भाव घृति बलादि विचार कर आपकी सुदकी जाने की शक्ति हो तो आप उन से जाकर  
 मिले और जाने की शक्ति न होतो उस शिष्य को पीछा गुढार्थ में प्रायशश्चत पढाकर पीछा भेजे, उसे  
 वे प्रश्न करे वह आज्ञा व्यवहार कहते हैं. कोईक आचार्य किसि शिष्य को किसि प्रकार के दोष की  
 आलाचनाही वह उस ने धारन कर रखी और अर्थार्थ के वियोग में दूसरेने उस ही प्रकार दोष लगाया.  
 उसे उस ही प्रकार प्रायशश्चत देवे, वह धारणा व्यवहार, तथा कोई वैयावच का करने वाला शिष्य है  
 वह समस्त छेद देने योग्य नहीं है अर्थान् प्रायशश्चत की विधी बतावे योग्य नहीं है तब उस को आचार्य  
 प्रमाद कर कितनेक प्रायशश्चत के पद का लघृत कर जपे कहे, वह उने मन में धार रखे प्रसंग में उस ही  
 दूसरे को आलोचना दे वह धारणा व्यवहार ॥ ४ ॥ अब जीति व्यवहार कहते है—जिस अपराध की  
 युद्धि प्रथम साधुओं बहुत तप करके करते थे उस ही अपराध को प्राप्त हुने सो प्रत काल में द्रव्य सेव  
 काल भाव विचार कर संघयन भृति वातादि की हानी जान कर यथा उचित योग्य तप का प्रायशश्चत  
 देवे समय का विचार करे, अथवा आचार्यों के गच्छ में आचार्य ने अलग २ प्र.यःश्चत देने की  
 विधी बंधी है. गनि में लिख रखी है, उस मुजब उन के सिष्यादि प्रायशश्चत दे सो जीत,चार ॥ ५ ॥  
 इन पाँचों व्यवहार में से जो इच्छा में आवे उस व्यवहार सहित गीतार्थ के पास प्र.यःश्चत  
 प्रश्न करे उस से वह सुद्ध हो सकता है. परंतु अगीतार्थ पास प्रायशश्चत लिये शुद्ध



साणकरे ॥ १ ॥ चत्वारि पुरिस जाया पणत्ता तंजहा-गणट्टकरे णाममेगे नो  
 साणकरे, साणकरे णाममेगे णो गणट्टकरे, एगे गणट्टकरेवि साणकरेवि,  
 एगे णो गणट्टकरे णो साणकरे ॥ १० ॥ चत्वारि पुरिस जाया पणत्ता तंजहा-  
 गणसंगहकरे णाममेगे णो साणकरे, साणकरे णाममेगे णो गणसंगहकरे, एगे  
 गणसंगहकरेवि साणकरेवि, एगे णो गणसंगहकरे णो साणकरे ॥ ११ ॥ चत्वारि

नहीं होता है) अब गच्छ नायक की चौभंगी कहते हैं चार प्रकार के पुरुष जात कहे हैं,  
 (यहां पुरुष शब्द से साधु ग्रहण करना) तथ्या-१ एक उपकार तो करे किन्तु अभिमान नहीं करे, २  
 एक अभिमान करे परंतु उपकार भी करे और अभिमान भी करे, और एक  
 उपकार भी नहीं करे और अभिमान भी नहीं करे ॥ ९ ॥ चार प्रकार के पुरुष जात कहे हैं तथ्या १  
 एक सम्प्रदाय का कार्य करे परंतु अभिमान नहीं करे, २ एक अभिमान करे परंतु कार्य नहीं करे, ३  
 एक कार्य भी करे और अभिमान भी करे, और एक कार्य भी नहीं करे अभिमान भी नहीं करे ॥ १० ॥  
 चार प्रकार के पुरुष जात कहे-१ एक साधुओं का संग्रह करे परन्तु अभिमान नहीं करे, २ एक  
 अभिमान करे परंतु साधुओं का संग्रह नहीं करे, ३ एक समुदाय करे और अभिमान करे ४ एक  
 साधुओं का संग्रह भी नहीं करे और अभिमान भी नहीं करे ॥ ११ ॥ चार प्रकार के पुरुष जात कहे हैं

पुरिस जाया पणत्ता तंजहा गणसोभकरे णाम मेगे णो माणकरं, माणकरे णाममेगे  
 णो गणसोभकरं, एगेगणसोभ करेवि माणकरेवि, एगंणो गणसोभकरे णो माणकरे  
 ॥ १२ ॥ चत्तारि पुरिस जाया पणत्ता तंजहा गणसोहि करे णाममेगे नो माणकरे  
 माणकरेणाममेगे नो गणसोहिकरेवि माणकरेवि, एगेनो गणसोहिकरे नो माणकरे  
 ॥ १३ ॥ चत्तारि पुरिसा जाया पणत्ता तंजहा रुत्रेणामं एगे जहइ णो  
 धम्मं धम्मंणामेगे जहइ णो खवं, एगे ख्वेवि जहइ धम्मंपि जहइ,  
 एगे णो खवं जहइ णो धम्मं ॥ १४ ॥ चत्तारि पुरिस जाया पणत्ता तंजहा

तथ्या-१ एक समुदाय की शोभा करे, परंतु अभिमान नहीं करे, २ एक अभिमान करे परंतु समुदाय  
 की शोभा नहीं करे, ३ अभीमान भी करे और ४ एक शोभा भी नहीं करे ॥ १२ ॥ चार प्रकार के  
 पुरुष जात करे है. तथ्या-१ एक समुदाय की सुश्रुषा करते हैं परंतु मान नहीं करते हैं २  
 एक मान करते हैं परंतु सुश्रुषा नहीं करते हैं. एक समुदाय की सुश्रुषा भी करते हैं और  
 अभीमान करते हैं और एक सुश्रुषा भी नहीं करते हैं और अभीमान  
 भी नहीं करते हैं ॥ १३ ॥ चार प्रकार के पुरुष जात करे हैं. तथ्या-१ एक समुदाय

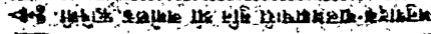
धम्मं णामेगे जहति की गणसंठियं णामेगे जहति णो धम्मं, एगे धम्मपि जहति  
गणसंठियपि, एगे नो धम्मं जहति नो गणसंठियं ॥ १६ ॥ चत्तारि पुरिस जाया

(मेष) को छोड़े, परंतु धर्म को नहीं छोड़े ( दश वा प्रायश्चित्ताधिकारि आदि ) ३ एक  
साधु के गुण को तो छोड़े परंतु साधु के रूप को नहीं छोड़े ( पमित्थादि ) ३ एक गुण भी नहीं छोड़े  
है का भी नहीं छोड़े ( उदाय साधु ) और एक रूप को भी छोड़े और गुणको भी छोड़े ( समसत्त्व  
संपप मृष्ट ) ॥ १६ ॥ चार प्रकार के पुरुष जात कहे, तथया—? एक साधुने जिनाज्ञा रूप धर्म को तो  
छोड़े परंतु गच्छ की मर्यादा की नहीं छोड़ी, जिस किसी सम्प्रदाय में मर्यादा है कि अपनी सम्प्रदाय  
के साधु सिवाय अन्य किसी को भी ज्ञान नहीं देना और अग्निश्वर की आज्ञा है कि जो ज्ञान ग्रहण  
करने योग्य देखे उनका ज्ञान जरूर देना उक्त गुण सम्पन्न होने पर साधु ज्ञान देने योग्य  
होते ही उनको ज्ञान नहीं दिया, यह तुनेने जिनाज्ञा रूप धर्म को तो भंग किया परंतु गच्छ मर्यादा का  
भंग नहीं किया, २ एकने धर्म का भंग नहीं किया परंतु गच्छ की मर्यादा का भंग कर दूमेर को ज्ञान  
दिया, ३ एकने पाखंडी मृष्टा चारी अविनीत को ज्ञानदे जिनाज्ञा का भी भंग किया और सम्प्रदाय  
की मर्यादा का भी भंग किया और एकने ज्ञानदेने के लिये पर क शिष्य को अपने बसाकर ज्ञान दिया  
जिस से जिनाज्ञा का भंग गच्छ मर्यादा का दोनों का पठन किया ॥ १६ ॥ चार प्रकार के पुरुष जात



उद्धेसणापरिष्, एगेउद्धेसणापरिष्त्रि, एग जो उद्धेसणापरिष् जो  
 वायणापरिष् ॥ १९ ॥ अम्मरियरस चचारि अंतेवासी पणसा-तजहा-पव्वाणंतेवासी  
 नाममेगे जो उवट्टावणंतेवासी, उवट्टावणंतेवासी नाममेगे जो पव्वावणंतेवासी, एगे  
 पव्वावणंतेवासीवि उवट्टावणंतेवासीवि, एगे नो पव्वावणंतेवासी नो उवट्टावण-  
 तेवासी ॥ २० ॥ चचारि अंतेवासी पणसा-तजहा-उद्धेसणंतेवासी नाम एगे नो  
 वायणंतेवासी, वायणंतेवासी नाम एगे नो उद्धेसणंतेवासी, एगे उद्धेसणंतेवासीवि  
 वायणंतेवासीवि, एगे जो उद्धेसणंतेवासी नो वायणंतेवासी चचारिअम्मरियरिया

और ४ एक नो उपदेसदाता है और न वाचना दाता है ॥ १९ ॥ पारप्रकार के अन्तेवासी शिष्य को  
 तथा-१ एक को दीक्षा देकर शिष्य बनाया परंतु महाप्रतारोपण करके नहीं बनाया, २ एक को महा  
 प्रतारोपण कर शिष्य बनाया परंतु दीक्षा-देकर शिष्य नहीं बनाया, ३ एक को दीक्षा देकर और महा  
 प्रतारोपण दोनों प्रकार शिष्य बनाया और ४ एक को नतो दीक्षाही और स महाप्रतारोपण किये ऐसेही  
 शिष्य बनालिखा ॥ २० ॥ पर्यावर्य के चार प्रकार के अन्तवासा ( शिष्य ) कहे हैं, तथा-१ एक  
 उपदेसस अन्तेवासी हुआ है परंतु वाचना देकर नहीं, २ एक वाचना देकर अन्तेवासी हुआ है परंतु  
 उपदेसस नहीं, ३ एक उपदेस और वाचना दोनों से अन्तेवासी हुआ और ४ एक  
 उपदेस और वाचना दोनों दिष्य विना ही अन्तेवासी बन गया है जो प्रकाश



पणसा, तंजहा-पव्वावणधम्मायरिया नाममेगे नो उवट्टावणधम्मायरिए उवट्टावणा  
 धम्मायरिए नाममेगे नो पव्वावणधम्मायरिए एगेपव्वावणधम्मायरिएवि उवट्टावणा  
 धम्मायरिएवि एगे नो पव्वावणायरिए नो उवट्टावणा धम्मायरिए चत्तारि धम्मायरिया  
 पणसा तंजहा-उहेसणाधम्मायरिए नाममेगे ना वायणाधम्मायरिए वायणाधम्मायरिए  
 णाममेगे नो उहेसणाधम्मायरिए एगे उहेसणाधम्मायरिए विवायणाधम्मायरिएवि एगे नो  
 उहेसणा धम्मायरिएवि नो वायणाधम्मायरिए चत्तारिधम्मेत्वासी पणखसा तंजहा-पव्वावण  
 धम्मेत्वासी नाममेगे नो उवट्टावण धम्मेत्वासी उवट्टावण धम्मेत्वासी नाममेगे नो  
 पव्वावणधम्मेत्वासी एगे पव्वावणधम्मेत्वासीवि उवट्टावणधम्मेत्वासीवि एगे नो

के धर्माचार्य के है, तथथा-१ एक दीक्षा देने वाले धर्माचार्य है परंतु महाव्रतारोपन करे  
 वाले नहीं, २ एक महाव्रतारोपन करने वाले धर्माचार्य है परंतु दीक्षा देने वाले नहीं, एक दीक्षा देने वाले  
 भी है और महाव्रतारोपण करने वाले भी हैं, और एक नता दीक्षा देने वाले हैं और न महाव्रतारोपण  
 कराने वाले हैं ॥ १३ ॥ चार प्रकार के धर्माचार्य कहे हैं, तथथा-१ एक उपदेश दाना धर्माचार्य है परंतु  
 वाचना दाता नहीं, २ एक वाचना दाना धर्माचार्य है परंतु उपदेश दाता नहीं, एक उपदेश दाता भी है  
 और वाचना दाता भी है, और ४ एक उपदेश दाता भी नहीं है और वाचना दाना भी नहीं है ॥ १४ ॥  
 चार धर्म अग्नेवासी ( धर्म शिष्य ) कहे तथथा-१ एक दीक्षा देने वाले शिष्य हुआ है परंतु महाव्रतारोपन  
 करती, २ एक महाव्रतारोपण करने वाला शिष्य हुआ है परंतु दीक्षा देने वाला नहीं, ३ एक दीक्षा देने



पठवायणधर्मतेवासी नो उवट्टुवणधर्मतेवासी चत्वारिधर्मतेवासी उद्दमणधर्मते-  
नाममेणे णो वायणाधर्मतेवासी वायणाधर्मतेवासी नाममेणे नो उद्दमणधर्मतेवासी  
एणे उद्दमणा धर्मतेवासी नो वायणाधर्मतेवासी एणे नो उद्दमणा  
धर्मतेवासी नो वायणाधर्मतेवासी ॥ २१ ॥ तआ धर, मूमीआ  
पणत्ताआतेजहा-जाइ थरे, सुय थरे, पवजा थरे सट्टुवासजायए समण-णिग्गथे जाइ थरे,  
ट्टाणसमत्रायथरे समणे णिग्गथे सुय थरे वसिवास परियाए समणे निग्गथे  
परियाय थरे ॥ २२ ॥ तआ तेहमूमीआ पणत्ताआ, तेजहा सत्तराइदिया, चउमासिया,

स और महायतारोपण करने से दोनों प्रकार से धर्म शिष्य हुआ है और ४ एक नतो दीक्षा देने से और  
न महायतारोपण करने में परंतु योही धर्म शिष्य बन गया है ॥ १६ ॥ चार प्रकार के धर्म अंतेवासी कहे हे  
तथा-१ एक उपदेश से धर्म शिष्य हुआ वाचना देने से नहीं; २ एक वाचना देने से धर्म शिष्य हुआ है  
परंतु उपदेश से नहीं; ३ एक उपदेश और वाचना दोनोंसे धर्म शिष्य हुआ है और ४ एक उपदेश वाचना  
दोनोंसे नहीं ॥ २२ ॥ अब स्थविर का अधिकार कहते हैं, तीन प्रकार के स्थविर कहे हैं, तथा-१ जाति स्थविर सूत्र स्थविर  
और २ दीक्ष स्थविर ॥ जिन साधु निर्ग्रन्थ की वः धर्म की वय होगइ होवे सा जाति स्थविर, २ जा साधु  
निग्रंथ स्थानांग मयवायोग के धारक होवे सो सूत्र स्थविर, और जिनको दीक्षा धारन किये धर्म बने  
हागये होवे सो दीक्षा स्थविर ॥ २२ ॥ तीन प्रकार की शिष्य की भूमिका कही है तथा-१ सातटिन की  
२ चार पाटिन की, और छ पाटिन की, दीक्षा लिये बाद छपहीने में महायतारोपण करे वर उरुहू भूम

छमासिया ॥ छम सिया उक्कोसिया, चउमासिया मञ्जु मिया, मत्तराईदिया जह-  
 1 न्नया ॥ २ ॥ ना कल्पति निगंथीणवा निगंथीणवा खुडगसवा खुडियाएवा उणट्टवास-  
 जायं उयंट्टवितए वा संभुजित्तएवा ॥ २४ ॥ कपति निगंथागवा निगंथीणवा  
 खुडूपसवा खुडियाएवा साइरेगट्टवातजायं उवट्टवित्तएवा संभुजित्तएवा ॥ २५ ॥ नो  
 कपति निगंथीणवा निगंथीणवा खुडगसवा खुडियाएवा अवंजणजायस्स आया  
 कप्पे नामज्जस्यणे उद्विमित्तएवा ॥ २६ ॥ कपति निगंथीणवा निगंथीणवा  
 खुडगसवा खुडियाएवा वंजणजाइस्स आयाकप्पे नामं अज्जस्यणे उद्विसित्तएवा

२ दीक्षा लिये शब्द चार माहने में महःत्रयाराधन करे वह पध्या शिष्य भूमि. और ३ दीक्षालिये वाद  
 सामो दिन महःत्रयाराधन करे वह जघन्य शिष्य भूमिको ॥ २३ ॥ प्रव वालक को दीक्षा देने अश्रिय  
 कहन है. माधु माधवो को आठ वर्ष से कम उमर वाल बच्चा माधु बच्ची मःधवी के भे । माहार पानो  
 करना नहीं कल्पता है ॥ २४ ॥ परंतु जिन की उमर अठ वर्ष से कुछ अधिक हो एमे बच्चे ऐसी बच्ची  
 माधवी के सामिक उमर माधु माधवियों को आहार पानी मागिल करना कल्पता है ॥ २५ ॥ माधु  
 माधवी को छोटे उमर वाले साधु साधवी जिन के कर्सादि के रोम पगट न हुवे हो ऐसे को आनांग  
 सूत्र पहाना नहीं कलाव है ॥ २६ ॥ परंतु जिस छोटी उमर वाले साधु साधवी को कक्षा गूळदि  
 के रोम पगट होय हा [ २७ वर्ष की उमर है गइ ] - उन का माच रंग सूत्र पहाना

॥ २७ ॥ तिवासपरियाए समणरस निगंथरस कपपति आधार कपे नाम अञ्जयणे  
 छहिसित्तएवा ॥ चउवास परिथाए समणणिगंथरस कपपति सुयगडगामं अंगउहि-  
 सित्तएवा ॥ पंचवास परिथायरस समणरस निगंथरस कपपति दसाकए चवहार  
 नाम अञ्जयणे छहिसित्तएवा ॥ अट्टवास परिथायरस समणरस निगंथरस कपपति

इत्यादि ॥ २७ ॥ १ तीन वर्ष की दीक्षा वाले साधु निग्रन्थ को आचारांग सूत्र पढ़ाना कल्पता है, २  
 चार वर्ष की दीक्षा वाले साधु को सुयगडांग सूत्र पढ़ाना कल्पता है, ३ पांच वर्ष की दीक्षा वाले साधु  
 को दशध्वजसूत्र, व्यवहार, वेदकल्प नामक सूत्र पढ़ाना कल्पता है, ४ आठ वर्ष की दीक्षा वाले  
 साधु निग्रन्थ को स्थानांग समवायांग सूत्र पढ़ाना कल्पता है, ५ दश वर्ष की दीक्षा वाले साधु को  
 त्रिवहयज्ञो ( भगवती ) सूत्र पढ़ाना कल्पता है, ६ द्वादश वर्ष की दीक्षा वाले साधु को- ( १ ) लघु-  
 रिमान विभक्ती, २ + महाविमान विभक्ती ( ३ ) अंग चूलिका ( ४ ) वेग शूलिका ( ५ ) विवाह

+ इन दोनों सूत्र का लिखा है इत्थं में प्रथम के तीन वर्ग-प्रथम वर्ग के ३७ उपदेशन कालाध्ययन, दूसरे वर्ग के ३८  
 उपदेशन काल अध्ययन, तीसरे वर्ग के ४० उपदेशन कालाध्ययन सब ११५ अथायथे, महाविमान विभक्ती के ५ अंग  
 जिस में-प्रथम वर्ग के ४१, दूसरे के ४२, तीसरे के ४३, चौथे के ४४ और पांचवें के ४५ उपदेशन काल अध्ययन  
 सब २१५ अध्ययन थे.

उाणसनवाए णामं अंगे उदिसित्तए ॥ दमवास परियागरस समणरस णिगंथरस  
 कप्यति त्रियहेनमं अंगे उदिसित्तए ॥ पुकारस वासपरियागरस समणरस निगं-  
 थरस कप्यति खुडियधिमाण. पविभती, महाक्षियात्रिमाण पविभती, अंगचूलिया  
 वेगचूलिया विवाह चूलिया णामं अज्झयणे उदिसित्तए ॥ वारस वास परियागरस  
 कप्यति समणरस निगंथरस अरुणांवावाए, गरुलोववाए, धरणाववाए, वेसमणांवावाए  
 वेलंधराववाए णामं अज्झयणे उदिसित्तए ॥ तेरसवास पारियागरस कप्यति समणरस  
 निगंथरस उट्टाणसुए समुट्टाणसुए देविदीववाए. नःगपरियावणिए नामं अज्झयणं  
 उदिसित्तए ॥ चउदसवास पारियागरस समणरस णिगंथरस कप्यति सुत्रिण

बुद्धि का यह सूत्र पढ़ना कल्पना है. ७ चारावर्ष की दीक्षा वाले साधु को-(१) अरुणें ववाइ, (२)  
 गरुलोववाइ (३) धरणोववाइ, (४) वैश्रवणोववाइ, (५) वेलंधरांवावाइ यह पांच सूत्र  
 पढ़ाना कल्पना है. ८ वेग वर्ष की दीक्षा वाले साधु को (१) उपस्थान सूत्र, (२)  
 मयास्थान सूत्र, (३) देविन्द्रांपपान सूत्र, (४) नाग परियावणिक सूत्र पढ़ना कल्पना  
 है. ९ चउदा वर्ष की दीक्षा वाले साधु को सम भवना नामक सूत्र पढ़ाना कल्पना है.  
 १० पुन्दरा वर्ष का दीक्षा वाले साधु को चरण भावना सूत्र पढ़ाना कल्पना है. ११ सोळा वर्ष की

नामंअज्ञगणे उदिसिचए ॥ पञ्चसवांसं परियागरप समणस्स णिगंथस्स कप्पति  
 चारणा मादणा गममञ्जयणे उदिसिचए ॥ सोलसवासपरियागरस समणस्स  
 निगंथस्स कप्पति वेयणीसंयं णामं अञ्जयणे उदिसिचए ॥ सत्तरस वासपरियागरस  
 समणस्स णिगंथस्स कप्पति आसीविसं भावणा णामंअञ्जयणे उदिसिचए ॥ अट्टारस  
 वास परियागरस समणस्स णिगंथस्स कप्पति दिट्ठिविसं भावणा णामं अंग उदिसिचए  
 ॥ एगुणत्रीसति वास परियागरस समणे निगंथे कप्पति दिट्ठिवाए णाम अंगे  
 उदिसिचए ॥ वीसवास परियागरस समणस्स णिगंथस्स कप्पति सत्रमयाणवादी  
 मवति ॥ २८ ॥ दसविहे वेयावच्चे पणसे तंजहा-आयरिय वेयावच्चे, उवञ्जाय

दीक्षा वाले साधु को वेदनी शतक सूत्र पढाना कल्पता है, १२ सतरा वर्ष की दीक्षा वाले साधु को  
 आशीविष भावना सूत्र पढाना कल्पता है, १३ अठाग वर्ष की दीक्षा वाले साधु को दृष्टिषि भावना  
 सूत्र पढाना कल्पता है, १४ गुलीम वर्ष की दीक्षा वाले साधु को दृष्टीनार न मक शरवा अध्यय पढाना  
 कल्पता है १५ और वीम वर्ष की दीक्षा वाले साधु को सत्र शास्त्रानुवाद भाव भेद सहित पढाना कल्पता  
 है ॥२८॥ दश प्रकार की वेयावच्च १ है, तयय—१ आचार्य की वेयावच्च करे, २ उपाध्याय की वेयावच्च

वेयावच, थेर वेयावच, तवस्ती वेयावच, सेह वेयावच, गिलाण वेयावच, माहस्मिय  
 वेयावच, कुलवेयावच, गणवेयावच, संघवेयावच, ॥ २९ ॥ आथरिय वेयावच  
 करेमाणे समणे निगंथे महाणिजरे महापज्जवसाणे भवति ॥ १ ॥ उवज्झाय वेयावच  
 करेमाणे समणे निगंथे महाणिजरे महापज्जवसाणे भवति ॥ थेर वेयावच करेमाणे

करे, १ स्थितिर की वेयावच करे, ४ तपस्वी की वेयावच करे, ५ नवदिसित शिल्प की वेयावच करे, ६  
 गिलानी-दृढावस्था कारण से अशक्त बने साधु की वेयावच करे, ७ कुल-एक गुरु के प्रकृत शिल्प ही  
 उन की परस्पर वेयावच करे ८ गण-सम्प्रदाय के साधु की वेयावच करे, ९ संघ-संघु-साधु की श्रावक  
 श्राविकां चतुर्विध संघ की यथा उचित वेयावच करे, १० स्वर्थाधिक-एक सत्त्विते शुद्धचार व न साधु  
 जो अन्य सम्प्रदाय के हेवे उनकी भी वेयावच करे, ॥ २९ ॥ आचार्य की वेयावच करने हुये साधु  
 निग्रन्थ महा कर्षो की निर्जरा करते हैं तथाध्याय की वेयावच करते हुये साधु निग्रन्थ महा  
 कर्षो की निर्जरा का लाभ प्राप्त करते हैं इस ही प्रकार उक्त दशोही की  
 वेयावच करते हुये साधु निग्रन्थ महाकर्षो की निर्जरा करते हैं महा धर्म रूप लाभकी प्राप्ति  
 करते हैं यह वेयावच इस प्रकार करे ? आहार लाने २ पानी  
 लाने, १ शय्यासंधारा विछाने, ४ बैठे वहां भासन विछाने ५ भ्रम उपाधि की पडि-अहना करवे



वैयावच्छे, धेर वैयावच्छे, तवरसी वैयावच्छे, सेहं वैयावच्छे, गिलण वैयावच्छे, साहस्मिय  
 वैयावच्छे, कुलवैयावच्छे, गणवैयावच्छे, संघवैयावच्छे, ॥ २९ ॥ आथरिथ वैयावच्छे  
 करेमाणे समणे निगंथे महाणिज्जरे महापज्जवसाणे भवति ॥ १ ॥ उवज्झाय वैयावच्छे  
 करेमाणे समणे निगंथे महानिज्जरं महापज्जवसाणे भवति ॥ धेरे वैयावच्छे करेमाणे

करे, १ स्थिर की वैयावच करे, ४ तपस्वी की वैयावच करे, ५ नवदक्षित शिष्य की वैयावच करे, ६  
 गिलानी-बुद्धावस्था कारन से अशक्त बने साधु की वैयावच करे, ७ कुल-एक गुरु के द्रुत शिष्य को  
 उन की परस्पर वैयावच करे ८ गण-सम्प्रदाय के साधु की वैयावच करे, ९ संघ-साधु-साक्षी श्रावक  
 श्राविका चतुर्विध संघ की यथा उचित वैयावच करे, १० स्वर्णभिक्ष-एक सत्त्विते शुद्ध-वार नर साधु  
 जो अन्य सम्प्रदाय के होवे उनकी भी वैयावच करे, ॥ २९-॥ आचार्य की वैयावच करने हुये साधु  
 निग्रन्थ महा-कर्मों की निर्जरा करत है तथाध्याय की वैयावच करते हुये साधु निग्रन्थ महा-  
 कर्मों की निर्जरा का लाभ प्राप्त करते हैं। इस ही प्रकार उक्त दशोही की  
 वैयावच करते हुये साधु निग्रन्थ महाकर्मों की निर्जरा करते हैं। महा-धर्म रूप लाभकी प्राप्ति  
 करते हैं। यह वैयावच इस प्रकार करे-  
 १ श्रेयसांधारा-विजोना विजोदे, ४ घेठे-वर्षा भासन-विजोदे ५ शंभु-उपि की पडि-देहना करदे  
 आदे, १ श्रेयसांधारा-विजोना विजोदे, ४ घेठे-वर्षा भासन-विजोदे ५ शंभु-उपि की पडि-देहना करदे



समणे निगंथे महापञ्चसाणे भवति तत्रसी वेयावच्चं करमाणे समणे  
 निगंथे महापञ्चसाणे भवति ॥ संह वेयावच्चं करमाणे समणे निगंथे  
 महापञ्चसाणे भवति ॥ गिलाण वेयावच्चं करमाणे समणे निगंथे  
 महापञ्चसाणे भवति ॥ साहस्मियवेयावच्चं करमाणे समणे निगंथे  
 महापञ्चसाणे भवति ॥ कुलवेयावच्चं करमाणे निगंथे महापञ्चसाणे  
 महापञ्चसाणे भवति ॥ गणवेयावच्चं करमाणे समणे निगंथे महापञ्चसाणे  
 महापञ्चसाणे भवति ॥

६ बहिर भवे तत्र पात्र पूजे, ७ आण्य उपचार लादे, ८ यके होवे तो हाथ पात्र दाब दे, ९ उनही  
 उपधि शास्त्र का वजन उठा ले, १० राजा आदि के उचसता से कष्ट में पड़े तो उन से बचावे, ११ रागादि  
 कारण से त्रिदा न आवे तो राक्षी को आप भी सावध रहें, १२ उच्चर ( बढी नीत ) परिठावे, १३  
 पत्रवण ( लघुनीत ) परिठावे, १४ श्लेष खेकरादि परिठावे, इन चउदे प्रकार में आचर्य की वैयावच  
 कर, ऐसे ही चउदा प्रकार से उपाध्याय की वैयावच कर. यों दशां ही की वैयावच १४ प्रकार में कर  
 सब १४० बौद्ध वैयावच के व्यवहार सूत्र की टीका में से ग्रहण किये हैं. और भी वैयावच का बहुत  
 अधिकार है. वैयावच महालाभ का कारण है ऐसा जान वैयावच करे इति व्यवहार सूत्र का  
 दूसरा उपाशा ॥ १० ॥ २४ ॥ पाथःश्रित का खुलासा—? भिन्नप्रकारेण भादरे ले, २ लघुपाथ

साणे भवति संघवेयात्राच्चं करेमाणे समेण निगंथ महाणिजरे महापञ्चसाणे भवति  
 ॥ ३० ॥ भिजेमि ॥ ववहारसूरस दससोउहेसो सम्मचो ॥ १० ॥ इति  
 विवहार सूयं सम्मत्तं ॥ २४ ॥

पुरीषंठ करे, १ गुरुवास, एकामना, ४ चर लघुवास-अवित्त. ५ चार गुरुवास-उपवास, ६ षट्पुपास-  
 वेला ७ षट्गुरु पास तला, और भी प्रकाशित-मिषमास २५ दिन का तप, छेद लघुमास २७॥ दिन का  
 तप, छेदगुरु मास ३० दिन का तप. छेद चार लघुमास १०५ दिन का तप, छेद चार गुरुमास १२०  
 दिन का तप, छेद षट्पु मास ११५ दिन का तप, छेद षट्गुरु मास १८० दिन का तप. उपघातिक लघु  
 मासःश्चित्त २७ दिन का तप, अनुघातिक गुरुमास ३० दिन का तप, छेद तथा मूल छेद छे पदिने के  
 उपरांत नहीं है, तथा उपवास १८० उपरांत नहीं है ॥ अ कूटी-जानकर परवश उपेच्छारि तथा देवतादि के  
 वस दोष लगारे तां मिथ्यातृकृत्य बयौकि परवशयथा. स्वयंकारणे अज्ञानपने अयंपंत कुमारजी दोष लगा  
 वे पुरीषंठ १. पांच प्रवाद के वस दोष लगारे तो पुरीषंठ ११ युल्लगुण उपरगुण का संकल्प से भेषका  
 १११ पुरीषंठ, अधिमान, वतरण कंदर्प सहित दोषका ११११ पुरीषंठ. इति संक्षेप मेमाःप्राध्वन विधि ॥  
 इति व्यवहार सूयं समाप्तम् ॥

96  
RUCHIKANAND BHARGAVAN SETHIA,  
JAIN-LIBRARY,  
BIKANER, RAJPUTANA.

श्री कृष्ण-राजावहादुर लाला मुखदेवसाहायजी श्वालाप्रसाद

\* इति चतुर्विंशतितम \*  
॥ व्यवहार सूत्र-समाप्तम् ॥

वीर संवत् २४४६ चैत्र शुदी ११ वार शुक्र

श्री कृष्ण-राजावहादुर लाला मुखदेवसाहायजी श्वालाप्रसाद





वीराब्द २४४२ ज्ञान पंचमी

इति

व्यवहार सूत्र

समाप्तम्



वीराब्द २४४६ विजयादशमी

शास्त्रोद्धार प्रारंभ

शास्त्रोद्धार समाप्ति

